" 'KAYANTAR' KAHANI SANGRAH MEIN STRI CHETANA KE SWAR"

A dissertation submitted during (year) 2018 to the University of Hyderabad in partial fulfillment of the award of M. Phil Degree in Hindi, School of Humanities.

By

CHANDRAKALA

16HHHL25

M.Phil. Hindi, 2018

Under the supervision of

Dr. J. ATMARAM

Department of Hindi, School of Humanities
University of Hyderabad
(P.O.) Central University, Gachibowli
Hyderabad – 500046.
TELANGANA

" 'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री-चेतना के स्वर"

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की एम. फिल. हिन्दी उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध)

शोधार्थी

चन्द्रकला

16HHHL25

एम.फिल. हिन्दी, वर्ष -2018

शोध- निर्देशक

डॉ. जे. आत्माराम

हिन्दी विभाग, मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हैदराबाद – 500046

तेलंगाना प्रदेश (भारत)

DECLARATION

I **CHANDRAKALA**, hereby declare that this dissertation entitle ***“*KAYANTAR’ KAHANI SANGRAH MEIN STRI CHETANA KE SWAR*” /“‘कायान्तर’ कहानी संग्रह में स्त्री-चेतना के स्वर”/*** submitted by me under the guidance and supervisor of **Dr. J. ATMARAM** is a bonafide research work which is also free from plagiarism. I also declare that it has not been submitted previously in part or in full to this University or any other University or Institution for the award of any degree or diploma. I hereby agree that my dissertation can be deposited in shodhganga/INFLIBNET

Date: Name: CHANDRAKALA

(Signature of the student)

Reg. No. 16HHHL25

CERTIFICATE

This is to certify that the dissertation entitled **"'KAYANTAR' KAHANI SANGRAH MEIN STRI CHETANA KE SWAR"** ***/"'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री-चेतना के स्वर"/*** submitted by **CHANDRAKALA** bearing Reg. No. **16HHHL25** in partial fulfillment of the requirements for the award of Master of philosophy in Hindi in a Bonafide work carried out by his under my supervision and guidance which is a plagiarism free dissertation.

As far as I know the dissertation has not been submitted previously in part or in full to this or any other University of Institution for the award of any degree or diploma.

Supervisor/s   Head of the Department   Dean of the School of Humanities

UNIVERSITY OF HYDERABAD
स विद्या या विमुक्तये

अनुक्रमणिका

विषयानुक्रमणिका

‘कायान्तर’ कहानी संग्रह में स्त्री चेतना के स्वर

भूमिका I - V

प्रथम अध्याय

जयश्री रॉय का व्यक्तित्व एवं कृतित्व 1-16

1.व्यक्तित्व

1.1.1जीवन परिचय

1.1.2 परिवार एवं शिक्षा

1.1.3 प्रेरणा

1.1.4 विचारधारा

1.1.5 सम्मान एवं पुरस्कार

1.2 कृतित्व

1.2.1 कहानी संग्रह

1.2.2 उपन्यास

1.2.3 कविता

द्वितीय अध्याय

स्त्री चेतना : संकल्पना और स्वरूप 17 – 40

2.1 चेतना का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

2.1.1 चेतना का अर्थ एवं परिभाषा

2.1.2 चेतना का स्वरूप

2.2 चेतना के प्रकार

2.2.1.1 सामाजिक चेतना
2.2.1.2 आर्थिक चेतना
2.2.1.3 राजनीतिक चेतना
2.2.1.4 साँस्कृतिक चेतना
2.2.1.5 धार्मिक चेतना
2.2.1.6 दार्शनिक चेतना
2.2.1.7 नैतिक चेतना
2.2.1.8 स्त्री चेतना
2.2.1.9 राष्ट्रीय चेतना
2.3 स्त्री चेतना का अर्थ एवं स्वरूप
2.4 स्त्री चेतना के विविध संदर्भ
2.4.1 सामाजिक चेतना का संदर्भ
2.4.2 राजनीतिक चेतना का संदर्भ
2.4.3 प्रशासनिक चेतना का संदर्भ
2.4.4 धार्मिक चेतना का संदर्भ
2.4.5 साहित्यिक चेतना का संदर्भ

तृतीय अध्याय

जयश्री रॉय के 'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री चेतना के स्वर 41 -104

3.1 परंपरागत विवाह प्रथा और स्त्री चेतना

3.2 दहेज प्रथा

3.3 बलात्कार के विरुद्ध स्त्री सोच में परिवर्तन

3.4 पर्दा प्रथा का विरोध

3.5 वैधव्य और श्रृंगार के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन

3.6 रंग भेद से प्रभावित स्त्री और उसके विरुद्ध विद्रोह की भावना

3.7 स्त्री की शिक्षा प्राप्ति के प्रति जागरूकता

3.8 पाश्चात्य संस्कृति का भारतीय स्त्री जीवन पर प्रभाव

3.8.1 लिव इन रिलेशनशिप और भारतीय स्त्री

3.8.2 खान-पान एवं वेशभूषा

3.9 बाजारीकरण का स्त्री पर प्रभाव

3.10 बाँझपन के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन

3.11 अधिकारों के प्रति सचेत स्त्री

3.12 पुरुषों के दोहरे आचरण से सचेत स्त्री

3.13 आर्थिक चेतना सम्पन्न स्त्री

3.14 ममत्व की शाक्ति

चतुर्थ अध्याय

समकालीन महिला कहानीकार और जय श्री राय **105 -139**

4.1. समकालीन महिला कहानीकार

4.1.1. कृष्णा सोबती

4.1.2. मेहरुन्निसा परवेज

4.1.3. मन्नू भंडारी

4.1.4. उषा प्रियंवदा

4.1.5. राजी सेठ

4.1.6. ममता कालिया

4.1.7. दीप्ति खण्डेलवाल

4.1.8. नासिरा शर्मा

4.1.9.चित्रा मुद्गल

4.2. समकालीन महिला कहानीकारों में जयश्री रॉय का स्थान

उपसंहार **140 -151**

संदर्भ ग्रन्थ सूची **152 -154**

भूमिका

भूमिका

सृष्टि के निर्माण संचालन में स्त्री की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। स्त्री के बिना मानव समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मानव जाति की सभ्यता व संस्कृति के विकास का मूल आधार स्त्री है। स्त्री सृष्टि की निर्माण धात्री एवं संचालक होने के बावजूद भी सदियों से शोषण का शिकार होती आयी है, किन्तु कभी किसी ने स्त्री की दयनीय स्थिति पर गहन तथा व्यापक विचार-विमर्श का वातावरण नहीं बनाया। ऐसे में हिंदी साहित्य में नारी जागृति की आवाज व्यापक धरातल पर उठने लगी। हिंदी कथाकरों के रूप में लेखिकाओं की संख्या धीरे-धीरे बढ़ने लगी है। जिन्होंने बदलते सन्दर्भ में बदलती हुई स्त्री की मानसिकता तथा उनकी समस्यओं को केन्द्र में रखकर अपने साहित्य-संसार का सृजन किया। कृष्णा सोबती, मन्नू भंडारी एवं उषा प्रियंवदा ने पहली बार स्त्री को स्त्री की नजर से देखा और उनकी समस्याओं, वेदनाओं और मुक्ति के लिए तड़प को सबके सामने उकेरा। स्त्री अब साहित्य जगत के केन्द्र बिंदु के रूप में उभरने लगी थी। लेखिकाओं ने अपने-अपने ढंग से स्त्री जीवन की विविध समस्याओं को अपनी कलाकृतियों एवं रचनाओं में उकेरा।

इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए जयश्री रॉय ने 2010 से कथा लेखन में अपना योगदान देना शुरू किया। इन्होंने अपने कथा साहित्य में स्त्री चेतना व नारी जागृति को एक नई दिशा प्रदान की। जयश्री रॉय को बचपन से ही साहित्य में बहुत रुचि थी। इन्होंने 2010 से कहानियाँ लिखना आरम्भ किया, जब वह ब्रेस्ट केंसर जैसी गंभीर बीमारी से जीवन और मृत्यु के बीच जूझ रही थी। इन्होंने अपनी पहली कहानी 'मुबारक पहला कदम' 2010 में अस्पताल के बिस्तर पर ही

लिखी। इन्होंने कुछ समय के लिए अध्यापन का कार्य भी किया। लेकिन लेखन कार्य के लिए पूर्ण समय प्राप्त न होने के कारण इन्होंने अध्यापन का कार्य त्याग दिया। जयश्री रॉय चुप रह कर अन्याय का साथ नहीं देना चाहती थी इसलिए इन्होंने कलम को अपनी आवाज प्रदान की। जयश्री रॉय ने अलग-अलग विषयों पर अपनी कलम चलाई है फिर भी उनके साहित्य का केन्द्र बिंदु स्त्री ही रही है। शायद इसलिए कि वह स्वंय भी स्त्री रही है इसलिए स्त्री मन की पीड़ा को वह गहराई से समझ सकती है। इनके साहित्य में स्त्री स्वतन्त्रता व समनाधिकारों की आकांक्षा से युक्त है, मुक्ति के लिए छटपटाती हुई, वह अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए एक नई दृष्टि पैदा करने की संवेदनाशीलता का आग्रह करती है। जयश्री रॉय स्त्री को कोई खिलौना या वस्तु नहीं मानती, जिसे जब चाहा खेला और उपयोग समाप्त होने पर फेंक दिया। स्त्री भी मनुष्य है उसके अन्दर भी भावनाएँ जागृत होती हैं, उसकी भी इच्छाएँ होती है जिसे वह पूर्ण करना चाहती है। उसे भी स्वतन्त्रता चाहिए अपनी बात रखने के लिए और मांग करने के लिए। जयश्री रॉय की स्त्री परिवार में रहते हुए भी अकेलेपन की पीड़ा से ग्रस्त है इसलिए इनकी केंद्रीय चिंता अकेली स्त्री का दुःख है। जयश्री रॉय की स्त्री पारिवारिकता की सीमाओं को पार कर सामाजिकता के रूढिंयो से बाहर निकल अपनी पहचान पाना चाहती है। 'कायान्तर' जयश्री रॉय का स्त्री चेतना जागृत करने वाला कहानी संग्रह है।

जयश्री रॉय अपनी रचनाओं के माध्यम से स्त्रियों में नई चेतना व नई दृष्टि पैदा करने का भरसक प्रयत्न करती रही है। इसलिए मैंने हैदराबाद विश्विद्यालय में एम् फिल शोध कार्य करने के लिए जयश्री रॉय के " 'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री चेतना के स्वर" विषय को चुना है। मेरे शोध निर्देशक डॉ.जे. आत्माराम जी ने

मुझे इस विषय पर शोध-कार्य करने के लिए प्रेरित किया। जिन्होंने मेरे शोध-प्रबंध के विषय चयन से लेकर उसे अंतिम रूप देने तक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

अध्ययन की सुविधा के अनुसार लघु शोध-प्रबंध 'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री चेतना के स्वर को चार अध्यायों में विभाजित किया गया है। जिसमें प्रथम अध्याय 'जयश्री रॉय का व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व ' में उनके जन्म, परिवार एवं शिक्षा पर प्रकाश डालते हुए जयश्री रॉय के साहित्य लेखन के प्रेरणा स्त्रोत, विचारधारा एवं सम्मान व पुरुस्कारों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। साथ ही उनके कृतित्त्व में उनके समग्र लेखन का संक्षिप्त परिचय देते हुए उनकी बहु आयामी प्रतिभा के साथ उनकी स्त्री विषयक चिंतन को प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय 'स्त्री चेतना: संकल्पना और स्वरूप' के अंतर्गत सर्वप्रथम चेतना का अर्थ, परिभाषा, स्वरूप एवं चेतना के प्रकारों का संक्षिप्त परिचय देते हुए स्त्री चेतना का अर्थ एवं स्वरूप के साथ स्त्री चेतना के विभिन्न संदर्भों का संक्षिप्त अध्ययन किया गया है।

तृतीय अध्याय 'कायान्तर में स्त्री चेतना के स्वर' के अंतर्गत उन महत्वपूर्ण विभिन्न उदाहरणों एवं बिन्दुओं को प्रस्तुत किया है। जो 'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री चेतना का बोध कराती है। जैसे स्त्री विषयक परम्परागत विवाह प्रथा और स्त्री चेतना, दहेज़ प्रथा, बलात्कार के विरूद्ध स्त्री सोच में परिवर्तन, पर्दा प्रथा का विरोध, वैधव्य और श्रृंगार के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन, रंग भेद से प्रभावित स्त्री और उसके विरूद्ध विद्रोह की भवना, स्त्री का शिक्षा प्राप्ति के प्रति जागरुकता, पाश्चात्य संस्कृति का भारतीय स्त्री जीवन पर प्रभाव के अंतर्गत लिव-इन-रिलेशनसिप, खान-पान एवं वेशभूषा, बाजारीकारण का स्त्री पर प्रभाव, बाँझपन

के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन, अधिकारों के प्रति सचेत नारी, पुरुषों के दोहरे आचरण से सचेत नारी, आर्थिक चेतना सम्पन्न स्त्री और ममत्त्व की शक्ति। उपरोक्त उदाहरण 'कायान्तर' कहानी संग्रह के स्त्री पात्रों में स्त्री चेतना का बोध कराती है।

चतुर्थ अध्याय 'समकालीन महिला कहानीकार और जयश्री रॉय' के अंतर्गत प्रमुख समकालीन महिला कहानीकारों जिनमें कृष्णा सोबती, मेहरुन्निसा परवेज, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, राजी सेठ, ममता कालिया, दीप्ति खंडेलवाल, नासिरा शर्मा, आदि के साहित्य लेखन पर संक्षिप्त रूप से चर्चा करते हुए इन समकालीन महिला कहानीकारों के साथ-साथ जयश्री रॉय के बारे में भी चर्चा प्रस्तुत की गयी है। प्रस्तुत शोध विषय मैंने अपनी रुचि से 'कायान्तर' कहानी संग्रह में सूक्ष्म से सूक्ष्म स्त्री चेतना सम्बन्धी बिन्दुओं को प्रकट करने हेतु लिया है जिस में विभिन्न कहानियों के माध्यम से स्त्री समस्याओं का चित्रण करते हुए स्त्रीयों में अपने आत्मसम्मान व अस्मिता की प्राप्ति के लिए चेतना जागृत करने का प्रयास किया गया है।

मैं आभारी हूँ मेरे शोध निर्देशक परम सम्मानीय डॉ.जे. आत्माराम जी का जिन्होंने समय-समय पर मेरा मार्ग दर्शन किया, मेरा मनोबल बढाया और अच्छे से अच्छा लिखने के लिए प्रेरित किया। मैं मुख्य रूप लेखिका जयश्री रॉय का भी हृदय से धन्यवाद करती हूँ, जिन्होंने मुझे शोध कार्य में सामग्री एकत्रित करने में सबसे अधिक सहयोग प्रदान किया। जिनके सहयोग के बिना मेरा लघु शोध कार्य संभव नहीं था। मैं विभाग के सभी गुरुजनों का आभार व्यक्त करना चाहुंगी जिन्होंने मुझे शोध योग्य समझा और समुचित अवसर प्रदान किया। मैं अपनी माँ गणशीबाई और पिता बी.दशरथ के प्रति भी कृतज्ञ हूँ साथ ही मैं अपने पति आर.सुरेश के प्रति भी कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे इस लायक समझा और हैदराबाद

विश्वविद्यालय में अध्ययन की अनुमति प्रदान की तथा मेरी हर कठिनाई में मेरा साथ दिया। मैं विशेष रूप से आभारी हूँ अपने बड़े भैय्या बी.रविंदर और उनके सहपाठी पिराजी का जिन्होंने कदम-कदम पर मेरा साथ दिया और मुझे संबल प्रदान किया। मैं आभारी हूँ डॉ.आर.तारासिंह, बहन भारती, शशि रेखा, नागेन्द्र, मोतीलाल, बी.तारासिंह और मेरे सहपाठियों का जिन्होंने मुझे हमेशा प्रोत्साहित किया है- हनुमन्त स्वाति, वंदना, दीपिका, सुरेश, आंनद, प्रदीप और बाकी सभी सहपाठी। इन सहपाठियों ने समय-समय पर मुझे प्रोत्साहित करने के साथ-साथ मुश्किल समय में मेरा साथ देते हुए मेरा मार्गदर्शन किया। मैं पुनःसभी को धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ।

चन्द्रकला

प्रथम अध्याय

प्रथम अध्याय

जयश्री रॉय का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1.व्यक्तित्व

1.1.1 जीवन परिचय

1.1.2 परिवार एवं शिक्षा

1.1.3 प्रेरणा

1.1.4 विचारधारा

1.1.5 सम्मान एवं पुरस्कार

1.2 कृतित्व

1.2.1 कहानी संग्रह

1.2.2 उपन्यास

1.2.3 कविता

प्रथम अध्याय

जयश्री रॉय का व्यक्तित्त्व एवं कृतित्त्व

1.व्यक्तित्त्व

1.1.1 जीवन परिचय

सघन संवेदनात्मक और चुनौतीपूर्ण कथा विन्यास के कारण समकालीन कथा साहित्य में सहज ही ध्यान खींचने वाली युवा कथाकार जयश्री रॉय का जन्म 18 मई 1966 को तत्कालीन बिहार (अब झारखंड) के हजारीबाग में एक मध्यवर्गीय परिवार में हुआ। पिताजी रविन्द्रचंद्र रॉय को साहित्य पढ़ने का बहुत शौक था। वे उच्च शिक्षित थे। माताजी नारायणी रॉय की शादी छोटी उम्र में ही हो जाने के कारण अधिक पढ़ी-लिखी नहीं थी।

जयश्री रॉय के पिताजी अक्सर अपने बच्चों को बंगला व अंग्रेजी साहित्य की पुस्तकें पढ़कर सुनाया करते थे तथा साथ में उन्हें विभिन्न प्रकार की कहानियाँ भी सुनाया करते थे। जब भी उन्हें समय मिलता वे किताबों में गुम हो जाया करते थे। बचपन से ही साहित्यपूर्ण वातावरण होने के कारण जयश्री रॉय को कहानी सुनने व लिखने में बहुत रुचि उत्पन्न हो गयी थी। इसलिए पाँचवी कक्षा तक आते-आते इन्होंने शरत, बंकिम जैसे गंभीर साहित्यकारों को पढ़ लिया था।

1.1.2 परिवार एवं शिक्षा

जयश्री रॉय के पिताजी व्यापार तथा राजनीति से संबंधित होने के कारण इन्हें बहुत बार एक जगह से दूसरी जगह अपने परिवार के साथ जाना पड़ा जैसे बिहार में

राँची, बुकारो, नेकलस गंज आदि। कई बार तो बहुत छोटी-छोटी जगहों पर भी इनके परिवार को रहना पड़ा। जिसके कारण बीच-बीच में कई बार जयश्री रॉय की पढ़ाई छूटती गई। फिर भी जयश्री रॉय बचपन से ही पढ़ने में बहुत होशियार थी। बंगाली होने के बावजूद बचपन से ही उनका झुकाव हिंदी के प्रति अधिक रहा है। इन्होंने आठवीं कक्षा तक की शिक्षा बिहार में प्राप्त की। बारहवीं, बी. ए. तथा एम. ए. की शिक्षा इन्होंने गोवा में प्राप्त की जिसमें इन्होंने राज्य स्तर पर टॉप भी किया। बी. ए. फाइनल में इनके विषय पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन तथा पॉलिटिकल साइंस थे। फिर भी वह प्रथम कक्षा से लेकर एम. ए. तक वे हिन्दी में सर्वाधिक अंक प्राप्त करती थी। जबकि उनकी अधिकतर पढ़ाई-लिखाई अंग्रेजी भाषा में हुई। गोवा विश्वविद्यालय से इन्होंने हिन्दी साहित्य में स्वर्ण पदक के साथ स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। जब कॉलेज जॉइन किया तब से 2010 तक काफी लम्बे समय तक इनका लिखना बिल्कुल ही छूट गया था। 2010 से इन्होंने लिखना आरंभ किया और जो अभी भी वह स्वतंत्र रूप से लेखन का कार्य कर रही है। हालाँकी कुछ वर्षों तक इन्होंने अध्यापन का कार्य भी किया था परंतु लेखन के लिए समय की कमी के कारण कॉलेज में पढ़ाने का कार्य बंद कर दिया। अब वह केवल पूर्णकालिक स्वतंत्र लेखिका है।

1.1.3 प्रेरणा

जयश्री रॉय का पारिवारिक परिवेश साहित्यिक होने के कारण बचपन से ही उनकी रुचि लिखने व पढ़ने में थी। प्राय: बच्चे जिस उम्र में गुड्डे-गुड्डियों का घर सजाते हैं, उस उम्र में इन्होंने शब्दों का घर राजप्रसाद खड़ा कर लिया था। पाँचवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते इन्होंने बहुत से गंभीर साहित्यकारों को पढ़ लिया था। जयश्री रॉय स्कूल के दिनों में थोड़ा बहुत लिखती थी जो छपने भी लगा था तथा उनके लेखन को बहुत पसंद भी किया जा रहा था। तभी बीच में उनका लेखन पच्चीस सालों तक छूट गया था। तब वे अपनी जिंदगी के उतार-चढ़ाव में बुरी तरह से उलझ गयी थी। इन्होंने अपनी जिंदगी में

दुःखों को अधिक महसूस किया मगर 2008 में अचानक कुछ ऐसा हुआ कि उनकी चुप्पी टूटकर रह गयी। जयश्री रॉय को ब्रेस्ट कैंसर हो गया था। ऐसी भयावह स्थिति में भी वह अपने दर्द में खोना नहीं चाहती थी, वह अपने दर्द को जीना चाहती थी। वह अपने मन की बातों को एवं अनुभवों को मन में ही दबाकर नहीं रखना चाहती थी। वह अपने मन के बोझ को हल्का करना चाहती थी इसीलिए उन्होंने फिर एकबार कलम उठायी और अपने मन की बातों की जुबान दी। उन्होंने अपनी पहली कहानी 2010 में इतने वर्षों के बाद अस्पताल के बेड़ पर लिखी थी। जब वह एक भयावह दर्द से गुजर रही थी तब इन्होंने अपनी सिसकियों को कलम के साथ जोड़कर जिंदगी की गहराइयों को शब्दबद्ध करना चाहा, जिसमें वह काफी हद तक सफल रहीं। वह जिंदगी जीना चहती थी, वह मुसिबतों से भागना नहीं चाहती थी बल्कि लिखना चाहती थी। लेखन उनके जीने की एक कोशिश है कोई शौक या हॉबी नहीं। इसलिए वह कहती है कि लेखन 'मेरे जीवन का मकसद नहीं बल्कि जीवन ही है'। उनकी कहानियों का विषय भी जीवन ही है और यह उनकी एकमात्र प्रेरणा भी है वह कहती है कि अपनी संवेदनशील प्रकृति और आस-पास के महौल में व्याप्त अन्याय-अत्याचार ने ही वस्तुतः मुझे लिखने के लिए मजबूर किया है। जीवन में घटित घटनाओं से अधिक रोचक दूसरे विषय नहीं हो सकते। जीवन सत्य है। इसलिए समाज में फैले अन्याय को वह चुपचाप नहीं देख सकती थी इसलिए वह कलम के माध्यम से आवाज उठाने का प्रयत्न करती रही है।

1.1.4 विचारधारा

प्रत्येक रचनाकार की कोई न कोई विचारधारा अवश्य होती है। बिना विचारधारा के लेखन कार्य संभव नहीं है। विचारधारा लेखन को समझाने में मदद करती है। लेखक पूरे श्रम, निष्ठा और ईमानदारी से लेखन करते हैं। न जाने कहाँ-कहाँ से इकठ्ठा किए गए जीवन के अनुभवों को पाठकों के लिए शब्दबद्ध करते हैं। जब पूरी दुनिया सोती है तब कथाकार

एक बेहतर कल के लिए, बेहतर सुबह का सपना सजाता हुआ जागता रहता है। वह इस समाज में फैले अत्याचारों, अन्याय, हिंसा, भ्रष्ठाचार, अधिकारों को छिनने वालों के विरोध में लिखने का भरसक प्रयत्न करता है वह अकेला अपनी कलम के बल पर सत्ताधारियों के विरुध्द खड़े होने का साहस करता है। इस संदर्भ में जयश्री रॉय कहती है "मैं लिखती हूँ क्योंकि मैं चुप रहकर किसी गुनाह का साथ नहीं देना चाहती बोलना चाहती हूँ, अपनी आपत्ती दर्ज करना चाहती हूँ, कहना चाहती हूँ, हर गलत के विरूद्ध 'आई ऑबजेक्ट' मेरा मानना है, कलम दुनिया की सबसे मजबूत हथियार है सबसे तेज है इसकी धार। विचारों का भार सबसे बड़ा भार होता है। एक नाजुक कलम जब उसे उठा लेती है तो फिर यह अकेली सबका सामना कर सकती है इसलिए मैंने इसे चुना है।"[1] अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। वह कहती है कि मैं दूसरों के बारे में नहीं जानती, मगर हाँ, मेरे अनुभवों का संसार कुछ ऐसा ही है- सुख-दुःख की मलिन, चटक धूप-छाव से भरी हुई। यहाँ जीवन का तीक्ष्ण दंश है तो उसका मुठ्ठीभर दुलार भी, विडम्बनाएँ ऐसी कि जैसे कांटों की उद्दंड हथेलियों में फूलों की नर्म प्रार्थनायें भर दी गयी हो।

जयश्री रॉय ने अलग-अलग विषयों को लेकर कहानियाँ लिखी है फिर भी उनकी कहानियों के केंद्र में नारी आ ही जाती है। स्त्री की विवशता, उसकी बंदीशे, अकेलापन, उसका शोषण आदि कहीं न कहीं से उनकी कहानियों में शामिल हो ही जाता है शायद इसलिए कि वह भी एक स्त्री है। इसीलिए वह स्त्रीयों के दर्द को गहराई से समझ सकती है। उनके अनुसार स्त्री कोई खिलौना नहीं जिसे जब चाहा खेला तथा बाद में उसे छोड़ दिया, वह कोई वस्तु नहीं जिसका उपयोग समाप्त होने पर उसको फेंक दिया जाए। वह भी मनुष्य है उसके अंदर भी भावनाएँ जागृत होती है, उसकी भी इच्छाएँ होती है, वह भी

---

[1] गौरतलब कहानी संग्रह-भूमिका से, पुनीत गौतम प्रकाशन-2017

सक्षम है पुरुष के साथ हाथ मिलाकर आगे बढ़ने को बस उसे मौका चाहिए। उसे भी स्वतंत्रता चाहिए अपनी बात रखने के लिए वह भी अपनी खुशियों को जीना चाहती है केवल घर-परिवार की मर्यादा, देवी आदि के नाम पर उसे बांध कर उसके अस्तित्व से उसे दूर रखना, जयश्री रॉय को मंजूर नहीं। केवल गाँव की स्त्रियाँ ही नहीं शहर की स्त्रियाँ भी समाज की रूढ़ि-परम्परओं तथा नियमों में बंधी हुई हैं। पुरुष की नीयत खराब होती है, पर रोका जाता है स्त्री को। झूठी परम्पराओं, रीवाजों, नीतियों तथा मान्यताओं के नीचे दब कर पुरुष कमजोर होता है परंतु स्त्री को कमजोर बोल-बोल कर उसके साहस को कमजोर बना दिया जाता है। स्त्री तन से कोमल होती है परंतु सारे संसार के दुःखों को अपने मन में समेट कर रखने की ताकत रखती है। अब स्त्री आजादी चाहती है। जयश्री रॉय के अनुसार कुछ बुरी सोच वाले सामंती पुरुष यहाँ स्वतंत्रता से मतलब सेक्स की स्वतंत्रता से लेते हैं, जो मेरा तात्पर्य नहीं है। यह स्त्री की मर्जी पर निर्भर करना चाहिए। देह के स्तर पर स्त्री का शायद सबसे अधिक शोषण किया जाता है। स्त्री का स्वयं अपने शरीर पर अधिकार नहीं है। स्त्री आजादी चाहती है सेक्स की आजादी, रूह की आजादी, विचारों की आजादी। वह चाहती है कि उसके साथ पशुवत व्यवहार न किया जाए। उसे उसकी मर्जी पूछी जाए, उसकी हाँ-ना का सम्मान हो, वह चुन सके, अपनी बात कह सके स्त्री अपने होने को महसूस करना चाहती है। जयश्री रॉय इन्हीं अधिकारों से वंचित स्त्रियों के बारे में अपनी कहानियों में लिखती हैं।

1.1.5 सम्मान एवं पुरुस्कार

जयश्री रॉय की कहानियाँ स्त्री जीवन के अनछुए अंतरंग और विराट अनुभवों का जीवंत दस्तावेज है। इनकी कहानियाँ स्त्री जीवन के यथार्थ की व्याख्या है। जयश्री रॉय को 2012 में उनके पहली कहानी संग्रह 'अनकही' के लिए सोनभद्र युवा कथा सम्मान से

सम्मानित किया गया तथा 'दर्दजा' उपन्यास के लिए स्पंदन कृति सम्मान से 2016 में सम्मानित किया गया। इनकी कहानियों का अंग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषायों में अनुवाद एवं प्रकाशन भी हुआ है। इनकी रचनाओं का प्रसारण समय-समय पर आकाशवाणी पर भी होता रहता है।

1.2 कृतित्त्व

अलग और चुनौतीपूर्ण भावभूमि की कहानियों के माध्यम से समकालिन कहानी जगत में सार्थक हस्तक्षेप कर युवा कथाकार जयश्री रॉय अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाने में सफल रही है। जयश्री रॉय ने अस्पताल के बेड़ पर 2010 से साहित्य लिखना प्रारंभ किया था तथा उन्हें इसके लिए काफी सराहना भी मिली है परंतु कॉलेज ज्वाइन करने के बाद वह अपने जीवन की गुत्थी में इस तरह से उलझी की वह साहित्य जगत एवं लिखने के कार्य से लगभग 25 सालों तक दूर हो गयी। 2010 में जब उन्होंने लिखना प्रारंभ किया तब से वह निरंतर बीना किसी अवरोध या प्रतिबंध के स्वतंत्र रूप से लिख रही हैं। उल्लेखनीय है कि उनकी सभी कृतियों का पाठकों ने हार्दिकस्वागत किया,विशेषकर उनकी कहानियों ने पाठकों पर अपना काफी प्रभाव छोड़ा है। जयश्री रॉय ने लिखने का कार्य किसी की वाह-वाही बटोरने या साहित्य जगत में अपना डंका बजाने या खुद को साबित करने के लिए नहीं किया। उन्होंने तो यह कार्य अपने मन के भावों को, जीवन के अनुभवों को व्यक्त करने के लिए किया। वह अपनी भावनाओं को, सोच को एवं अनुभूतियों को अपने अंदर छुपा कर नहीं रखना चाहती थी। वह समाज में व्याप्त अत्याचार, अन्याय को यूँही नहीं देख सकती वह अपनी कलम को उन लोगों की जुबान बनाना चाहती है जो सारी उम्र दूसरों के अत्याचारों के तले दबे रहकर मूक बने रहते हैं। जो अपना आक्रोश तो जाहिर करना चाहते हैं। पर वह मजबूर होते हैं। जयश्री रॉय कहती

है “लिखना मेरे लिए जरूरी ही नहीं अनिवार्य भी हो गया है। जब तक इन धधकती हुई जीवनानुभूतियों को अभिव्यक्ति के शब्द न दे दूं, इस मधुमय पीड़ा से मुक्ति नहीं। मुझे लिखना है उन सपनों की बातों को जो पलकों पर अनदेखे ही पड़े रह गये... जिन अभागों के प्रति इस संसार में किसी की जवाब देही नहीं बनती, उन्हें एक स्वर देना, मुक्ति का एक आकाश देना, या एक छोटी-सी सही उम्मीद देना ही वस्तुतः मेरी कलम का एकमात्र उद्देश्य है।”[2]

जयश्री रॉय जीवन को बहुत करीब से देखती है वह जीवन में आने वाले सुखों से ज्यादा दुःखों को अपना साथी समझती है शायद इसलिए कि उनके जीवन का अनुभव भी कुछ ऐसा ही रहा है। जयश्री रॉय ने कहानियों को अपने विचारों, अनुभवो, भावों को व्यक्त करने का माध्यम बनाया क्योंकि कहानी ही ऐसी विधा है जिसके माध्यम से कोई भी अपने अंर्तस्थित विचारों को आसानी से लोगों को समझा सकता है। कहानी ही ऐसी विधा है जिसके माध्यम से पहली बार स्त्रीयों की स्थितियों को उद्घाटित किया गया है।

1.2.1. जयश्री रॉय के कहानी संग्रह

जयश्री रॉय ने अपनी कहानियों में जीवन के सभी पक्षों को छूआ है तथा उनके विषयों में विविधता पाई जाती है। फिर भी उनकी कहानियों का केंद्र स्त्री ही रही है। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्रियों से संबंधित सभी पक्षों को बहुत ही कोमलता से उद्घाटित करने का कार्य किया है। उनके दर्द को, मर्म को, विवशता को, आँसुओं को, प्रताड़ना को, अकुलाहट को, दर्द के विरूद्ध संघर्ष को इस तरह से शब्दबद्ध किया है कि जिसे वे उनकी ही आपबीती हो। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ एक छोटे से गाँव, शहर,

---

[2] जयश्री रॉय- 'लिखना मेरे लिए जिने की एक कोशिश है'। लेख- मंतव्य पत्रिका 2012

अनपढ़, शिक्षित सभी क्षेत्रों से होती हैं। कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि उनका पात्र अपने वातावरण से अलग जाता दिखाई दे। 2010 में 'हंस' पत्रिका में उनकी पहली कहानी 'मुबारक पहला कदम' छपी। उनका यह पहला कदम लोगों के द्वारा सप्रेम स्वीकारा गया। उनका पहला कहानी संग्रह **'अनकही'** विषयों की विविधता के साथ स्त्री को केंद्र में रखता है। इनकी कहानियों की स्त्रियाँ घर-परिवार में रहती है, फिर भी वह अपने आपको अकेला महसूस करती है। जयश्री रॉय की केन्द्रीय चिंता अकेली स्त्री का दुःख है। आज स्त्रियाँ कहीं भी सुरक्षित नहीं है। वह अपने परिवार में भी शोषण तथा अत्याचार का शिकार होती है। इसका उदाहरण उनकी कहानी 'पापा मर चुके है' में मिलता है जिसमें पुरुषों के घिनौने चहरें से नकाब उतारा गया है। जिसमें पिता द्वारा बलात्कृत एक लड़की अपने परिवार में नरक के समान जीवन व्यतीत करते हुए सदैव मनोनुकूल पुरुष साथी की आस लगाए रखती है। वह अपने दर्द से मुक्ति पाना चाहती है, वह दर्द जो उसके पिता द्वारा दिया गया है उसकी आँखें सदैव इस आस में टकटकी लगाये है कि कोई तो पुरुष ऐसा होगा जो उसके दुःखों को दूर कर उसे समझेगा। पिता वेषधारी पुरुष द्वारा सताई संदल की जिंदगी में अरनव का शामिल होना, पूरे संग्रह का हासिल है। वहीं 'गुड़िया' कहानी, समाज में फैले लड़का-लड़की के भेदभाव का एक दर्दनाक कठोर परिणाम है। जो हमारे रोंगटे खड़े कर देता है। जिसमें किशोर होती एक लड़की अपने नवजात भाई की इसलिए मुँह दबाकर हत्या कर देती है कि उसमें उसे अपने हिस्से का सुख छीनने वाले पुरुष का चेहरा दिखाई देता है। एक लड़की के व्यवहार की यह क्रूरतम परिणती बेवजह नहीं है। इसके सूत्र हमारे सामाजिक आचार व्यवहार में आसानी से खोजे जा सकते हैं। 'अनकही' कहानी संग्रह की एक और महत्वपूर्ण कहानी 'पिंजरा' जिसमें सुजा अपने घर-परिवार में रहते हुए भी अकेलापन महसूस करती है। वह सदैव अपने पति की उपेक्षा का पात्र बनती आई है। सुजा

को अपने स्वाभिमान को प्राप्त कर इस उपेक्षित जीवन से मुक्ति पाना है। वह अपने आप को त्याग की देवी बनाकर अपनी इच्छाओं, आशाओं, भावनाओं का त्याग नहीं करना चाहती इसलिए वह एक दिन अपने घर के पिंजरे में बंद पंछी को आजाद कर स्वंय को भी उस पंछी के साथ अपनी मुक्ति के भाव से भर जाती है।

जयश्री रॉय की दृष्टि बहुत गहरी है जो स्वप्न और यथार्थ के बीच फैले फासले को बड़े ही स्पष्ट तरीके से प्रस्तुत कर जाती है। इसी संग्रह की कहानी 'शनिचरी' जिंदगी में पसरे स्वप्न और यथार्थ को निर्ममता से उघाड़ कर रख देती है। वही 'औरत जो नदी है' कहानी स्त्री-पुरुष मानसिकता और संवेदना की बुनियादी बनावट को बहुत बारीकी से दर्शाते हुए आत्मचेतना से उधिप्त एक ऐसी स्त्री से हमारा परिचय कराती है जिसके आगे आत्मप्रवंचना से स्लथ पुरुष अंततः आत्मस्वीकृतियों से भर जाता है। जयश्री रॉय मखमली कालीन के नीचे छुपा दी गयी दरारों को निर्ममता से उघाड़ती है। इस कहानी का एक सूत्र वाक्य है 'औरत महज एक योनि नहीं होती परंतु मर्द शायद अपादमस्तक एक लिंग ही होता है'। उसी तरह 'अभिनय' कहानी की नायिका अपने प्रेमी के छल के बाद अन्ततः वह पुरुषों के लिए मनोरंजन का साधन मात्र बनकर रह जाती है। इसमें स्त्री विद्रोह के बजाय अभिनय को अपना रास्ता बनाती है। 'अनकही' कहानी संग्रह की स्त्रियाँ उन स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है जो अपनी घर की दहलीज में बंद हो कर रह जाती है। उस पंछी की भांति जो पिंजरे में बंद रहकर खाने को सब कुछ पाता है परंतु अपनी आज़ादी नहीं।

'तुम्हें छू लूं जरा' कहानी संग्रह लेखिका ने गोवा की भूमि पर लिखा है इसलिए इनकी कहानियों में स्थानीयता व आँचलिकता का प्रभाव दिखाई देता है। इस संग्रह की महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं 'हमजमीन', 'सुनो तो', 'पुरवईया', 'आस्था' आदि इन में गोवा का

विशेष जीवन शैली को रेखांकित किया गया है। जयश्री रॉय सेक्स को मानव जीवन की आवश्यकता मानती है। परंतु पुरुष सेक्स को लेकर अलग विचार रखते हैं वह स्त्री के शरीर पर अपना एकाधिकार मानते हैं तथा स्त्रियों के शरीर के साथ जैसा चाहे वैसा खिलवाड़ करते हैं। इनकी 'एक रात' कहानी देह, सेक्स और प्रेम के अन्तर्संबंधों पर गहराई से विचार करते हुए सेक्स को एक बेहद खूबसूरत अनुभव मानती है जो देह से की गयी प्रार्थना है, ऐसी प्रार्थना जो दो शरीर, दो हथेलियाँ एक होकर एक ही उद्देश्य के लिए कार्य करते है। यह कहानी बिना संकोच और भय के बलात्कार के यंत्रणादायक यथार्थ से पर्दे तो हटाती ही है साथ में स्त्री मन की सहज और मानवोचित इच्छाओं-कामनाओं की भी स्पष्ट अभिव्यक्ति देती है। जहाँ एक स्त्री सेक्स के दौरान एक सेविका या दासी के रूप में प्रस्तुत रहना चाहती है। वहाँ पुरुष स्त्री को केवल भोग की वस्तु मान कर आत्म या शारिरिक तृप्ति पाना चाहता है। जयश्री रॉय सदियों से चली आ रही साहचर्य की उसी खोखली और पितृसत्तात्मक अवधारणा को चुनौती देती है।

लेखिका की 'साथ चलते हुए' कहानी दुःखों में भी सुख और प्रेम की तलाश की कहानी है। वही 'माँ' कहानी आज के ज़माने की युवापीढी की असलियत को दर्शाती है। जिसमें 'माँ' खुद को अपने बेटे और बहु के झगड़ो का कारण मानती है। माँ अपने बेटे के मन में छिपी ग्लानी और अपराधबोध को जानती है, पर वह चुप है। यह कहानी रिश्तों में पढ़ रही दरारों को भरने और परिवार को समटने की कोशिश है। अनकही व्यथा और संबंधों को बचाने के अनकहे अनुबंध के बीच रेत की तरह संबंधों के फिसलते जाने को यह कहानी जिस तरह रेखांकित करती है वह हमें भीतर तक विचलित कर देती है। रामेश्वरी देवी के बेटे साधन का विस्तार हम 'अपना पता' कहानी के 'मैं' में देख सकते है। जिसमें

बेटा अपनी जिम्मेदारियों को पूरा न करने के अपराधबोध से माँ की मृत्यु के बाद भी वह बराबर गाँव में स्थित अपने घर को आता जाता रहता है।

हमारे देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि आज भी हमारे देश में बेटियों को चंद पैसों के लिए बेच दिया जाता है, अनमेल विवाह किया जाता है। लड़कियों की मासूमियत, उसकी खुशियाँ, उसका बचपन कुछ कागज के टुकड़ों के बोज तले दब जाता है। फूलों को खिलने से पहले ही कुचल कर फेंक दिया जाता है। स्त्री समाज तथा घर परिवार की मर्यादा में बंद रह कर अपने अरमानों तथा ख्वाईशों का गला घोंट देती है तथा अपनी इन परिस्थितियों को ईश्वर की मर्जी मान लेती है। कुछ स्त्रियाँ इस छटपटाहट से बाहर निकलने का प्रयत्न करती है लेकिन वह केवल उनकी आस बनकर रह जाती है। ऐसी ही एक कहानी 'बेटी बेचवा' है जिसमें पिता द्वारा पैसों के खातिर अपनी बेटी का विवाह एक बूढ़े व्यक्ति के साथ करा दिया जाता है। यह कहानी ग्रामीण स्त्री जीवन की कारुणिक विडंबना को अनावृत करती है। जब लड़की अपने माँ-बाप पर पूर्ण विश्वास कर उनकी हर बात पर अपनी स्वीकृति देती है। तब ऐसी स्थिति में वही माँ-बाप अगर अपनी बेटी के मन का सौदा करते हैं तो लगता है मानो किसी ने पाँव के नीचे अंगार के शोले रख दिए हो। स्त्री उस अंगार पर सारी उम्र चलती है। इस आस में कि कभी तो वह इस दर्द से मुक्ति पाएगी पर उसे वह मुक्ति नहीं मिलती वही दूसरी ओर 'अपनी ओर लौटते हुए' कहानी की नायिका अपनी आजादी तथा सम्मान की रक्षा के लिए अपने पति का घर छोड़ कर अपनी शर्तो पर जीवन जीने के लिए निकल पड़ती है। वह अपने हिस्से की जमीन खुद तलाशना चाहती है वह परिवार के नाम पर अपने अस्तित्व तथा अस्मिता को नहीं खोना चाहती। जयश्री रॉय की कहानियों की स्त्रियाँ केवल रोना ही नहीं जानती, बल्कि वह अपने प्रति हो रहे अत्याचारों तथा अन्याय के विरूद्ध संघर्ष करना भी जानती है। उनकी कहानियाँ नारी में चेतना को उत्पन्न करती हैं, अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए।

जयश्री रॉय का तीसरा कहानी संग्रह **'खारा पानी'** 2012 में प्रकाशित हुआ। जो गोवा की लोकसंस्कृति, पर्यावरण, रहन-सहन वहाँ की सामाजिक, आर्थिक चुनौतियों को केंद्र में रख कर लिखी गई है। 'खारा पानी', 'समंदर बारिश और एक रात', 'सुनो तो पुरवईयाँ', 'आस्था' आदि कहानियाँ गोवा की धरती, हवा और पानी के कण-कण की प्रतीति कराती है।

'कायान्तर' इनका चौथा कहानी संग्रह है जो 2015 में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित हुआ है। उसमें 9 कहानियाँ हैं 'काँच के फूल', 'अपनी कैद', 'दर्दजा', 'कुहासा', 'काली-कलूटी', 'तुम आये तो', 'जून,जाफारान और चाँद की रात', 'थोड़ी-सी जमीं, थोड़ा आसमाँ' और 'कायान्तर'। अन्य तीन कहानी संग्रहों की भाँति इस कहानी संग्रह का केन्द्रीय विषय भी स्त्री जीवन के संघर्षों की अंर्तकथाएँ ही हैं, लेकिन ये अन्य कहानियों से भिन्न है। पहले की कहानियों की स्त्रियाँ अपने घर-परिवार तथा समाज की बंदिशों में बंद हो कर रहती थी। पर इस संग्रह की स्त्री पारिवारिकता की सीमाओं और सामाजिकता के रूढ़ीयों से बाहर निकल कर अपनी पहचान पाना चाहती है। लेखिका के इस संग्रह में आधुनिक स्त्री तथा ग्रामिण स्त्री दोनों का समावेश है। इस कहानी संग्रह में लेखिका ने भिन्न-भिन्न प्रदेशों की स्थानीयता वहाँ के पर्यावरण, परिवेश, रहन-सहन, आचार-विचार, व्यवहार आदि को बड़े ही बारीकी के साथ अंकित किया है। 'कायान्तर', 'कुहासा' 'काँच के फूल' और 'थोड़ी सी जमीन, थोड़ा आसमां' कहानियाँ क्रमशः ग्रामीण, महानगरीय और अंतरराष्ट्रिय परिवेश और स्थिति की पृष्ठभूमि में लिखी गई है। स्त्रियाँ हर युग, हर क्षेत्र में पुरुषों द्वारा ठगी गई है चाहे वह कितनी ही आधुनिक क्यों न हो 'काँच के फूल' ऐसी ही कहानी है

जिसमें पढ़ी-लिखी हिया अपने प्रेमी नील से धोका खा कर अज्ञात रूप से गर्भपात के दौरान लावारिश की मौत मरती है। स्त्रियाँ हर समाज में शोषित होती है, चाहे वह मुस्लिम समाज की हो या हिंदू समाज की। 'दर्दजा' एक तरह से इस्लाम में औरतों की दुरावस्था की अभिव्यक्ति है जहाँ रोहिला अपनी बेटी को पढ़ाने के लिए संघर्ष करती हुई मर जाती है। यह नारी चेतना की कहानी है जिसमें स्त्री अपने अधिकार के प्रति सजग है पर सामंती समाज उसकी आवाज को दबा देता है। वही 'कुहासा' कहानी स्त्री के बाँझपन पर प्रश्न करते हुए पुरुषों के लिए पलटवार है। इस कहानी में नायिका अपने साथ हुए बलत्कार को सकारात्मक रूप में लेती हुई, अपने बाँझपन की समाप्ति की आस लेकर नए जीवन की ओर निकल पड़ती है। उसी तरह 'तुम आए तो' की नायिका कबीर के साथ लिव इन रिलेशन में घुटन और त्रास का जीवन जीती है पर जब बाद में उसके जीवन में सच्चा प्रेमी आता है। तब वह वामपंथी सोच के बदमिजाज कबीर को छोड़ अर्पित के साथ जीवन जीने को तैयार हो जाती है। 'काली-कलूटी' कहानी काले रंग के कारण स्त्री को जो त्रास तथा तिरस्कार झेलना पड़ता है साथ ही स्त्री को विवाह के लिए वस्तु की भाँति बार-बार सजाकर पुरुष के समक्ष पेश करने की दर्दनीय कहानी है। वही 'कायान्तर' बाल विवाह, घरेलू हिंसा तथा बड़े साहूकारों का स्त्री के ऊपर अत्याचारों की अभिव्यक्ति है परंतु कहानी की नायिका फूलमती अत्याचारों से हार न मानकर देवी आने का नाटक कर अपनी रक्षा करती है तथा साहूकारों को दंड भी देती है।

जयश्री रॉय की कहानियों की स्त्रियाँ, स्त्रियों के जीवन के सभी पक्षों को उघाड़ कर रख देती हैं। अब नारी चार दिवारी में बंद कर नहीं रहना चाहती वह खुला आसमान चाहती है। अब वह आज़ादी चाहती है जिसमें उसे सोचने, पहनने, बोलने तथा सेक्स करने

की, जिसमें उसकी मर्जी शामिल हो। अब वह है अपने स्वाभिमान, अस्मिता, अस्तित्व के विषय में सोचती है और उसे वह पाना चाहती है।

1.2.2. उपन्यास

जयश्री रॉय ने 'औरत जो नदी है', 'दर्दजा' तथा 'साथ चलते हुए' आदि कहानियों को विस्तारित करते हुए इन्हें उपन्यास का रूप दिया है। **'औरत जो नदी है'** नामक कहानी हंस में प्रकाशित हो चुकी है। यह उपन्यास उसी कहानी का औपन्यासिक विस्तार है। उपन्यास के केन्द्र में दामिनी नाम की एक स्त्री का जीवन है, जिसके मन में न तो देह को लेकर कोई वर्जना है और न ही उसे लेकर कोई असंतोष, वह देह को एक ऐसे उत्सव की तरह जीना चाहती है जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों की बराबरी की भागीदारी हो, एक दूसरे की खुशी के लिए ऐसा समर्पण जो शारीरिक ही नहीं आत्मिक भी हो लेकिन दामिनी देह, प्रेम और आस्था में अन्य स्त्रियों की भाँति ही छली जाती है। लेकिन वह छलने पर रोती, बिलुकती नहीं बल्कि उससे ऊपर उठ वह अशेष (प्रेमी) की उपेक्षा करती है तथा उस पर तंज कर उससे दूरी बना लेती है। जिससे अशेष तिलमिलाकर आत्मग्लानि से भर जाता है। दामिनी अपनी माँ की भाँति सारी उम्र पुरुष के पाँव तले दब कर नहीं रहना चाहती और ना ही वह अपनी नौकरानी उषा की भाँति घरेलू हिंसा का शिकार बन मृत्यु को प्राप्त करना चाहती है। दामिनी आत्मचेता स्त्री है। जो समाज में पुरुष के बराबरी का हक चाहती है। वह शादी, तलाक, सभ्यता-संस्कृति, मिथ, इमेज आदि के बहाने पितृसतात्मक व्यवस्था का गुलाम नहीं बनना चाहती। वह सच्चे प्रेम, सम्मान तथा अधिकार का खुला आकाश चाहती है वह अपना जीवन अपनी शर्तों पर जीना चाहती है किसी और की उँगली पर नहीं। लेखिका का यह उपन्यास नारी चेतना से ओत-प्रोत है, स्त्री

को अपने देवी रूप से छलावे से बाहर निकल कर अपना सम्मान पाना है, यही उपन्यास का उद्देश्य है।

'साथ चलते हुए' जयश्री रॉय के दूसरे उपन्यास के कथा सूत्र में स्त्री जीवन के तमाम दुःखों की पड़ताल है और इसी पड़ताल में आदिवासियों के जीवन से संबंधित भी एक कथा साथ चलती है। इस उपन्यास की नायिका अर्पणा अपनी बच्ची तथा पति के साथ विदेश में रहती है, वह सदैव अपने पति की उपेक्षा सहती है। परंतु जब उसकी बच्ची की गंभीर बीमारी के कारण मृत्यु हो जाती है तब वह अपने पति को छोड़कर भारत आ जाती है। भारत में उसकी मुलाकात कौशल से होती है। वह उसमें सच्चे साथी को पाती है तथा वह उसके साथ रहने का निर्णय लेती है। यह उपन्यास दुःख और प्रेम की रुमानियत के आवरण में लिपटा हुआ है जय श्री के अन्य कथानकों की तरह यह उपन्यास भी स्त्री-पुरुष के संबंधों में व्याप्त संश्लिष्टता को विश्लेषित करता है।

'इकबाल' उपन्यास दो प्रेमियों की प्रेम कहानी के साथ-साथ जिया और इकबाल के प्रेम संबंधों की त्रासदी के समान्तर कश्मीर का वजूद तलाशती हुई कहानी है जिसकी जड़ों में प्रेम की वेदना, विस्थापन का दर्द और आतंक की त्रासदी आदि सब समान रूप से उपस्थित है।

जयश्री रॉय अपनी कहानियों तथा अपन्यासों में स्त्रियों की त्रासदी, उनकी पीड़ा, दर्द, छटपटाहट तथा समाज द्वारा उनकी अवहेलना, परिवार द्वारा उपेक्षा, देवी कह कर सदैव उसका शोषण करना आदि को व्यक्त करती है। लेखिका की रचनाओं में उनकी अपनी अभिव्यक्ति तथा सोच छिपी रहती है। जयश्री रॉय स्त्री को देवी के रूप में सम्मान नहीं चाहती वह स्त्री को मनुष्य के रूप में स्वीकारना चाहती है। वह स्त्री को ऐसा आकाश देना चाहती है जहाँ वह अपनी पहचान, अपने अधिकारों, स्वाभिमान के साथ रह सके। वह

केवल हाड़माँस बनकर नहीं रहना चाहती। वह स्वावलंबी बनकर जीना चाहती है। स्त्रियों को अब अपने अस्तित्व तथा पहचान के लिए लड़ना होगा। स्त्रियों में चेतना जागृत करनी होगी अपनी अस्मिता के लिए जयश्री रॉय अपनी कहानियों में स्त्रियों के सभी पहलुओं को स्पष्ट रूप से प्रकट करने में सफल रही है।

1.2.3 कविता

यह बात बहुत कम लोगों को पता है कि जयश्री रॉय ने अपने लेखन की शुरुआत सन् 2010 में 'तुम्हारे लिए' काव्य संग्रह से की थी। जितनी मनोरम इनकी कहानियाँ हैं उतनी ही मनोरम इनकी कविताएँ भी हैं।

द्वितीय अध्याय

द्वितीय अध्याय

स्त्री चेतना : संकल्पना और स्वरूप

2.1 चेतना का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

2.1.1 चेतना का अर्थ एवं परिभाषा

2.1.2 चेतना का स्वरूप

2.2 चेतना के प्रकार

2.2.1 सामाजिक चेतना

2.2.2 आर्थिक चेतना

2.2.3 राजनीतिक चेतना

2.2.4 साँस्कृतिक चेतना

2.2.5 धार्मिक चेतना

2.2.6 दार्शनिक चेतना

2.2.7 नैतिक चेतना

2.2.8 स्त्री चेतना

2.2.9 राष्ट्रीय चेतना

2.3 स्त्री चेतना का अर्थ एवं स्वरूप

2.4 स्त्री चेतना के विविध संदर्भ

2.4.1 सामाजिक चेतना का संदर्भ

2.4.2 राजनीतिक चेतना का संदर्भ

2.4.3 प्रशासनिक चेतना का संदर्भ

2.4.4 धार्मिक चेतना का संदर्भ

2.4.5 साहित्यिक चेतना का संदर्भ

द्वितीय अध्याय

स्त्री चेतना : संकल्पना और स्वरूप

2.1 चेतना का अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप

मनुष्य को दूसरे सभी प्राण धारी जीवों से श्रेष्ठ बनाने वाला तत्व 'चेतना' है। चेतना मनुष्य को सोचने, समझने, मूल्यांकन करने, तर्क करने तथा निष्कर्ष निकलने की क्षमता प्रदान करती है। चेतना वह तत्व है जिसके द्वारा मनुष्य अपने वातावरण को समझता है तथा अपने आस-पास की घटनाओं के प्रति सजग रहता है। चारों ओर की घटनाओं के प्रति सदैव अपनी पंचेन्द्रियों को मुक्त रखना ही 'चेतना' कहलाती है। दूसरे प्राणियों में नैसर्गिक प्रवृत्ति (भूख, नींद, काम) तो होती है परंतु वह बाह्य वातावरण के प्रति जागरुक नहीं होते। वह केवल खुद के प्रति जागरुक होते हैं। किंतु मनुष्य चेतना तत्व के प्राप्ति के कारण स्वयं के प्रति जागरुकता के साथ बाह्य वातावरण के प्रति भी जागरुक रहता है। "चेतना जीवन के हर क्षेत्र से संबंधित है। वह जीवन के भाव को वहन करती है और साथ ही जीवन के प्रसंग में सक्रिय सहभागी बनती है यह उर्ध्वमुखी एवं अन्तर्मुखी दोनों है। यह जीवन रस है इसकी महत्ता अनेक रूपों में दृष्टिगत होती है यही चेतना का विशेष गुण है।"[1] चेतना सचेत और अचेत के बीच के अंतर की अभिव्यक्ति है एक व्यक्ति तब तक चैतन्य रहता है, जब तक उसका मस्तिष्क कार्य कर रहा हो और जैसे ही उसके विचार, चिंतन, अनुभूति आदि क्षणिक विराम की अवस्था में आ जाते हैं, वह अचेत हो जाता है। 'अनुभव', 'चेतना', 'सावधानी', 'जागरुकता' आदि एक दूसरे के पर्यायवाची हैं।

---

[1]. प्रसाद के साहित्य में युग चेतना, डॉ. लीलावती देवी गुप्त, पृ. सं. 25

चेतना मनुष्य को वातावरण का ज्ञान प्राप्त कर के स्व-रक्षा का ज्ञान देती है। वर्तमान की समस्याओं का हल कराती है तथा भविष्य के लिए योजना बनाकर परिणामों को नियंत्रित करती है। चेतना हमें सही और गलत के मध्य अन्तर को समझाती है तथा सही उपकरणों एवं निर्णयों को चयनित करने में सहायक होती है। प्रत्येक मनुष्य की चेतना भिन्न-भिन्न होती है तथा यह कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में मनुष्य संस्कार प्राप्त करता है इस संस्कार का परिष्कार चेतना के माध्यम से संभव होता है। चेतना की प्रमुख विशेषता उसकी परिवर्तनशीलता है। इस परिवर्तनशीलता में भी एकता और साहचर्य का रूप दृष्टिगत होता है। चेतना का क्षेत्र बहुत व्यापक है, तथा उसे पूर्ण रूप से परिभाषित नहीं किया जा सकता है। चेतना के लिए बुद्धि, मनोवृत्ति, सुधि, याद, संज्ञा, होश, चेत, जागृति, समझ, विवेक, अहं आदि पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया जाता है। साधारण शब्दों में कह सकते हैं कि चेतना मनुष्य को स्वयं के प्रति तथा बाह्य जगत के प्रति जागरुक रखती है। चेतना हमें आंतरिक भावों को समझने तथा समाज या वातावरण को समझने में सहायक होती है। चेतना का विकास समाज में ही हो सकता है। क्योंकि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। इसलिए चेतना का संबंध समाज से ही होता है जो हमें समाज में सही रूप से जीना सिखाती है। चेतना के बिना मनुष्य के जीवन की कल्पना संभव नहीं है।

2.1.1 चेतना का अर्थ एवं परिभाषा

चेतना शब्द 'चेतन' से या 'चेत' से बना है। 'चेत' शब्द 'चेतस्' का पर्याय है जो संस्कृत से ग्रहण किया गया है। चेतना शब्द का प्रयोग ज्ञान, होश, बुद्धि, चेत और जीवन के अर्थ में किया जाता है। संस्कृत में इसका अर्थ आत्मा, जीवन, परमात्मा, मनुष्य, प्राणी आदि से लिया जाता है। चेतना शब्द का अर्थ दो भिन्न क्रियाओं में लिया जाता है- अकर्मक क्रिया और सकर्मक क्रिया। अकर्मक क्रिया का मतलब 'होश में आना' सावधानी से कार्य

करना, विवेक-बुद्धि से कार्य लेना है। वहीं सकर्मक का अर्थ सोचने विचारने से है। राजपाल हिंदी शब्द कोश में " 'चेतना' को 'मन का भाव' या 'मनोवेग' के रूप में स्वीकारा गया है।"[2] जिसका संबंध 'ज्ञानात्मक' अनुभव चेतना के स्वभाव को प्रकट करने से है। "चेतन शब्द को भारतीय विद्वान आत्मवाचक मानकर 'चित' धातु से कर्ता अर्थ में लगत प्रत्यय से 'चेतना' शब्द की उत्पत्ति मानते हैं।"[3] परंतु इस चेतना शब्द को सामान्यतः अंडरस्टैंडिंग, इंटेलिजेंस आदि आधुनिक भावबोध वाले शब्दों के अर्थ के रूप में भी पाते हैं। जिसमें मानसिक क्रियाओं के लिए चेतना का प्रयोग किया जाता है।

अंग्रेजी में 'चेतना' शब्द के लिए 'कांशसनेस' (Consciousness) अवेक (Awake) नोविंग (Knowing) जैसे समानार्थक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। प्रसिद्ध दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक विलियम जेम्स ने सबसे पहले चेतना प्रवाह शब्द का प्रयोग किया और उनके अनुसार "विचार, भावनाएँ और स्मृतियाँ मानव चेतना के ऊपरीस्तर में विद्यमान न रहकर निम्नस्तर में विद्यमान रहती हैं। यह श्रृंखला में नहीं रहती एक निर्झरणी की भाँति प्रवाहित होती हैं।"[4] इसके बाद यह साहित्य जगत में प्रसिद्ध हुआ। साथ ही मनोवैज्ञानिक कथा साहित्य को भी प्रभावित किया। "चेतना वह तत्व है जिसमें ज्ञान की, भाव की और व्यक्ति अर्थात् क्रियाशीलता की अनुभूति होती है।"[5] साथ में यह भी कहा है "असंतोष, जिज्ञासा और दृष्टि चेतना के मूल घटक हैं जो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति

---

[2] राजपाल हिंदी शब्दकोशः डॉ. हरदेव बाहरी, पृ.सं. 267, 650.

[3] ए संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरीः सर विलियम्सन- पृ. सं. 319.

[4] Stream of consciousness in modern novel, Robert hampri page no. 15

[5] नयी कविता में राष्ट्रीय चेतनाः डॉ. देवराज पाठक, पृ. सं. 19

के लिए, व्यक्ति को समाज के लिए, समाज को प्रकृति के लिए और प्रकृति को काल के संदर्भ में परिभाषित करने का प्रयास करती है।"[6]

चेतना हमें अच्छे-बुरे की पहचान कराकर अपने जीवन में तरक्की के रास्ते की ओर अग्रसर करती है। चेतना हमें अपने अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति जागरुक करती है। चेतना ही वह शक्ति है जो समाज में मनुष्य को अपनी पहचान दिलाती है। चेतना के द्वारा ही हम लोक कल्याण की ओर आगे बड़ते हैं।

चेतना के तीन स्तर माने जाते हैं चेतन, अवचेतन और अचेतन। फ्राइड चेतना को मन का एक भाग मानते हैं तथा उनके अनुसार चेतना (Consciousness) वह स्तर है जिसमें मनुष्य विचारों का संगंठनकर सोच-समझकर कार्य करता है। जिसमें ऐसी सभी बातें रहती हैं जिसके द्वारा हम सोचते, समझते एवं कार्य करते हैं। अवचेतन स्तर पर ऐसी बातें रहती है जिसका ज्ञान हमें अभी नहीं होता लेकिन बाद में याद किया जा सकता है। (इसे अंग्रेजी में Sub-consciousness कहते हैं) और अचेतन (Unconsciousness) स्तर में वे बातें रहती हैं जो हम भूल चूके होते हैं तथा याद दिलाने पर ही हमें याद कराया जा सकता है। इस प्रकार से जो अनुभूतियाँ एक बार हमारी चेतना में रहती है वह कभी अवचेत और अचेतन में चली जाती है।

चेतना के द्वारा ही मनुष्य सक्षम व कुशल बनता है। यह मनुष्य में विद्यमान रहकर जीवनपर्यंत क्रियाशील रहती है। तथा चेतना के आधार पर ही मानवचरित्र का निर्माण होता है। चेतना की सार्थकता अकेले में नहीं सामूहिकता में ही विद्यमान है। चेतना हमें समाज के प्रति उत्तरदायित्व, शोषकों के प्रति आक्रोश, वैभव एवं विलासिता से भर्त्सना करना, अमानवीयता तथा अत्याचार से लड़ने के लिए अच्छे कर्म करने के लिए प्रेरित

---

[6] वही- पृ. सं. 20

करना चेतना के अनिवार्य गुण हैं। चेतना सामूहिक हितों के लिए लोक कल्याण के लिए क्रियाशील रहने की जागरुक भावना है।

चेतना को समझाने के लिए बहुत से विद्वानों ने इसकी भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ दी हैं परंतु किसी भी परिभाषा को चेतना की पूर्ण निश्चित परिभाषा स्वीकारा नहीं किया गया है। कुछ ऐसे शब्द जैसे ईश्वर, जीव, जगत, परमात्मा आदि की सटीक परिभाषा नहीं दी जा सकती, ये शब्द अपरिभाषिय होते हैं। इसी तरह चेतना की भी कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी जा सकती केवल उसे अनुभव किया जा सकता है। लेकिन फिर भी बहुत से विद्वानों ने इसको परिभाषित करने का प्रयास किया है जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं- विलियम जेम्स के अनुसार "चेतना एक इकाई अथवा वस्तु नहीं है बल्कि एक प्रवाह है, संबंधों की एक प्रणाली है। यह एक ऐसा बिन्दु है, जिस पर विचारों का प्रवाह तथा वस्तुओं के अंर्तसंबंधों के साथ मिलकर दीप्त हो उठता है।"[7]

लोके के अनुसार "मनुष्य के अपने मन में जो कुछ घटित होता है, उसका प्रत्यक्ष ज्ञान चेतना है।"[8] गजानन माधव मुक्तिबोध के अनुसार "चेतना मनुष्य की आत्मिक एवं सत्तात्मक एकता का अर्थ है और आत्मीक एवं सत्तात्मक एकता वह सत्य है जिसका ज्ञान मनुष्य को पशु जगत से भिन्न करता हुआ अंततः क्रियाशील से ही आत्मीक उन्नति प्राप्त कराता है।"[9]

विश्व हिंदी कोश के अनुसार "चेतना जीवधारियों में रहने वाला वह तत्व है जो उन्हें निर्जीव पदार्थो से भिन्न बनाता है। दूसरे शब्दों में हम उसे मनुष्य की जीवन क्रियाओं

---

[7] यशपाल के उपन्यासःसामाजिक कथ्य, डॉ. चमनलाल गुप्ता, पृ.सं.12

[8] दसवें दशक के महिला उपन्यासकारों के उपन्यास में नारी चेतनाः वसाजी कृष्णावंती, पृ.सं. 15

[9] प्रेमचंद-साहित्य का उद्देश्य, पृ. सं.27

को चलाने वाला तत्व कह सकते हैं। चेतना स्वयं और अपने आस-पास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों को मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।"[10]

मानक हिंदी कोश के अनुसार "चेतना मन की वह वृति या शक्ति है जिससे जीव या प्राणी को आंतरिक घटनाओं (अनुभूतियों, भावों, विचारों आदि) और तत्वों एवं बातों का अनुभव या मान होता है।"[11]

चेतना का संबंध हमारे मन तथा बुद्धि से है। हमारे मन में भाव, विचार आदि उत्पन्न होने पर जो सोच समझकर किया गया कार्य है, वह चेतना से प्रेरित होते हैं। 'चेतना' मनुष्य में निहित वह तत्व है जो उसे निर्जीव पदार्थो से भिन्न बनाता है। चेतना के द्वारा मनुष्य अपने वातावरण को समझने तथा उसका मूल्यांकन करने वाली शक्ति प्राप्त करता है। 1. ज्ञानात्मक चेतना, 2. भावात्मक चेतना, 3. क्रियात्मक चेतना के सोपान है। चेतना गतिशील एवं परिवर्तनशील होती है। चेतना के द्वारा ही मनुष्य सही एवं गलत कार्यों में भेद कर पाता है। चेतना के द्वारा ही मनुष्य कोई भी कार्य चिंतनशील होकर सही कर पाता है। चेतना के द्वारा ही मनुष्य ने नये-नये अविष्कारों को जन्म दिया। हर मनुष्य में चेतना निहित है और प्रत्येक में भिन्न-भिन्न होती है।

2.1.2 चेतना का स्वरुप

अलग-अलग परिस्थितियों में चेतना का स्वरूप भिन्न-भिन्न होता है। वैज्ञानिक, दार्शनिक, सामाजिक, बैद्धिक आदि सभी क्षेत्रों में वह क्रियाशील एवं गतिमान रहती है। चेतना मनुष्य की सदैव सजग एवं जागरुकता की स्थिति है जिसके माध्यम से मनुष्य

[10] हिन्दी विश्वकोश(खण्ड चार) - फूलदेव सहाय वर्मा पृ सं. 285.
[11] मानक हिंदी कोश (खंड दो) सं. रामचंद्र वर्मा, पृ.सं. 274

समाज में फैले अत्याचारों या घटनाओं के प्रति जागरुक या संवेदनशील होता है यह उसकी सामाजिक चेतना होती है। वैसे ही जब अपनी राजनीतिक परिस्थितियों से वह जागरुक होता है तो वह उसकी राजनीतिक चेतना होती है। मनोविज्ञान चेतना का अर्थ 'मन' व 'आत्मा' से लिया जाता है। साहित्य के बाद मनोविज्ञान के क्षेत्र में ही 'चेतना' का ही सर्वाधिक प्रयोग होता है। साहित्य में 'चेतना' शब्द को 'कल्पना' और अनुभूति के अर्थ में प्रयोग किया जाता रहा है। मनुष्य जब ईश्वर, परमात्मा, जन्म-मृत्यु आदि के प्रश्नों के उत्तर को समझने व सुलझाने का प्रयत्न करता है तो वह उसकी धार्मिक व दार्शनिक चेतना शक्ति के कारण संभव कर पाता है। चेतना हमारे इतिहास के रहस्यों तथा भविष्य की कठिनाइयों एवं परिणामों की पहचान कराती है। चेतना के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए डॉ. रोहिणी अग्रवाल लिखती हैं कि "चेतना सिर्फ ऐतिहासिक या समाज शास्त्रीय पड़ताल तक सीमित नहीं रहती, बल्कि इसके केंद्र में आत्मा एक इकाई के रूप में व्यक्ति को नहीं बल्कि अपनी पूरी जाति, वर्ण को रख कर शेष वर्गों, जातियों, मानव समूहों के साथ परस्पर संबंधों के स्वरूप और समीकरणों इतिहास और भविष्य की पहचान भी करती है।" [12]

इस प्रकार चेतना सदैव गतिशील रहती है। कभी कम तो कभी अधिक प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न। चेतना को बुद्धि, संज्ञा, होश, समझ, विचार, अनुभूति, मन, आत्मा, सुधि, ज्ञान आदि नामों से जाना जाता है।

2.2 चेतना के प्रकार

चेतना शब्द अपने आप में बहुत व्यापक अर्थ रखता है। 'चेतना' जीवन के हर क्षेत्र से संबंधित है तथा यह सदैव जीवन में क्रियाशील रहता है। इसलिए चेतना को बहुत से

[12] पितृसत्ता के नये रुप- सं. राजेंद्र यादव पृ सं. 131

भागों मे विभाजित कर उसे विस्तृत रूप से समझ सकते हैं। विश्व के अन्य देशों की अपेक्षा भारत ने बहुभाषी चेतना का अनुभव किया है। हमारा इतिहास, हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति, हमारा धर्म, राजनिति, दर्शन, साहित्य आदि हर क्षेत्र में चेतना का दिव्य अंकुर फूटा है। साहित्य के क्षेत्र में चेतना को हर जगह तथा हर युग में देखा जा सकता है। जैसे रीतिकाल में राजनीतिक चेतना, भक्तिकाल में धार्मिक चेतना, निराला, भारतेंदु आदि के रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना आदि। डॉ. काशिनाथ अवलंबे साहित्य चेतना को समझाते हुए लिखते हैं कि "कवि अपने युगीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक पगध्वनियाँ सुने बिना रह नहीं सकता। इसलिए उनकी रचनाओं में कम या अधिक मात्रा में युग की राजनीति, धर्म, संस्कृति साहित्य, अर्थव्यवस्था और सामाजिक परिस्थितियों की अभिव्यक्ति पाई जाती है।"[13]

मनुष्य को जब अपने कर्तव्यों तथा अधिकारों का बोध होता है तो उसमें भिन्न-भिन्न चेतना जागृत होती है। चेतना जागरुक मानसिक स्थिति है तथा इसे हम निम्नलिखित प्रकारों में व्यक्त कर सकते हैं।

2.2.1 सामाजिक चेतना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा समाज के बीना मनुष्य की कल्पना नहीं की जा सकती है तथा वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति समाज में रहकर ही कर सकता है। जब समाज में फैले अंधविश्वास या आत्याचार के प्रति हममें उसके प्रति विरोध व संघर्ष की भावना उत्पन्न होती है तो वह हमारी सामाजिक चेतना कहलाती है।

---

[13] पितृसत्ता के नये रुप- सं. राजेंद्र यादव पृ सं.18

2.2.2 आर्थिक चेतना

अर्थ एक व्यक्ति, समाज, एक राष्ट्र की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अर्थ के अभाव से ही व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र शोषण तथा अवनति का शिकार बनाता है। आर्थिक स्थिति ही मनुष्य की राष्ट्र एवं समाज में उसका स्थान निर्धारण करता है। समाज में आर्थिक वैषम्य संबंधी अनेक समस्याएँ विद्यमान होती है। परिणाम स्वरूप समाज में आर्थिक क्रांति फूट पड़ती है। इस आर्थिक क्रांति की पृष्ठभूमि आर्थिक चेतना के द्वारा ही तैयार की जाती है।

2.2.3 राजनीतिक चेतना

एक अच्छे समाज का निर्माण व विकास अच्छी राजनीतिक नियमों के द्वारा ही संभंव है तथा उन नियमों को सुचारु रूप से लागू करने के दौरान कई समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। जिसका समाधान वह अपनी चेतना से करता है। राजनीति के अंतर्गत यदि चेतना का सहयोग प्राप्त न हो तो मानव समाज में सूत्रता न होगी। प्लेटो के अनुसार "राज्य व्यक्ति का बृहतर रूप है। राज्य की समस्त संस्थाएँ मानव के ज्ञान, रुचि, योग्यता का प्रतीक है। मानवीय चेतना ही राज्य की चेतना है।"[14] अतः राजनीति के प्रति जागरुक मानसिक स्थिति ही राजनीतिक चेतना है।

2.2.4 साँस्कृतिक चेतना

किसी समाज अथवा जाति में निहित संस्कार ही उस जाति या समाज की संस्कृति कहलाती है तथा संस्कृति के अंतर्गत हमारे दैनिक व्यवहार, कला, साहित्य, मनोरंजन,

---

[14] स्वतंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में युग-बोध, डॉ. लालसाहब सिंह, पृ.सं. 18

धर्म, आनंद आदि में पाये जाने वाले रहन-सहन और आचार-विचार निहित होते हैं, जिनकी अभिव्यक्तियों में चेतना की सहायता ली जाती है। हमारी संस्कृति के प्रति जागरुक मानसिक स्थिति ही हमारी सांस्कृतिक चेतना कहलाती है।

2.2.5 धार्मिक चोतना

धर्म के नाम पर कई युगों से समाज में खूनी वातावरण बनता आया है ऐसी स्थिति में जब चेतना का विवेकपूर्ण प्रयोग किया जाता है तब सही धार्मिक सिद्धांतों का प्रतिपादन होता है जो सर्वहिताय होता है तथा यह धार्मिक चेतना का परिणाम होता है।

2.2.6 दार्शनिक चेतना

ईश्वर, जीव, जगत आदि का समुचित ज्ञान दर्शन का लक्ष्य है तथा चिंतन द्वारा इस ज्ञान की प्राप्ति का रहस्य स्पष्ट किया जाता रहा है तथा चेतना से ही चिंतन मनन किया जा सकता है।

2.2.7 नैतिक चेतना

समाज में निहित व्यक्ति के शुद्ध आचार और विचार ही नैतिक चेतना है। परिवार तथा समाज में स्नेहपूर्ण व्यवहार, सदाचार, समर्पण, संगठन में एकता आदि नैतिक चेतना है।

2.2.8 स्त्री चेतना

कई युगों से नारी सदैव शोषित होती आई है। उसे हमेशा अपने अधिकारों से वंचित रखा गया है तथा उसे पुरुषों द्वारा अपने पाँव की जूती समझा गया है। उसे केवल घर की दहलीज तक ही सीमित रखने का प्रयास किया गया है परंतु अब भारतीय नारी

बदलते हुए परिवेश में अपने अधिकारों के प्रति सचेत तथा जागरुक हुई है। शिक्षा के द्वारा वह आत्मनिर्भर होकर पुरुष से कंधे से कंधा मिलाकर चलने योग्य हुई है। वह अब झूठे रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों को तोड़ अन्याय के विरुद्ध सजग होने की शक्ति अर्जित कर रही है और उसकी यह शक्ति उसकी चेतना से ही प्रेरित है, जिसे स्त्री चेतना कहते हैं।

2.2.9 राष्ट्रीय चेतना

अपने देश के मान-सम्मान, हित तथा कल्याण की जागरुक मानसिक स्थिति ही राष्ट्रीय चेतना है।

उपरोक्त के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक चेतना, सौंदर्यात्मक चेतना, दलित चेतना आदि चेतना के ही प्रकारों में सम्मलित हैं।

2.3 स्त्री चेतना का अर्थ एवं स्वरूप

सारे संसार के केंद्र में स्त्री हमेशा से ही शोषित रही है तथा वह संसार एवं समाज की निर्माण धात्री है फिर भी आनादि काल से नारी समाज में चहुँमुखी शोषण का शिकार बनी हुई है नारी के बिना समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। स्त्री सदैव पुरुष सत्तात्मक समाज के अत्याचारों को सहती आयी है चाहे वे किसी भी युग की क्यों न हो, चाहे रामायणकाल की सीता हो या महाभारत काल की द्रोपदी। हमेशा उसेक चरित्र को ताक पर लगाया जाता रहा है। उसे पाँव की जूती समझा गया है। कभी उसे घरकी मर्यादा के नाम पर तो कभी समाज के नाम पर उसके अधिकारों से उसे वंचित रखा गया है । जब एक लड़का घर से बाहर निकलता है तो कहते हैं वह कमाने गया है लेकिन जब एक स्त्री घर से बाहर निकलती है तो कहते हैं क्रिया चरित्र दिखाने निकली है। स्त्री-पुरुष का यह भेद हमेशा से चला आ रहा है जिसका निर्माण समाज ने किया है ईश्वर ने नहीं। ईश्वर ने

तो केवल लिंग भेद किया था लेकिन समाज ने तो स्त्री को घृणीत वस्तु के समान बना दिया फ्रेंच लेखिका सिमोन द बोउआर के अनुसार 'स्त्री पैदा नहीं होती, उसे स्त्री बनाया जाता है'। क्योंकि प्रत्येक मनुष्य के एक नहीं दो लिंग होते है । एक वह जो उसे जन्म से प्राप्त होता है और दूसरा समाज द्वारा व्यक्ति में विकसित किया जाता है इसी को हम क्रमशः सेक्स और जेंड़र कह सकते हैं। लिंग तथा शारीरिक कुछ भेद के आधार पर दो भिन्न मनुष्य जातियाँ मानी गई है। परंतु समाज में स्त्री-पुरुष का आचारण कैसा होगा इसका निर्धारण समाज के भिन्न-भिन्न नियम तथा आचार संहिता द्वारा किया गया। बचपन से ही लड़के को पुरुषत्व की और लड़की को स्त्रित्व की शिक्षा दी जाती है जिसमें लड़के को शक्तिशाली, बौद्धिकता, कठोरता आदि गुणों को सिखाया जाता है तथा लड़की में कोमलता, नम्रता, सलज्जता, अबला, पतिपरायणता आदि गुण जबरदस्ती स्त्री पर थोप दिए जाते हैं। और स्त्री उसे जन्मजात मानकर पुरुषों की अधीनता तथा शोषण का शिकार होती रही है। स्त्री को पत्नी बनकर पति की सेवा, माँ बनकर बच्चों की सेवा, बेटी बनकर माँ-बाप की सेवा तथा बहू बनकर सास-ससुर की सेवा तक ही सीमित कर दिया गया। उसकी अपनी इच्छा, भावनाओं, कामनाओं का कोई मोल नहीं है। वह सिर्फ दूसरे के प्रति त्याग तथा समर्पण के लिए बनी मानी गई है उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। 18 वीं सदीं में स्त्रियों की स्थिति बहुत ही दयनीय थी परंतु 19वीं सदीं में उसकी हालत में कुछ सुधार आया। उस समय यूरोप में होने वाले परिवर्तन से भारतीय नारी भी प्रभावित हुई। भारत की आजादी के संग्राम के साथ स्त्रियाँ भी अपनी आजादी की तरफ सोचने लगी, वह भी अब अपनी पहचान पाना चाहती थी। वह शोषण की दास्ता से मुक्त होने के लिए तिलमिला रही थी ऐसे समय में महात्मा ज्योतिबा फुले, महर्षि दयानंद, सरस्वती ,राजा राममोहन राय तथा उनके अनुयायियों द्वारा स्त्रियों के लिए शिक्षा के द्वार खोले गए। स्त्रियों को शिक्षा संस्थानों में प्रवेश मिलने लगा। इन शिक्षा संस्थानों के परिणाम स्वरूप स्त्री खुद की ओर दो दृष्टियों से देखने लगी। एक दृष्टिकोण वह जो पुरुष द्वारा निर्मित मूल्यों

का है तो दूसरा दृष्टिकोण उसके अपने विवेक से निर्मित है। इस दूसरे दृष्टिकोण का आरंभ ही 'स्त्री चेतना' है जिसके अंतर्गत वह अपने अस्तित्व के बारे में सोचती है अपनी महत्ता को स्वीकारने लगती है पुरुषों के द्वारा निर्धारित मूल्यों का विरोध कर अपने लिए स्वयं मूल्यों एवं नियमों का निर्धारण करती है। नारी को शोषण से मुक्त करने में अनेक समाज सुधारको के साथ स्त्री लेखिकाओं ने भी योगदान दिया जिसमें चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, उषा प्रियंबदा, मन्नू भंडारी आदि ने कहानियों में नारी जीवन की त्रासदियों को रूप देने का प्रयास किया। स्त्रियों में अब अपने अहं (स्वाभिमान) के लिए खड़े होने का साहस जागृत होने लगा जिसे स्त्री चेतना कह सकते है।

सृष्टि के आरंभ से ही सृष्टि के निर्माण और संचालन में स्त्री का स्थान समस्त मनुष्य जाति की सभ्यता एवं संस्कृति का मूल आधारस्तंभ के रूप में जाना जाता है। प्रजनन तथा वंशवृद्धि के कार्य के कारण पुरुष की तुलना में संसार की रचना तथा विकास में स्त्री का महत्व अधिक है अतः उसे "स्त्री-सूत्री जन्मदात्री कहा जाता है।"[15]

स्त्री शब्द का अधिक प्रयोग वैदिक साहित्य में किया गया। स्त्री शब्द सत्यै धातु में ड्रप और डीप प्रत्यय के योग से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है- फैलना, ठहरना, घेरा बनाना आदि। इस प्रकार व्युत्पत्ति के आधार पर इसका अर्थ है "सत्यायेत आस्यां गर्भ इति स्त्री। अर्थात् जहाँ गर्भ ठहरता है उसे स्त्री कहते हैं। नारी, औरत , महिला आदि इसके पर्यायवाची हैं।"[16] स्त्री शब्द की व्युत्पत्ति, स्वरूप एवं उसकी महत्ता को स्पष्ट करते हुए पतंजली ने लिखा है- "शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध इन सबका समुच्य स्त्री है। स्त्री शब्द, स्त्री स्पर्श, स्त्री रूप, स्त्री रस इस लीलामयी जगत में अपनी अनिवर्चनीय सुषमा और

---

[15] मराठी व्युत्पत्ति कोशः कृ. पा. कुलकर्णी, पृ. सं.804

[16] संस्कृत हिंदी कोशः वामन शिवराम आप्टे, पृ.सं. 1138

अनुपम आकर्षण शक्ति के लिए सुविदित है।"[17] स्त्री शब्द नारी का पर्यायवाची रूप है- नृ+अत्र-डीनृ=स्त्री नर का स्त्री रूप। स्त्री के लिए अमरकोशकार ने 43 पर्यायवाची शब्दों की गणना की है। नारी, थोषा, वधू, वामा, वनिता, भोगिनी, पत्नी, महिला, अंगना, भीरू, मानिनि, कांता, ललना, प्रतिपदर्शिनी, चंडी, सुंदरी, भार्या, सहधर्मिणी, कुलपालिला, निताम्बिनी, रमणी, मतकांक्षिनी आदि पर्यायवाची शब्द है।

स्त्री के लिए अंग्रेजी में 'Lady' शब्द का प्रयोग किया जाता है तथा नारी के लिए 'Woman' शब्द का प्रयोग किया जाता है । आज lady शब्द का अर्थ आदरणीय स्त्री के रूप में लिया जाता है। पहले यह शब्द 'hiaefdige' के रूप में प्रयुक्त होता था साथ में half-br-ead और dige-kneader का प्रयोग जिसका अर्थ है आटा गूंथने वाली या खाना बनाने वाली। आज भी lady शब्द का अर्थ पुरुषों के लिए रोटी बनाने वाली ही रही है। स्त्री के अलग-अलग रूपों को समाज में अलग-अलग नामों से जाना जाता है। कभी माँ, कभी बहन, कभी बहू आदि। स्त्री को एक परिभाषा में व्यक्त कर पाना बहुत कठीन है क्योंकि स्त्री सदैव गतिशील है फिर भी कुछ विद्वानों ने उसे परिभाषित करने का प्रयास किया है।

चाणक्य के अनुसार "असत्यं साहसं माया मात्सर्य चाति लुब्धता निगुणत्वम शोचत्वं स्त्रीणां दोषा स्वभावजा।"[18] अर्थात् साहस, माया, भय, चंचलता या चपलता, अशोच आदि स्त्री के स्वभाव जन्म दोष है। अरस्तू के अनुसार- "औरत कुछ गुणवत्ताओं की

---

[17] आधुनिक हिंदी कहानी में नारी की भूमिकाः सुशिला मित्तल, पृ.सं. 4

[18] नारी एक विवेचनः धर्मपाल, पृ.सं.1

कमियों के कारण ही औरत बनती है। हमें स्त्री के स्वभाव से यह समझना चाहिए कि प्राकृतिक रूप में उसमें कुछ कमियाँ हैं। वह एक प्रासंगिक जीव है। वह आदम की एक अतिरिक्त हड्डी से निर्मित है।"[19] इन परिभाषाओं में भी औरतों के अवगुणों को दर्शाया गया है। भारतीय साहित्य की तरह पाश्चात्य साहित्य में भी उसे हीन दृष्टि से देखा गया है। उसे उपेक्षा का पात्र समझा गया। एक तरफ तो उसे महानता के शिखर पर बिठाया जाता है वही दूसरी तरफ उसे अधम कहकर उसकी निंदा की जाती है।

वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी थी। भारत के सभी आदर्श रूप स्त्री में पाये जाते थे। विद्या का आदर्श 'सरस्वती' में, धन का आदर्श 'लक्ष्मी' में, शक्ति का 'दुर्गा' में, सौंदर्य का 'रीति' में, पवित्रता का 'गंगा' में इतना ही नहीं सर्वव्यापी ईश्वर को भी 'जगतपाननी' के नाम से सुशोभित किया गया है इस युग में स्त्री चाहे घर में हो, परिवार में हो, शिक्षा का क्षेत्र हो या राजनीतिक क्षेत्र हो, हर क्षेत्र में वह पुरुष के समान मानी जाती थी। यजुर्वेद में उसे सोमपृष्ठा कहा गया है। ऋषिकाल में वेदमंत्रों का अर्थ बताने वाली स्त्री थी जैसे- लोपामुद्रा, श्रद्धा, सरमा, रोमशा, अपाला, यमी घोषा आदि। इस युग में बाल प्रथा नहीं थी "पूर्ण ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।"[20] इस वाक्य से पता चलता है कि स्त्री का सही आयु में ही विवाह किया जाता था। इस युग में स्त्रियों को शक्ति, ज्ञान एवं सम्पत्ति का प्रतीक माना गया है। बृद्धारण्यक उपनिषद में ब्रह्मवेत्ता गार्गी की कथा का उल्लेख है। जिसने राजा जनक की विद्वानो से भरी सभा में ऋषि याज्ञवल्क्य के साथ शास्त्रार्थ किया था। भारत के मध्यकाल में भी स्त्रियों के अगाध पण्डिता होने के दृष्टांत पाये जाते हैं। इसका उदाहरण विद्याधारी भारती है जिसने शंकराचार्य जैसे

[19] स्त्री उपेक्षिताः प्रभा खेतान पृ.सं. 24
[20] अथर्ववेदः -11/15/18.

महाज्ञानी को परास्त किया था। स्त्री का यह युग भारत के इतिहास में 'स्वर्णिम युग' कहा जा सकता है, परंतु यह समय सदा एक सा न रहा समय परिवर्तन के साथ स्त्रियों की स्थितियों में भी परिवर्तन आये। उत्तर वैदिक काल में मनुस्मृति में सर्वप्रथम स्त्रियों की स्वतंत्रता पर अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगाए गए। उनके धार्मिक एवं सामाजिक अधिकारों को समाप्त कर दिया गया। और धीरे-धीरे उन्हें अन्यायी रूढ़ि परम्पराओं के संकीर्ण घेरे में बांध दिया गया। मध्यकाल में हिंदू धर्म एवं संस्कृति कि रक्षा के नाम पर बाल विवाह का आरंभ हुआ, विधवाओं का मुण्डन किया जाने लगा, सती प्रथा का प्रचलन आरंभ हुआ। 19 वीं सदी तक बाल विवाह, वैवाहिक कुरीतियाँ, संयुक्त परिवार की जाचक व्यवस्था, दहेज प्रथा, धार्मिक वैश्यावृत्ति आदि जैसी जहरीले जड़े भारतीय समाज में स्त्रियों को परम्परा की रुढ़ीवादी नियमों के अंधेरे में धकेलती चली गयी। जहाँ मनुस्मृति में लिखा है- "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।"[21] (जिसका अर्थ है जहाँ स्त्रियों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है वहाँ के पुरुष स्वयं देवताओं की कोटी में आ जाते हैं।) वही शंकराचार्य ने स्त्री को 'द्वार किमेंक नरकस्य नारी' कह कर उसका स्थान गिराकर उसका अपमान किया और उसे नर्क का द्वार कहा। तुलसीदास ने तो स्त्री को 'अधम से अधम अति नारी' कहकर उसे अती नीच बना दिया गया। इस प्रकार स्त्री को धार्मिक, सामाजिक, दार्शनिक दायरे में रहकर उसकी भर्त्सना की गई। पुरुष ने निजी स्वार्थवश तथा अपनी सत्ता कायम रखने के लिए स्त्री को हीन दर्जा दिया उसके अधिकारों को छीन लिया गया, उसकी अस्मिता को पितृप्रधान संस्कृति के नाम पर कुचलकर रख दिया। ऐसी स्थिति में मुक्ति के लिए छटपटाहट तो होनी ही थी। पुरुषों ने उसे भोग की वस्तु मान लिया था, वह पशु के तुल्य पराधीन हो चुकी थी। 18 वीं सदी में स्त्रियों की हालत जितनी खराब थी, 19 वीं सदी में कुछ सुधार आया। वैसे 18 वीं सदी में ही स्त्री अस्मिता की नींव का प्रारंभ हो गया था जैसे

[21] मनुस्मृतिः 3/47.

रानी दुर्गावती, माता जीजाबाई,1857 के स्वतंत्रता संग्राम में अपनी और अपने राज्य की अस्मिता तथा स्वतंत्रता की रक्षा के लिए लड़ने वाली झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई को भूलाया नहीं जा सकता। लेकिन फिर भी स्त्रियों की शोषण की दासता कम नहीं हुई थी। तब 19 वीं सदी के प्रारंभ में ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियाँसोफिकल सोसायटी आदि संस्थाओं के द्वारा स्त्रियों के उत्थान के लिए भरसक प्रयास किये गये। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा का कड़ा विरोध किया। महाराष्ट्र में महात्मा फुले, उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले ने स्त्री शिक्षा को बड़ावा दिया। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने स्त्रियों को दलितों से भी दलित मानकर दलितों के साथ उसका उद्धार होना भी आवश्यक माना। सामाजिक व्यवहार और रीति-रिवाज जन्म से ही स्त्रियों के विकास में इतने बाधक होते हैं कि उन्हें अपनी आन्तरिक शक्तियों के विकास का अवसर ही नहीं मिल पाता। महर्षि कर्वे, गाँधी जी जैसे बड़े-बड़े नेताओं ने भी स्त्री शिक्षा को महत्वपूर्ण माना। स्त्री अभी भी घर की चार दीवारों में बंद गठरी थी। धार्मिक रूप से वह निम्न कोटी की थी। इसी समय यूरोप में होने वाले परिवर्तन से भारतीय नारी भी प्रभावित हुई। नारी अब विलास की सामग्री नहीं बनना चाहती थी। उसने आर्थिक रूप से स्वतंत्र रहने की मांग की। सामाजिक सेवा, पत्रकारिता और साहित्य के माध्यम से सामाजिक व्यापार में नोरियों का प्रवेश एक सर्वथा नवीन सत्य प्रतिपादित होने लगा था| नारियों में सामाजिक बदलाव आने लगा था 1914-18 के महायुध्दों से नारियों की स्थिति में क्रांतिकारी बदलाव हुआ। आज वे विश्व की राजनीति का आधार बन रही है। गाँधीजी ने भी कहा था कि पुरुष शारीरिक बल से भले ही स्त्री से अधिक बलवान हो किंतु आत्मिक बल में तो स्त्री ही पुरुष की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है। स्वतंत्रता संग्राम के आंदोलनों में स्त्री की भागीदारी ने लोगों की सोच को परिवर्तित किया। भारतीय नारियों की जागृति की दिशा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान ऐनी बेसेन्ट रखती है जब उन्होंने सन् 1914 ई. में 'मद्रास जागो' शीर्षक से भाषण दिया जिसमें नारियों को पढ़ने के लिए प्रेरित किया तथा कई कुरीतियों का विरोध किया।

जिससे स्त्रियों में नई चेतना की लहर उठने लगी। मई 1917 में प्रथम महिला संघ की स्थापना हुई। 1920-30 के मध्य इस संस्था की 87 शाखाएँ खोली गयी। गाँधीजी ने सती प्रथा का कड़ा विरोध किया "विद्या पाने का कार्य परदा रखने के साथ कभी नहीं चल सकता।"[22] नारियों को अब सामाजिक, राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होने लगे। परंतु इससे सभी स्त्रियों की स्थितियों में सुधार नहीं हुआ। यद्यपि शहर की स्त्रियों के जीवन में अवश्य परिवर्तन हो रहा था। ऐसी स्थिति में साहित्य जगत ने स्त्रियों को अपने अधिकारों के लिए जोर-शोर से प्रेरित किया। स्त्री विमर्श की सबसे बड़ी प्रवक्ता सिमोन द बोउआर ने तो स्त्रियों को नई पहचान दिलाई तथा स्त्रियों के हक के लिए संघर्ष किया। नारी चेतना अब विकास की ओर बड़ रहा था। केट मिलट, बैटी फरीडन आदि ने पाश्चत्य साहित्य के क्षेत्र में स्त्री चेतना को नया पथ दर्शाया। स्त्री विमर्श एवं स्त्रीवाद साहित्य जगत के केंद्र में आ गया। जिसने समाज विज्ञान, मनोविज्ञान, राजनीति साहित्य आदि क्षेत्रों को झकझोर कर रख दिया। वैसे ही भारतीय साहित्य जगत में भी स्त्री लेखिकाओं के लेखों ने स्त्रियो के अधिकार, अस्मिता, पहचान दिलाने आदि के मुद्दे उठाये। वह अब पति पत्नी संबंध, बच्चों को जन्म देना, परिवार की थोथी मान्यताएँ तक ही सीमित नहीं रहना चाहती थी। वह अब समाज में पुरुष के समतुल्य खडा होना चाहती है। वह अबला बन कर घरेलू हिंसा को स्वीकारना नहीं चाहती। स्त्री को उसका स्थान दिलाने में भारतीय संविधान का बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिसमें स्त्रियों के हक का निर्धारण किया गया है, स्त्री को शिक्षा का अधिकार दिया गया है। स्त्री के सामाजिक और सांस्कृतिक स्थान पर आज आशादायी बदलाव दिखाई देते हैं। अभी भी स्त्री बलात्कार, दहेज प्रथा, भ्रूण हत्या, घरेलू हिंसा का शिकार लगातार होती आ रही है। स्त्रियों को अपनी हीनता की भावना से उठ कर शिक्षा प्राप्त कर आर्थिक रूप से सबल बन कर पुरुषों के विरोध में खड़ा

[22] गाँधी जी वर्धा में 25/10/33 एक पत्र से ।

होना है। हर काल में स्त्री चेतना के स्वरूप में बदलाव होता रहा है। जिसमें स्त्री को ऊँचा स्थान दिलाना है।

2.4 स्त्री चेतना के विविध संदर्भ

स्त्री चेतना का अध्ययन केवल एक ओर से नहीं किया जा सकता बल्कि हमें स्त्री चेतना से संबंधित सभी पक्षों का अध्ययन करना होगा। आज स्त्री जीवन के सभी क्षेत्रों में जागरुक हुई है तथा स्त्री के सर्वांगीण चेतनशीलता के विकास को उद्घाटित करने का प्रयास होता रहा है। स्त्री की चेतनशीलता को सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक आदि संदर्भों में समझा जा सकता है।

2.4.1 सामाजिक संदर्भ

वैदिक काल में नारी के महान अस्तित्व को भूला नहीं जा सकता परंतु उत्तर वैदिक काल से स्त्री के स्तर में जो गिरावट आयी है वह निरंतर बड़ती ही गई। स्त्रियों को केवल घर संभालने तक सीमित कर दिया गया। घर में भी उसे किसी के सामने बोलने का हक छिन लिया गया मर्यादा, संस्कार की मूर्ति बनाकर स्त्री को तिल-तिलकर मरने को मजबूर किया गया। उसे केवल संभोग और बच्चे पैदा करने की मशीन समझा गया। उसमें और पशु इन दोनों में पशु ही श्रेष्ट दिखने लगा। मुगल आक्रमणों ने इसे और बडावा दिया| मुसलमान सत्ताधारी हिंदुओं की औरतों को पकड़कर उनको बेचने का कार्य करते थे। जिससे समाज में बाल विवाह, पर्दाप्रथा, सती प्रथा, बलात्कार जैसे जगन्य अपराध बड़ते गये। स्त्रियों को शिक्षा से वंचित रखकर घर में बंद कर दिया। स्त्रियों ने भी पिता, पति एवं भाई की अधीनता में स्वयं को सुरक्षित समझा और शोषण का शिकार बनती रही। अंग्रेजों के अधीनता में जब पुरुष तथा देश ही स्वतंत्र नहीं तो स्त्री की स्थिति के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता। परंतु स्त्रियों की स्थिति में सुधार का कार्य भी अंग्रेजी साम्राज्य में ही

आरंभ हुआ जिसमें यूरोप तथा पश्चिमी देशों में होने वाली क्रांतियों ने सहयोग दिया। अमेरिका, इंग्लैड, फ्रांस आदि देशों में स्त्री चेतना की क्रांति चारों तरफ फैली हुई थी। जिसका प्रभाव हमारे देश में हुआ। राजा राममोहन राय के लम्बे प्रयास के बाद 1829 में सती प्रथा का कानूनी विरोध हुआ। आर्य समाज ने स्त्रियों को शिक्षा के लिए प्रेरित किया। विधवा विवाह को हमारे समाज में युगों से ही पाप माना जाता है। विधवा को सबसे नीचे माना जाता है। महर्षि कर्वे ने 1893 में विधवा पुनर्विवाह संस्था को पुनर्जीवित कर सती प्रथा का विरोध किया। समाज में विधवा पुनर्विवाह से स्त्रियों को फिर से जीने का मौका मिलने लगा। बाल विवाह का रोकथाम किया गया तथा लड़के और लड़की की उम्र निश्चित की जाने लगी। चाईल्ड मैरेज रजिस्ट्रेट ऐक्ट सन् 1926 में पास किया गया जिसमें लड़का-लड़की की उम्र कम से कम 18 साल 15 साल होनी आवश्यक माना गया। जिससे स्त्रियों का बचपन छिनने में कुछ रोक लगी। अनमेल विवाह जो नारी को नरकमय जीवन व्यतीत करने पर विवश करता है जिसका सबसे बड़ा कारण पिता की बुरी आर्थिक स्थिति होती है। कुछ पैसों के लिए तथा धन के लोभ में 15 साल की बच्चीयों को 40-45 साल के बूढ़े के साथ शादी कर दी जाती है परंतु इसका विरोध किया गया जिससे 19 वीं सदी में स्त्रियों के शिक्षित होने से अनमेल विवाह पर कुछ रोक लगी स्त्रियाँ अब जागृत होने लगी है। स्त्री पर होने वाले अन्याय-अत्याचार वह शिक्षित होने तक समाप्त नहीं हो सकता। स्त्रियों की शिक्षा के लिए महर्षि कर्वे ने 1907 में महिला विद्यालय स्थापित किया, आर्य समाज ने कई जगह स्त्री विद्यालयों का निर्माण करवाया गया जिसने स्त्री शिक्षा को बहुत प्रेरित किया। स्त्रियाँ अब अपने बारे में सोचने लगी थीं। वह अपना अधिकार पाना चाहती थी जिसके लिए उन्होंने एकजुट होकर प्रयास किया तथा नारी संगठन का निर्माण आरंभ हुआ जिसमें ऐनी बेसेन्ट के महत्व को भूलाया नहीं जा सकता। जिन्होंने स्त्रियों को उनकी पहचान दिलाने में जी-जान लगाकर प्रयास किया था। 1917 में ऐनी बेसेन्ट द्वारा संचालित महिला भारतीय संघ। 1924 में लेडी एबरडन तथा लेडी टाटा ने भारतीय

महिला राष्ट्रीय परिषद की स्थापना की। इस प्रकार के संगठनों के निर्माण से बाल-विवाह, सती प्रथा, विधवा विवाह, स्त्री अशिक्षा आदि कुरीतियों के प्रति स्त्री जागृत होने लगी तथा अपना सम्मान प्राप्त करने के लिए कार्यशील होने लगी तथा 20 वीं सदीं तक औरत आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने लगी तथा वह अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरूद्ध खड़ी होने में सक्षम है।

2.4.2 राजनीतिक संदर्भ

राजनीति के क्षेत्र में भी अब औरतें पीछे नहीं है। वह अपनी-अपनी माँगों को लेकर राजनीतिक कार्यों में संलग्न हो रही हैं। 1919 में सरोजनी नायडू, हीराबाई एवं टाटा आदि स्त्रियों के मताधिकार के मांग के लिए इंग्लैड गई थी। श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित 1937 में उत्तर प्रदेश में पहली महिला मंत्री बनी। इंदिरा गांधी को राजनीति के क्षेत्र में कोई नहीं भूल सकता जो स्त्री चेतना की मिसाल है। आज भारत के कई हिस्सों में भारतीय स्त्रियाँ राजनीति में बड़-चड़ कर हिस्सा ले रही है। तथा वह कामयाब राजनीतिज्ञ के रूप में भी सफल हो रही है। तमिलनाडू की जयललिता इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

2.4.3 प्रशासनिक संदर्भ

आज प्रशासन के क्षेत्र में भी औरतें अपनी कामयाबी का डंका बजा रही है। आजादी से पूर्व कोई भी स्त्री आई. पी. एस, आई. ए. एस. नहीं थी। परंतु 1950 में कुमारी अन्ना जार्ज पहली महिला आई. ए. एस. की परीक्षा में सफल हुई तथा अब बहुत सी संख्या में औरते आई. पी. एस, आई. ए. एस जैसे पदों पर विराजमान हैं । औरतें अब डॉक्टर, इंजिनीयर, वैज्ञानिक, कृर्षि पंडित, टेक्नीशियन, कंपनी एग्जेक्यूटिव आदि ऐसे कई क्षेत्रों में भी कार्यशील है। क्योंकि स्त्रियाँ अब आर्थिक रूप से सशक्त है। इसलिए वह अपना जीवन अपनी शर्तों पर जीने के लिए तैयार है।

2.4.4 धार्मिक संदर्भ

धर्म ही है जिसके नाम पर सदियों से औरतों पर अत्याचार किया जाता रहा है। हर धर्म, हर कानून और हर रीति केवल औरतों के लिए पुरुषों के लिए कुछ नहीं। अत्याचारी पुरुष की सेवा औरत का धर्म, बच्चों की परवरिश औरत का धर्म, परिवार के लिए त्याग औरत का धर्म आदि सभी कुछ औरतों के लिए ही हैं। धर्म के नाम पर औरत को पुरुषों का गुलाम बना दिया गया। पति चाहे कितने भी विवाह करे परंतु पत्नी मात्र पतिव्रता होनी चाहिए। पति का चरित्र नहीं रहता। लेकिन जब स्त्री किसी पुरुष से बात करती है तब मात्र बात करने से उस स्त्री का धर्म नष्ट हो जाता है। सभी धर्म औरतों के लिए ही क्यों? शोषण की गाथा यही समाप्त नहीं होती। कई ऐसे भगवानों के मंदिर है, जहां औरतों के प्रवेश पर निषेध है। ऐसे मंदिरों में औरतों के जाने से भगवान अपवित्र हो जाते हैं। पवित्र केवल पुरुष है जो कहीं भी जा सकते हैं। कई तीर्थ स्थान, मठों आदि पर औरतों का देह व्यापार होता है जहाँ मनुष्य अपने दुष्कर्म मिटाने व पापों का प्रायश्चित करने जाते हैं। वहां स्त्रियों के साथ बलात्कार किया जाता है। तथा स्त्रियाँ समाज के डर से सदैव चुप रहती है। परंतु आज समय बदल गया है औरतों ने आवाज उठाना शुरु कर दिया है, तथा धर्म की आड़ में किये जाने वालों पापों के प्रति सजग हो रही है। स्त्री शिक्षा के कारण वह यह जानती है कि क्या अच्छा या क्या बुरा है स्त्रियों ने भी धर्मिक गतिविधियों में भाग लेना शुरु कर दिया है जिसपर पुरुषों का एकाधिकार था। साधवी ऋतंरा द्वारा वृदांवन में चलाया जा रहा संस्थान इसका प्रमाण है। फिर भी धर्म के क्षेत्र में स्त्री की स्थिति में अभी भी बहुत से सुधार लाना शेष है।

2.4.5 साहित्यिक संदर्भ

स्त्रियाँ पहले सभी अत्याचारों को चुप-चाप सह लेती थी। परंतु जब वह अत्याचारों के असहनीय पीड़ा का बोज नहीं उठा पाई तो उन्होंने लेखनी को अपना हथियार बनाया तथा लेखन के माध्यम से अपनी स्थिति तथा पीडा के विरूद्ध आवाज उठाना आरंभ किया तथा साहित्य के क्षेत्र में एक चिंगारी की भाँति प्रवेश किया। जिसका सबसे बड़ा उदा है फ्रांस लेखिका सीमोन द बोउआर, जिसने स्त्री मुक्ति के पक्ष में आवाज उठाई। उनकी पुस्तक 'द सकेंन्ड सेक्स' सन् 1949 में प्रकाशित हुई। जिसने साहित्य जगत में तहलका मचा दिया। उनका कहना है 'स्त्री अमीर हो या गरीब श्वेत हो या श्याम, अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी।' इन्होने बताया कि स्त्रियाँ कमजोर नहीं है, उन्हें पुरुषों द्वारा कमजोर बनाया जाता है। उन्होंने नारी को पुरुष द्वारा बांधी गई बेड़ियों से मुक्त करने की आवाज़ उठाई। जिससे प्रेरित होकर भारतीय स्त्रियों ने भी साहित्य के माध्यम से अपने हकों को सामने रखा। स्त्री लेखिकाओं ने स्त्री पक्ष के सभी छोरों को प्रस्तुत किया तथा उसके दर्द को आवाज प्रदान की। जिससे साहित्य जगत में स्त्री विमर्श, नारीवाद जैसे सिद्धांत सामने आने लगे तथा स्त्रियों के बारे में सोचा जाने लगा। स्त्री की अस्मिता, पहचान, आदि पर प्रश्न खड़े होने लगे। नारी को गंभीरता से लिया जाने लगा। नारी की समस्याओं तथा उसके समाधान पर चिंतन किया जाने लगा। साहित्य हमारे जीवन का दर्पण है। तथा इस दर्पण में अब स्त्री अपना रूप सौंदर्य तथा छवी को पहचान रही है। मन्नू भंडारी, उषा प्रियबंदा, प्रभा खेतान आदि लेखिकाओं ने तो जैसे स्त्री के सारे जीवन को खोल के हमारे सामने रख दिया हो जैसे उन्होंने प्रत्येक स्त्री का जीवन जीया है तथा वह उन स्त्रियों तथा पुरोषों से स्वयं की पहचान करा रही हों।

उपरोक्त के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी स्त्री ने आगे बड़ना शुरु किया है उसने आर्थिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर पुरुषों के समक्ष ठहरने की हिम्मत दिखाई है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि आज स्त्री ने सभी क्षेत्रों में पुरुषों के समान अपने अस्तित्व की पहचान पा रही है। वह अपने विकास की ओर अग्रसर है। जिसमें हमारे भारत के संविधान ने भी बहुत साहयता की है। संविधान में स्त्रियों के अधिकारों को सुरक्षित किया गया है। हर स्त्री को शिक्षा का अधिकार प्राप्त है। घरेलू हिंसा, बलात्कार, बाल विवाह जैसे गंभीर गुनाहों के लिए कड़े कानून बनाये गये हैं। फिर भी आज स्त्रियाँ पूरी तरह से अंधेरे से बाहर नहीं आ पायी है। दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, यौण शोषण जैसे बुराईयों ने स्त्रियों को पुरूषों ने पाँव के नीचे दबा कर रखा है। शिक्षा के माध्यम से हम आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो कर हम समाज की इन बुराईयों से बाहर निकल सकते हैं, जिसके लिए हमारी सरकार निरंतर प्रयत्नशील है।

तृतीय अध्याय

तृतीय अध्याय

जयश्री रॉय के 'कायान्तर' कहानी संग्रह में स्त्री चेतना के स्वर

3.1. परंपरागत विवाह प्रथा और स्त्री चेतना

3.2. दहेज प्रथा

3.3. बलात्कार के विरुद्ध स्त्री सोच में परिवर्तन

3.4. पर्दा प्रथा का विरोध

3.5. वैधव्य और श्रृंगार के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन

3.6. रंग भेद से प्रभावित स्त्री और उसके विरुद्ध विद्रोह की भावना

3.7. स्त्री की शिक्षा प्राप्ति के प्रति जागरुकता

3.8. पाश्चात्य संस्कृति का भारतीय स्त्री जीवन पर प्रभाव

    3.8.1. लिव इन रिलेशनशिप और भारतीय स्त्री

    3.8.2. खान-पान एवं वेश-भूषा

3.9. बाजारीकरण का स्त्री पर प्रभाव

3.10. बाँझपन के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन

3.11. अधिकारों के प्रति सचेत स्त्री

3.12. पुरुषों के दोहरे आचरण से सचेत स्त्री

3.13. आर्थिक चेतना सम्पन स्त्री

3.14. ममत्व की शक्ति

तृतीय अध्याय

जयश्री रॉय के 'कायान्तर' संग्रह में स्त्री चेतना के स्वर

आदिम अवस्था तथा उसके बाद के समय में नारी अपनी अहमियत से अपरिचित या अनभिज्ञ रही। समय के साथ-साथ पुरुषसत्तात्मक सामंती व्यवस्था में नारी सामाजिकता के हाशिए पर भी मात्र 'भोग-वस्तु'के रूप में उपस्थित रही। फिर आधुनिक काल में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप पूंजीवादी व्यवस्था पनपने लगी और संक्रमण के इस दौर में परंपरा के मोह और आधुनिकता के आग्रह के परिणामस्वरूप द्वंद्वात्मक स्थिति उत्पन्न हुई। इस द्वन्द्वात्मक संक्रामक स्थिति में उत्पन्न अंतर्विरोधों एवं विडम्बनाओं का सर्वाधिक शिकार नारी ही हुई। आधुनिकता के चलते जहाँ नारी की परम्परागत बाह्य जकडन में शिथिलता आयी वहीं आतंरिक जकडन को काट फेंकने के पर्याप्त अवसर भी उपस्थित हुए। सूक्ष्मता से निरीक्षण करने पर आधुनिकता प्रदत्त यह शिथिलता एवं अवसरवादिता भी एक स्तर पर व्यवस्थायी दोहन की इजाफेदारी तक ही सीमित नज़र आती है। फिर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि आधुनिकता ने नारी को आत्मजागरण के लिए बहुत से अवसर प्रदान किये।

भारतवर्ष की राजनीति में स्वतंत्रता के बाद शिक्षा, ज्ञान, विज्ञान एवं यंत्रज्ञान का प्रचार प्रसार हुआ। जिससे स्त्रियों में स्वयं के बारे में सोचने की चेतना जाग्रत होने लगी। 20 वीं सदी के उत्तरार्द्धकालीन हालातों के मद्देनजर नारी की आत्मसजगता में बढ़ोतरी होती रही। वह अपने मानवोचित बुनियादी हक़-अधिकारों, अस्तित्व, अस्मिता, व्यक्तित्व की स्वतंत्रता, समानता, न्याय आदि सार्वभौम मानवीय अधिकारों की अनिवार्यता को महसूस करते हुए उसकी प्राप्ति के लिए नई जमीन की तलाश करने लगी।

भारतीय साहित्य नारी जीवन के इन्हीं उतार-चढ़ावों का प्रमाणिक दस्तावेज रहा है, भारतीय साहित्यकारों ने अपने आस-पास के वातावरण में स्त्री की जो स्थिति देखी

उसी को अपने शब्दों में यथार्थ रूप में लिख डाला। इस दिशा में महिला लेखिकाओं का मौलिक योगदान रहा क्योंकि शायद वह स्वयं स्त्री थी इसलिए उन्होंने स्त्री मुक्ति की आवाज को बुलंद कर सकी। इस सन्दर्भ में कमलेश्वर की निम्नलिखित पंक्तियाँ विचारणीय हैं- “आधुनिक नारी अब पूरी गरिमा, देह सम्पदा और वास्तविक सम्मान के साथ आयी है।”[1]

भारत में नारी जागरण या नारी स्वतंत्रता सम्बन्धी जैसे-जैसे प्रयास हुए, वैसे-वैसे नारी में ‘स्व’ की भावना जागृत होने लगी। महिला लेखिकाओं ने स्त्रिओं में ‘स्व’ की भावना जागरूक करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय लेखिकाएँ अभी भी इस कार्य या आन्दोलन में सुचारू व सक्रीय रूप से प्रयासरत हैं। ऐसी ही एक लेखिका जयश्री रॉय नवीन युवाकथाकार अपने कथासाहित्य के क्षेत्र में स्त्री को केंद्र में रखकर, पुरुषप्रधान समाज की बेड़ियों में फंसी नारी को उनके शोषण से मुक्त कराने और उसकी स्वतंत्र अस्मिता को स्थापित करने का प्रयास करती हुई स्त्री चेतना का विकास कर रही है। उन्होंने अपनी रचनाओं में ऐसी स्त्री की छवी अंकित की है जो स्वयं के बारे में जानती है, जो आत्मसजग है और स्वाधीनता की बात करती है, जो दर्द से अपने संघर्ष और आत्मचैतन्य को महसूस करती है और अपनी लड़ाई स्वयं लड़ती है।

जयश्री रॉय के ‘कायान्तर’ कहानी संग्रह में स्त्री चेतना, स्त्री जीवन की व्यथा और अधिकारों की प्राप्ति के लिए स्त्री संघर्ष के रूप में चित्रित हुए है। इस चित्रण में स्त्री जीवन से जुड़ी समस्याएँ, संघर्ष, स्वतंत्रता, अधिकार, चेतना, स्वावलंबन एवं आत्मनिर्भरता अस्मिता आदि स्त्री चेतना के कई तथ्य सामने आते हैं। लेखिका ने ‘कायान्तर’ कहानी संग्रह की कहानियों में नारी जीवन को ही केंद्र में रखा है। उन्होंने इस संग्रह में स्त्री जीवन के लगभग सभी संभावित पहलुओं को बड़ी बेबाकी के साथ व्यक्त किया है। उनका यह

[1] कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका, पृ.सं- 18

कहानी संग्रह नारी विषयक चेतनाओं के विविध आयामों से भरा है। जयश्री रॉय के 'कायान्तर' कहानी संग्रह में नारी चेतना के स्वरों को विविध आयामों से निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

3.1 परंपरागत विवाह प्रथा और स्त्री चेतना

भारतीय रूढ़ सामाजिकता के परिप्रेक्ष्य में स्त्री विवाह का महत्त्व असाधारण है, क्योंकि समस्त सामाजिक मान्यताएँ, इज्जत-आबरू, मान-मर्यादा, नैतिकता की जिम्मेदारी का भार अधिकांशतः नारी पर ही छोड़ दिया जाता है। समाज में स्त्री या पुरुष के लिए विवाह संस्कार अनिवार्य माना जाता है। स्त्री के लिए विवाहित होना उसकी जिन्दगी का परम लक्ष्य माना जाता है और उसका अविवाहित रहना स्त्री के भविष्यहीन जीवन की खाई में गिर जाना माना जाता है। लड़की के पैदा होने से ही उसके विवाह की चिंता परिवार की मुख्य समस्या बन जाती है। उसके जन्म लेते ही माता-पिता उसके विवाह के बोझ तले दब जाते हैं। जब घर में पुत्र पैदा होता है तो माता-पिता का लक्ष्य उसे उच्च शिक्षा प्रदान कर उसे उसके पैरों पर खड़ा करना होता है लेकिन जब घर में कन्या पैदा होती है, तो माता-पिता का उद्देश्य शिक्षा प्रदान कर उसे स्वावलंबी बनाना नहीं बल्कि उसमें अच्छे संस्कार, पाकविद्या में प्रवीण कर उसे विवाह योग्य बनाना ही उनके जीवन का अंतिम लक्ष्य होता है। कन्या का विवाह माता-पिता के लिए बोझ है जिसकी चिंता में वे दिन-रात घूटते रहते हैं और ऐसे में वे अपनी बेटी का विवाह किसी भी तरह करने के लिए दिन-रात का सुख-चैन खोकर अपना पेट काट-काटकर पूंजी जमा करते हैं ताकि किसी भी तरह बेटी का विवाह कर दिया जाए। 'काँच के फूल' कहानी में भी हिया के माता-पिता को हिया के विवाह की चिंता लगी है। हिया के घर उसकी बुआ आयी है जो बार-बार हिया के रिश्ते की बात करती है और कहती है -"मेरी नज़र में एक बहुत अच्छा

लड़का है नंदू ...।"[2] माँ भी बार-बार हिया से कहती है "रिजल्ट ख़राब हुआ तो बुआ के लाये रिश्ते में से चुनकर किसी से फेरे डलवा देंगी।"[3] हिया की माँ हिया की फिजूल खर्ची देख उसे कहती है "ऐसे ही फिजूलखर्ची करती रहेगी तो उसके दहेज के लिए कहाँ से पैसे जुड़ेंगे।"[4] दहेज की चिंता बेटी के विवाह के बोझ के कारण ही उत्पन्न होती है। उसी तरह 'काली-कलूटी' कहानी में लावण्या की माँ भी दिन-रात लावण्या के विवाह के लिए परेशान रहती है- "अपनी अन्य दो बेटियों का विवाह कर अब वे रात-दिन अपनी छोटी बेटी के विवाह को लेकर परेशान रहा करती थीं।"[5]

बेटी का विवाह करना माता-पिता के लिए उनके जीवन जीने का आधार एवं लक्ष्य बन जाता है। विवाह प्रथा के सन्दर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं- "औरत को गुलाम बनाने की मुहीम का सफल पड़ाव है विवाह की प्रथा तभी से औरत में हीन भावना, पति के प्रति समर्पण, उसके प्रति वफादारी, स्वयं को दासी और उसे स्वामी मानने की भावना भर दी गई और इन सब मर्यादाओं को चाहे-अनचाहे उल्लंघन को ही स्त्री का अपराध मानना शुरू कर दिया गया।"[6] परिवार वाले किसी भी तरह बेटी का विवाह निपटाकर दम लेना चाहते हैं। चाहे उसमें लड़की की इच्छा हो या न हो। हमारे समाज में विवाह के लिए लड़की की मंजूरी का कोई मोल नही है। सिर्फ पुरुष की पसंद को महत्त्व दिया जाता है। पितृसत्तात्मक भारतीय समाज व्यवस्था में रूढ़िवादी पैमानों के चलते विवाह संस्कार में स्त्री की इच्छा-अनिच्छा का कोई मोल नहीं है। इस सन्दर्भ में महादेवी वर्मा लिखती हैं-

[2] जयश्री रॉय - काँच के फूल 'कायान्तर', पृ.सं - 15

[3] जयश्री रॉय -काँच के फूल 'कायांतर' ,पृ.सं – 16

[4] वही पृ.सं – 17

[5] जयश्री रॉय –'कायान्तर' काली कलूटी, पृ.सं – 72

[6] रमणिका गुप्ता – स्त्री विमर्श : कलम और कुदाल के बहाने, पृ.सं – 45

“उसकी इच्छा-अनिच्छा, स्वीकृति-अस्वीकृति, योग्यता-अयोग्यता, की न कभी किसी ने चिंता की और न करने की आवश्यकता अनुभव किया।”[7]

‘दर्दजा’ कहानी की राहिला पहली शादी टूटने के बाद पढना चाहती थी। वह दूसरी शादी नहीं करना चाहती थी। फिर भी उसके पिता तथा भाई ने राहिला से दुगनी उम्र के पुरुष के साथ उसकी जबरदस्ती दूसरी शादी करा दी। राहिला अपनी सहेली जानवी से अपनी नाकामयाब शादीशुदा जिन्दगी से दुखी होते हुए कहती है- “शादी में मर्जी जरूरी है, मगर औरत खुद अपनी शादी तय कहाँ करती है! करना तो परिवार वालों को ही होता है। जो अपनी मर्जी से शादी करती है उसे अच्छी औरत नहीं समझा जाता।”[8] पुरुष चाहे कैसा भी हो फिर भी विवाह के लिए उसकी सहमती आवश्यक है। लेकिन स्त्री एक गाय के सामान है, उसे जहाँ चाहे बाँध दो। ‘काली-कलूटी’ की नायिका का उसके काले रंग के कारण कभी उससे उसकी इच्छा पूछी नहीं जाती, पसंद-नापसंद भी नहीं। मोटे, टींगने, काले, कुरूप पुरुष उसके रूप-गुण पर निःसंकोच टिप्पणी करते हुए उसका उपहास उड़ाते और वह गूंगी-बहरी बनी रहती।

स्पष्ट है कि भ्रष्ट व्यवस्था के पारंपरिक पैमाने के चलते स्त्री विवाह को बोझ समझा जाता है जिसमें लड़की की इच्छा-अनिच्छा का निरंतर दमन एवं हनन ही होता रहा है। लेकिन अब स्त्रियाँ चुप नहीं रहना चाहती तथा ‘काँच के फूल’ कहानी की हिया तथा ‘तुम आये तो’ कहानी की चाँपा जैसी आत्मचेता लडकियाँ अपनी विवाहगत इच्छा अनिच्छा पर दृढ़ता से बने रहना चाहती हैं। जयश्री रॉय विवाह संस्कार में स्त्री इच्छा को महत्त्व देती है तथा उनकी कहानी ‘काँच के फूल’ की नायिका हिया यूँही किसी भी पुरुष के साथ शादी के लिए तैयार नहीं है। जयश्री रॉय के ‘काँच के फूल’ कहानी की नायिका हिया

[7] महादेवी वर्मा – श्रृंखला की कड़ियाँ, पृ.सं -52

[8] दर्दजा – कायान्तर, जयश्री रॉय पृ.सं.52

अपनी शादी की बात सुन कर वह रूढीवादी परम्परागत विवाह प्रथा के विरूद्ध आवाज़ उठाते हुए कहती है - “शादी और इनती जल्दी! कभी नहीं ! एकबार शादी की गाँठ पड़ी नहीं कि जिन्दगी भर के लिए रसोई की काल कोठरी में बंद हो जाना पड़ेगा ! अभी तो पढ़ना है, फिर किसी मल्टीनेशनल में नौकरी करनी है, फारेन टूर पर जाना है, दुनिया देखनी है, जमकर रोमांस करना है तब कहीं जाकर शादी ! वह भी किसी अम्बानी सिंघानिया से।[9]” हिया के द्वारा कहे गये शब्दों से यह ज्ञात होता है कि नायिका विवाह संस्कार के प्रति चेतना संपन्न है। बदलते हुए समय के साथ स्त्री को भी बदलना होगा तथा उसे यह समझना होगा कि विवाह में उसकी सहमती बहुत आवश्यक है। स्त्री को अपने अधिकारों के प्रति चेतना जागृत करनी होगी। जयश्री रॉय हिया के माध्यम से समस्त स्त्री समाज को यह बोध कराना चाहती है कि अब स्त्री परंपरागत विवाह प्रथा का अन्धानुकरण नहीं करेगी तथा वह अपना विवाह अपनी इच्छानुसार करेगी।

3.2 दहेज प्रथा

हमारे समाज में बेटी को बोझ माना जाता है। बेटी के जन्म लेते ही सारा परिवार उसे कोसने लगता है। जन्म लेते ही परिवार वाले इस चिंता में डूब जाते हैं कि बेटी के विवाह के लिए दहेज कहाँ से जुटाएंगे। स्पष्ट है कि बेटी को बोझ समझने का मुख्य कारण दहेज प्रथा है। “दहेज से अभिप्राय अपनी बेटी की शादी में दुल्हन के साथ दूल्हे के परिवार जनों को दिया जाने वाले नकद, आभूषण, उपकरण, फर्नीचर, इत्यादि वस्तुओं से हैं।”[10] हमारे देश में दहेज के लिए दुल्हन के परिवार पर दबाव डाला जाता है माँग पूरी न होने पर दुल्हन को दहेज प्राप्ति का माध्यम बनाकर उस पर अत्याचार किया जाता है। ताकि माँ-बाप अपनी बेटी को बेचने के लिए दहेज देने पर मजबूर हो जाए। आधुनिकतावाद के

---

[9] जयश्री रॉय –'कायान्तर' काँच के फूल, पृ.सं – 17

[10] शुभ्रा परमार – नारीवादी सिद्धांत और व्यवहार, पृ.सं – 208

इस दौर में शिक्षा के इतने प्रचार-प्रसार एवं मानव विकास के तमाम नारों के बावजूद दहेज प्रथा एक गंभीर समस्या है। आज भी समाचार पत्रों के पन्नों में स्त्री के बढ़ते हुए क़दमों की ख़बरों की बजाय दहेज उत्पीड़नों एवं हत्याओं से रंगे पन्ने ही देखने को मिलते हैं। दहेज हत्या के संदर्भ में क्षमा शर्मा लिखती है कि "उन्नीसवी सदी में औरत सती होती थी अपने पति की मृत्यु के बाद, लेकिन आज दहेज की बलि-वेदी पर पति की उपस्थिति में सैकड़ों औरतें 'सती' हो रही है।"[11] समाज में फैले दहेज कुप्रथा और उसके अमान्य रूप को दर्शाना तथा उसके विरुद्ध स्त्री चेतना जागृत करने की भावना को व्यक्त करना जयश्री रॉय की कहानियों का सरोकार है। दहेज कुप्रथा की समस्या को जयश्री रॉय ने पाठकों के समक्ष रखने का प्रयत्न किया है। दहेज प्रथा का विकृत रूप जयश्री रॉय की कहानी 'कायान्तर' में देखने को मिलता है। 'कायान्तर' कहानी की ललिता, को फूलमती पर होते घरेलू अत्याचारों को देखकर उसे अपनी सहेली मधुमिता की याद आती है जो बहुत चंचल स्वाभाव की थी। लेकिन मधुमिता की शादी होने के बाद वह बिलकुल बदल जाती है। उसने अब हँसना बोलना सब छोड़ दिया था। वह बार-बार ससुराल से भागकर आ जाती थी क्योंकि दहेज के लिए उसे प्रताड़ित किया जाता था। फूलमति की गोरी देह पर उसके बर्बर, विकृत पति के दांत- नाखूनों के साथ ननद- सास के द्वारा दिए गये जख्म चीख-चीख कर इस बात की गवाही दे रहे थे। लेकिन फूलमती के माता-पिता समाज का हवाला देकर उसे वापस भेज देते। अंततः इसका परिणाम यह होता है कि "आखिर मधुमिता के ससुराल से वह चिट्ठी आयी थी जिसका आना लगभग तय था मधुमिता अपने ससुराल में खाना बनाते हुए स्टोव के फटने से जल कर मर गयी। मधुमती के माँ-बाप को उसके अंतिम दर्शन तक नहीं करने दिया गया था। सब जानते थे, मधुमिता को मार दिया गया है, मगर क्या

[11] क्षमा शर्मा – स्त्री का समय, पृ.सं – 38

हुआ? कुछ भी तो नहीं .... बस एक और लड़की... लड़कियों की इस देश में कोई कमी थोड़ी न है ! साल घुमते मधुमिता के पति ने फिर शादी रचा ली थी।"[12]

ललिता की उपरोक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मधुमिता दहेज के लालच का शिकार हो जाती है तथा उसे स्टोव की आग से जलाकर मार दिया जाता है तथा अभी चिता की आग ठंडी भी नहीं हुई थी कि उसका पति दो महीनों में ही फिर दहेज के लालच में दूसरी शादी कर लेता है। ना जाने कितनी ही औरतों को दहेज का शिकार बनाकर मौत के घाट उतार दिया जाता है। दहेज का कीड़ा हर जाति तथा धर्म में घुसा हुआ है चाहे वह हिंदू समाज हो या मुस्लिम समाज। हर धर्म की स्त्री इसके चपेट में आयी हुई है लेकिन सबका दहेज लेने का तरीका अलग है। इस बात को स्पष्ट करते हुए 'दर्दजा' कहानी की नायिका 'राहिला' अपनी सहेली जानवी से कहती है कि दहेजप्रथा का प्रचलन उनके धर्म में भी है जिसके आड़ में औरत के जिस्म का सौदा किया जाता है, वह कहती है - "ओल्ड टेस्टामेंट तथा कुरान में दहेज के एक ही लफ्ज मेहर का इस्तेमाल हुआ है।"[13] "तब के ज़माने में दहेज का सीधा मतलब वह कीमत होती थी जो एक औरत को उसके जिस्म के इस्तेमाल के एवज में अदा की जाती थी। इस बात का उदहारण कुरान के सुरा 4 के आयात 33.50 और 24.25 में देखे जा सकते हैं।"[14] उसी तरह राहिला जानवी को बताती है कि बाइबिल में भी दहेज के रूप में औरत के जिस्म की कीमत लगाई जाती थी। "बाइबिल के भी 22.29 सफे में लिखा है कि यदि कोई मर्द किसी औरत से ताल्लुकात बनाता है तो उसे इस औरत के बाप को चांदी के 50 सिक्के देकर उससे शादी करनी पड़ेगी।"[15] उपरोक्त कथन से यह ज्ञात होता है कि प्रारंभ में मर्द औरत के जिस्म के लिए

---

[12] जयश्री रॉय -कायान्तर,पृ.सं – 140

[13] जयश्री रॉय -कायान्तर, पृ.सं – 50

[14] वही पृ.सं – 50

[15] वही पृ.सं – 51

दहेज देता था और अब औरत के उसी जिस्म को प्राप्त करने के लिए लड़की के परिवार वालों को दहेज के लिए मजबूर करता है। राहिला बताती है कि "कुरान में भी दहेज के लिए कई जगह उजूर लफ्ज का इस्तेमाल हुआ है। हिन्दुस्तान में इसी से मिलता-जुलता लफ्ज उजरत का इस्तेमाल होता है।"[16] इंसानों ने तो जाति-धर्म, लिंग, रंग आदि सभी में भेद किया लेकिन दहेज कुप्रथा ने किसी जाति, धर्म, लिंग, रंग आदि में कोई भेद नहीं किया। यह कुप्रथा सभी क्षेत्रों में समान रूप से व्याप्त है तथा सदियों से स्त्री इसका शिकार बनती रही है। लेकिन आज स्थिति बदल रही है क्योंकि अब स्त्री शिक्षा के महत्त्व को समझते हुए शिक्षित है इसलिए उस में अब दहेज कुप्रथा के विरुद्ध आवाज उठाने का साहस है। वह जानती है कि अगर दहेज कुप्रथा के विरुद्ध लड़ने का साहस नहीं है तो सिर्फ अपनी परिवार के मान-सम्मान व कुल मर्यादा तथा बच्चों के लिए। वह जुल्म के आगे चुप्पी साध लेती है और जिस दिन वह अपनी चुप्पी थोडेगी उस दिन नया सूर्योदय होगा स्त्री जीवन का। जयश्री रॉय भी यह जानती है कि स्त्री के अत्याचार का कारण कुछ हद तक स्त्री की अपनी चुप्पी है। जब वह अपनी चुप्पी छोड़ दहेज प्रथा के विरुद्ध आवाज उठाएगी तो वह उसमें स्वयं को सफल पायेगी। जयश्री रॉय दहेज प्रथा के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद करते हुए 'कायान्तर' की ललिता के माध्यम से स्त्री में आत्मचेतना जाग्रत करने का प्रयत्न करती है। जयश्री रॉय ललिता के माध्यम से विद्रोह करते हुए कहती है। "मधुमिता की मौत के जिम्मेदार क्या सिर्फ उसके ससुराल वाले ही थे? अन्याय दुनिया करती है और खुश रहती है, उस पर तो बस अपनी चुप्पी भारी पड़ती है।"[17] इन पंक्तियों के माध्यम से जयश्री रॉय स्त्रियों में यह चेतना जाग्रत करना चाहती है कि स्त्री को अपने अधिकारों के लिए स्वयं आवाज़ उठाना है। उसे खामोश नहीं रहना है, नहीं तो वह मधुमिता की तरह अत्याचार का शिकार होती रहेगी और अत्याचार करने वाले पाप करके भी खुलेआम

[16] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं - 51

[17] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं – 140

घुमते रहेंगे। आज भारतीय संविधान व न्याय प्रणाली स्त्रियों की सुरक्षा के लिए अनेक क़ानून बना रहा है। दहेज प्रथा के विरूद्ध भी भारतीय संविधान में क़ानून निर्धारित किये गये हैं। "1961 में दहेज प्रतिरोध अधिनियम के तहत और बाद में सहारा 304 बी और भारतीय दंड संहिता अईपीसी की धारा 498 A के द्वारा निषेध किया गया है।"[18] दहेज प्रथा से बचने के लिए महिलाओं को पढ़ा-लिखा कर आत्मनिर्भर बनना होगा। समाज के दृष्टिकोण में बदलाव लाना होगा। महिलाओं को समाज में अपनी छवी में बदलाव स्वयं को ही लाना होगा।

3.3 बलात्कार के विरुद्ध स्त्री सोच में परिवर्तन

बलात्कार स्त्री सम्बंधित सभी अपराधों में सबसे बड़ा अपराध है। बलात्कार ने अब तक एक राष्ट्रीय समस्या का रूप ले लिया है। बलात्कार की परंपरा तभी से चली आ रही है जबसे पुरुष प्रधान समाज बना अर्थात् जब से पितृसत्तात्त्मक सत्ता चलन में आई। पुरुष प्रधान समाज में पुरुषों ने हमेशा स्त्री को अपने पाँव तले दबा कर रखना चाहा। स्त्री को यह महसूस करवाया कि उसका पुरुष से भिन्न अपना कोई अस्तित्व नहीं है तथा वह सदैव पुरुष की दया से पल रही है और उसे सदैव पुरुष पर आश्रित रहने के लिए मजबूर किया। जब किसी स्त्री ने इसका विरोध किया तो पुरुषों ने उसे कुचल दिया। जिसका एक दुष्परिणाम बलात्कार है। इस सन्दर्भ में रमणिका गुप्ता लिखती हैं - "औरत को पुरुष की संपत्ति होने की अवधारणा के चलते ही उससे बलात्कार कर पुरुष दूसरे से बदला लेता है। यानी औरत की इज्जत जो यौन-सुचिता में शामिल है, पुरुष संपत्ति मानी जाती है अर्थात औरत की अपनी इज्जत की कोई अवधारणा ही नहीं है।"[19]

---

[18] नारीवादी सिद्धांत और व्यवहार- शुभ्रा परमार, पृ.सं – 209

[19] रमणिका गुप्ता -स्त्री विमर्श 'कलम और कुदाल के बहाने, पृ.सं – 44

जयश्री रॉय ने अपनी कहानियों में बलात्कार की इस समस्या को पाठकों तक पहुँचाने का प्रयास किया है तथा बलात्कार के विरोध में स्त्री चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है। आधुनिक समाज में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में बलात्कार की समस्या और गंभीर होती जा रही है क्योंकि नवयुवक व युवतियाँ लेट नाईट पार्टी में शराब व नशीले पदार्थों का सेवन करना अपनी शानोशौकत समझते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप युवक नशे की हालात में हवस का शिकार बन बलात्कार जैसे जघन्य अपराध कर बैठते हैं। 'काँच के फूल' कहानी में हिया जब परीक्षा के बाद पुनः कॉलेज लौट कर आती है तो उसे ऐसी दुर्घटना का पता चलता है जिसे सुनकर वह स्तब्ध रह जाती है।

"परीक्षा के बाद फिर एक दुर्घटना घटी थी। बी.ए .दूसरे वर्ष में पढने वाली काम्या महाजन अपने तीन-चार दोस्तों के साथ एक पार्टी में गयी थी जहाँ उसके कोल्ड ड्रिंक में कोई नशीली चीज मिलकर कुछ लड़कों ने उसके साथ बलात्कार किया था। यही नहीं बलात्कार के बाद गला घोंटकर उसे जान से मार दिया था। आंजुना बीच में दूसरे दिन उसकी लाश पायी गयी थी। इस घटना से कॉलेज के बच्चों में सनसनी फैल गयी थी। किस बेरहमी से उसकी जान ली गयी थी।"[20] उपरोक्त कथनों से यह ज्ञात होता है कि आज की युवा पीढ़ी नशीली पदार्थों के सेवन के परिणामस्वरूप गलतराह की तरफ चल पड़ी है। बलात्कार करने के बाद स्त्री की हत्या आजकल आम बात हो गयी है। अपराधी पहले अपराध करता है फिर उस गुनाह को छुपाने के लिए हत्या की राह चुन लेता है। स्त्री हमेशा से पुरुष के हाथों शोषित होती रही है। किसी न किसी तरह से पुरषों ने स्त्री को प्रताड़ित किया गया है और जब कभी कोई स्त्री अपने प्रति हो रहे अन्याय के विरु]द्ध खड़ी होने का प्रयत्न करती है तो सारा पुरुष समाज उसे सजा देने के लिए तत्पर हो उठता है। स्त्री को सबक सिखाने के लिए पुरुष उसके चरित्र का हनन करता है ताकि जो स्त्री अपने

[20] जयश्री रॉय - कायान्तर, काँच के फूल पृ.सं-25

चरित्र का गौरव दिखाकर समाज के सामने उठने का प्रयत्न करती है तब पुरुष उसी चरित्र को तार-तार कर स्त्री का बलात्कार कर स्त्री को चुप करा देता है। क्योंकि पुरुष यह अच्छे से जानता है कि स्त्री को सजा देने का उपाय उसके साथ बलात्कार है। क्योंकि कोई भी स्त्री कभी बलात्कार के विरुद्ध केस दर्ज नहीं करा पाती है, उसका कारण न्याय माँगने वाली स्त्री से न्याय के मंदिर में ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं कि वह लज्जा और अपराध बोध से टूट जाती है। सुसान ब्राउन मिलर इस अपराध के सन्दर्भ में अपने विचार इस तरह प्रकट करती हैं-"बलात्कार अपराध नहीं है, बल्कि पुरुषों द्वारा औरतों को इस खतरे का एहसास दिखाकर लगातार भयभीत रखना भर प्रतीत होता है।"[21]

जयश्री रॉय की कहानी 'दर्दजा' में राहिला अपनी बेटी माही को पढ़ाना चाहती है तथा उसे अपने पैरों पर खड़ा करना चाहती है। राहिला का परिवार तथा उसका सारा मुस्लिम समाज इस बात के खिलाफ है वह शिक्षा को स्त्री के लिए अच्छा नहीं मानते। जब राहिला इस बात का विरोध करती है तो मुस्लिम समाज के सभी बड़े-बड़े कट्टमुल्ला तथा कुंद जेहन तालीबानी उसे धमकी देते हैं कि वह स्त्री शिक्षा की जिद्द को छोड़ दे नहीं तो खतरनाक अंजाम होंगे। फिर वही हुआ जो वह कर सकते थें। राहिला जानवी से दुखभरे शब्दों में कहती है -"और फिर वही हुआ जो वे कायर बेहतर कर सकते थे, मुझे सबक सिखाने के लिए मेरे साथ बलात्कार किया गया, सामूहिक बलात्कार, एक औरत को सजा देने का उनकी नजर में सबसे नायाब तरीका।"[22] जानवी राहिला की बातों को सुनकर उससे कहती है कि तुम ने बलात्कारियों के खिलाफ कुछ नहीं किया, तब राहिला कहती है -"उन दरिंदों को सजा दिलवाने के लिए चार चश्मदीद गवाह होते तो बलात्कार होता ही क्यों? क्या कोई गवाह खड़ा करके गुनाह करता या करवाता है? फिर अगर इल्जाम

[21] सुसान ब्राउन मिलेर -अगेंस्ट आवर विल मेन वीमेन एंड रेप , पृ.सं – 1975

[22] जयश्री रॉय -कायान्तर,दर्दजा, पृ.सं- 54

साबित नहीं कर पाती तो उलटे मुझे ही सब मिलकर मेरा जीवन नरक कर देते। अधिकतर औरतें इसी डर से चुप रह जाती है।"[23]

राहिला के माध्यम से जयश्री रॉय यह स्पष्ट करती है कि स्त्री बलात्कार के विरुद्ध इसलिए आवाज नहीं उठाती क्योंकि न्याय मंदिर में उनसे गवाह पूछे जाते हैं, उनसे बलात्कार कैसे हुआ उसका सारा दृश्य पूछा जाता है तथा उनसे ऐसे प्रश्न पूछे जाते है जिनका उत्तर देने में स्त्री असमर्थ होती है। बलात्कारी तो एक बार बलात्कार करता है लेकिन अदालत में वकील शोषित स्त्री से अपने गंदे प्रश्न पूछकर बार-बार बलात्कार करता है। इसी डर से नारी चुप रह जाती है और कई बार तो इस पुरुष प्रधान समाज में पुरुष बहती गंगा में हाथ धोने के लिए तैयार रहते हैं तथा पुलिस भी पूछताछ के बहाने बलात्कृत स्त्री के साथ बलात्कार करती है। 'कायान्तर' कहानी की फूलमती अपने पति बिगेसर की मृत्यु से पूरी तरह टूट चुकी है। राम सिंघासन (जमींदार) ने बिगेसर पर चोर का आरोप लगाकर, डाकू घोषित कर उसे मरवा डाला था। यह बात सब जानते थे लेकिन सब चुप-चाप तमाशा देख रहे थे। ऐसे में विधवा अकेली स्त्री को देखकर सब फूलमती का फ़ायदा उठा रहे थे। ललिता जब अपनी सास से फूलमती के बारे में पूछती है तो उसकी सास फूलमती के साथ किए जा रहे बलात्कार व अन्याय के बारे में इस प्रकार बताती है - "फूलमती को थानावाला साब पूछताछ के लिए सुबह जीप में उठा ले गया है। उस दिन फूलमती अपने घर नहीं लौटी थी। सारा गाँव उसके नाम पर थू-थू कर रहा था.... अब हर दो दिन में फूलमती के द्वार पर पुलिस की जीप आकर रुक रही थी।"[24] कमजोर व दलित स्त्रियों के साथ बलात्कार के सन्दर्भ में आशारानी व्होरा ने ठीक कहा था- "प्राकृतिक नियमों द्वारा अमीर का गरीब पर, बलवान का कमजोर पर, चालाक का कम समझ वाले

---

[23] वहीँ पृ.सं-145
[24] जयश्री रॉय -'कायान्तर', पृ.सं -145

व्यक्ति पर हावी होने का प्रयत्न है।"[25] स्त्रियाँ शोषण का शिकार इसलिए होती है क्योंकि वह कमजोर समझी जाती है तथा पुरुष शारीरिक रूप से बलवान समझा जाता है। 'कुहासा' कहानी की पारूल अपने पति की दूसरी शादी की बात सुन दुःख में डूबी बगीचे में बेसुध पेड़ की डाल से सट कर बैठी होती है, तभी पगला राधे वहाँ आ जाता है और पारूल की अस्त-व्यस्त हालत को देखकर, राधे पारूल को दबोच लेता है तथा उसके साथ बलात्कार कर उसे अधमरी हालत में छोड़ भाग जाता है। पारूल टूटी हुई गुडिया की तरह खेत के आल में पड़ी रह जाती है। पारूल को जब होश आता है तो वह अपनी इज्जत लूटने पर आत्महत्या के बारे में सोचती है। "उसका तो चरम अनिष्ठ हो गया। अब वह कौन-सा मुख लेकर अपने पति के पास जाएंगी ! क्या लज्जा, क्या अपमान की बात गो... ।"[26]

स्त्रियाँ अपनी इज्जत खोने पर समाज में उनकी अवहेलना तथा तिरस्कार के बारे में सोच कर आत्महत्या को ही सही मानती है पारूल कहती है जब इस घटना के बारे में उसके पति को पता चलेगा तो वह उसे अवश्य त्याग देगा वह कहती है "लोग नर्मदा में पड़े सिक्के को भी एक बार उठा लेते हैं, मगर एक लूटी स्त्री को कभी नहीं स्वीकारते।"[27] लेकिन अब समाज की सोच में बदलाव आ रहा है अब दोषी सिर्फ स्त्री को ही नहीं समझा जाता। जयश्री रॉय बलात्कार को एक दुर्घटना समझकर स्त्री को जीवन को नई तरह से शुरू करने की हिदायत देती है। वह मानती है कि बलात्कार में स्त्री का क्या दोष है? क्यों स्त्री आत्महत्या करे? स्त्री को अपनी सोच बदलनी पड़ेगी। जयश्री रॉय पारूल के माध्यम से बलात्कार के प्रति स्त्री की सोच में परिवर्तन लाना चाहती है। 'कुहासा' कहानी की पारूल अपने साथ हुए बलात्कार के बाद जब वह आत्महत्या के लिए नदी पर जाती है वहाँ वे पानी में अपना चेहरा देखती है तो जीवन के प्रति उसका मोह उत्पन्न हो जाता है और वह

[25] आशारानी व्होरा-नारी शोषण : आईने और आलाम, पृ.सं – 199
[26] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 69
[27] वही पृ.सं- 69

सोचती है कि शायद इस घटना से उसकी सूनी कोख भर जाए। उसे 'शाप में वर' प्राप्त हो जाए। पारूल इस दुर्घटना को सकारात्मक रूप में लेते हुए आत्महत्या के फैसले को त्याग देती है वह सोचती कि राधे के द्वारा वह माँ बन सकती है क्योंकि राधे पागल अवश्य है लेकिन शरीर से हस्ट-पुष्ठ है तथा उसके दो बच्चे हैं। पारूल बलात्कार की घटना से दुखी होकर रोना नहीं चाहती। वह कहती है "नहीं! अब वह असहाय बनकर नहीं रोती-धोती रहेगी। यदि नियति ने उसके जीवन में दुःख ही दुःख लिखे हैं तो वह अपनी चेष्टा, अपने कर्म से उसे सुख में बदलकर रख देगी। दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदल देगी। अपना भाग्य अब वह खुद लिखेगी...जहाँ प्रेम, समर्पण, त्याग का मोल नहीं, वहाँ झूठ, विश्वासघात ही सही। यह दुनिया इसी के योग्य है। जैसे को तैसा ही मिलना चाहिए। उसे भी जीने का, आत्मरक्षा करने का अधिकार है। श्री भगवान स्वयं कह गये है – 'आत्मरक्षा ही धर्म'।"[28]

पारूल सकारात्मक सोच के साथ अपने आँसू पोंछकर दृढ़ क़दमों से अपने घर चली जाती है। पारूल के माध्यम से जयश्री रॉय हमें यह बोध कराना चाहती है कि जब स्त्री ने कोई अपराध ही नहीं किया, जब वह किसी पाप के लिए जिम्मेदार ही नहीं तो वह क्यों अपनी जिन्दगी का त्याग करे? उनके अनुसार स्त्री को अपनी सोच में परिवर्तन लाना तथा नकारात्मक स्थिति में भी सकारात्मक सोच पैदा कर जीवन जीना होगा। इस सन्दर्भ में अर्चना वर्मा कहती है- "समाज (यानी पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था) ने खुद सर्वशक्तिमान सार्वभौम हमलावर की भूमिका अपनाकर देह की 'शुद्धता' और पवित्रता को प्राण देकर भी बचे रखने का जो बोझ स्त्री के सर पर लदा है उसे वह स्वयं ही उतार फेंके और तथाकथित शुद्धता और पवित्रता के लिए लापरवाह हो जाए, लापरवाह हो जाए बलात्कार से पाई हुई चोटों के प्रति भी। इस मुक्ति के बिना सामाजिक, आर्थिक आदि किस्म की मुक्तियाँ भी संभव नहीं और उन मुक्तियों की तह में भी (अगर वह मिलती है

[28] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 71

तो) यह बुनियादी मुक्ति मौजूद है, रहेगी।"[29] जयश्री रॉय के अनुसार आज की स्त्री यह जान गई है कि जब तक वह डरेगी, भयभीत होगी तब तक पुरुष उसका शोषण करता रहेगा। इसलिए उसे अब लापरवाह होना होगा। जयश्री पारूल के माध्यम से स्त्री में यह चेतना जाग्रत करना चाहती है कि जब समाज उसकी परवाह नहीं करता तो स्त्री को भी समाज की चिंता नहीं करनी चाहिए। जब उसने कोई अपराध ही नहीं किया है तो वह अपराध के बोझ से क्यों दबे? स्त्री को अपनी सोच में सकारात्मकता लानी होगी तथा अपने प्रति अन्याय के विरूद्ध स्वयं खड़े रहना होगा। स्त्री को बलात्कार के प्रति अपनी सोच को बदलना होगा। स्त्री को अपनी इज्जत खो जाने के डर से अपने जीवन का त्याग नहीं करना चाहिए क्योंकि दोषी वह नहीं है। बलात्कार हो जाने के कारण स्त्री को शर्मिंदगी से जीने की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि उसने कोई पाप नहीं किया इसलिए आत्महत्या की जरूरत उसे नहीं है। आत्महत्या तो उसे करना चाहिए जो बलात्कार कर स्त्री के जीवन को नरक सामान बना देता है। सरकार ने भी स्त्री सुरक्षा के लिए अनेक नियम व क़ानून लागू किये हैं तथा बलात्कार करने वाले के लिए बहुत- सी सजाएँ निर्धारित की गई हैं। जरूरत है तो सिर्फ स्त्री चेतना की आवाज स्वयं स्त्री को बुलंद करने की तथा न्याय के विरुद्ध आवाज उठाने की।

3.4 पर्दा प्रथा का विरोध

भारतीय समाज में पर्दा प्रथा का प्रचलन आरम्भ से देखा जा सकता है। लेकिन अब यह प्रथा शहरों में न के बराबर हो गई है लेकिन गाँवों में अभी भी कई जगह पर्दा प्रथा का चलन दिखाई देता है। मुस्लिम समाज में यह प्रथा सदियों से चली आ रही है। इस सन्दर्भ में फिरोज खान कहते हैं- "मुस्लिम समाज में पर्दा प्रथा का प्रचलन है। परन्तु अब भी

[29] अर्चना वर्मा – हंस, अगस्त 2005, पृ.सं- 65

परंपरावादी परिवारों में ऐसी स्त्रियाँ है जो पर्दा का पूरा अमल करती है।"[30] पर्दा प्रथा नारी पर पुरुषों द्वारा शोषण करने का एक और तरीका है जिसमें पुरुष प्रधान समाज में पुरुष स्त्री को घर की मान-मर्यादा, इज्जत-आबरू के नाम पर पर्दे में कैद करके रखना चाहता है। जहाँ पुरुष प्रधान समाज स्त्री को एक तरफ पूजनीय कह कर उसे देवी का स्थान देता है वहीं दूसरी तरफ उसे पर्दे के पीछे छिपा कर दासत्व का जीवन जीने के लिए मजबूर करता है। आज भी ग्रामीण क्षेत्र में स्त्री का पर्दा करना अनिवार्य माना जाता है। अगर कोई स्त्री घूंघट नहीं करती तो लोग उसे बेलज्जी तथा संस्कारहीन कहते हैं 'कायान्तर' कहानी में जयश्री रॉय ने इस समस्या को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। फूलमती और बिगेसर का अभी-अभी विवाह हुआ है तथा गाँव की सभी स्त्रियाँ थाल फिरोने आती हैं-"लहरिन सास ने बहू-बेटे के सामने आरती की थाल फिरायी तो बहू खीस्स से हँस पड़ी। बिगेसर ने आँख गरम कर अपनी मेहरारू की ढलकती घूंघट छाती तक खींची तो गीतहरिन औरतों ने मंगल गीत-गाते एक दूसरे की टहोके लगाये। उसी दिन से गाँव-जवार में मशहूर हो गया-बिगेसर बो के लक्षण ठीक न है ! "[31] उपरोक्त पंक्तियाँ से पता चलता है कि फूलमती के मात्र हंसने से उसे कुलच्छनी कह दिया गया तथा उसे घूंघट में छिपा दिया गया। समाज में आज भी जो औरत घूंघट उठाकर चलती है उसे चरित्रहीन समझा जाता है। 'कायान्तर' की फूलमती स्वभाव से बहुत चंचल है तथा वह अभी मात्र चौदह-पंद्रह साल की है जो खाने की चीजों को चुराती है इसपर उसका पति उसे बहुत मारता है। तब बिगेसर की माँ बिगेसर से कहती है- "अरे अभगला! अब मार कुटम्मस से का होगा रे! हम तो कहबे करते थे कि एकर लच्छन ठीक नहीं है। शहर के लरकी, ठेठ बाइस्कोप देखती है, मुरी उघार के बीच बाजार चलती है बेलज्जी।"[32] फूलमती की सास पर्दा प्रथा का पूर्ण समर्थन करती है जिसके तहत वह फूलमती का इधर-उधर घूमना भी

[30] फिरोज खान-मुस्लिम विमर्श: साहित्य के आईने में, पृ.सं-103 |
[31] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं -136
[32] वही, पृ.सं -136

अच्छा नहीं मानती है। जयश्री रॉय पर्दा प्रथा का विरोध करती है वह पर्दा प्रथा स्त्री के लिए पिंजरा मानती है वह अपनी इस बात का समर्थन राहिला के द्वारा व्यक्त करती है। 'दर्दजा' कहानी की राहिला आत्मचेता मुस्लिम परिवेश की स्त्री है। मुस्लिम समाज में स्त्री के द्वारा पर्दा करना आवश्यक माना जाता है। "राहिला स्कूल के दिनों में भी मौका मिलते ही वह अपना बुर्का उतार फेंकती थी - आह धुप, हवा, आसमान .. एक गहरी सांस लेकर कहती अच्छा जानवी हम चिड़ियाँ होती तो?"[33] राहिला पर्दा प्रथा का विरोध करती हुई अपनी सहेली जानवी से कहती -"तो हम हवा में उडती-फिरती। डाल-डाल चहकती-गाती .... ये बुर्के का पिंजरा तो नहीं होता।"[34] राहिला पर्दा प्रथा के संदर्भ में अपनी सहली से कहती है कि "पिंजरे में तो पंछी भी होते हैं। हर पंची की किस्मत में पिंजरा नहीं होता, मगर औरत तो पैदाइश ही पिंजरे में होती है- माँ की कोख से कब्र तक ... एक पिंजरे से दुसरे पिंजरे तक का सफ़र !"[35] राहिला अपनी सहेली जानवी से स्त्री-पुरष के मध्य भेद के संदर्भ में कहती है कि "अच्छा जानवी, यदि ऊपर वाले कि यही मर्जी होती कि औरत हमेशा छिपी रहे तो वह उसे दुनिया में जल्वागर करता ही क्यों? जरा सोचो, हमें क्यों कोढ़ या गुनाह की तरह छिपाया जाता है। कपड़े तो हम इंसानों ने इजात किये हैं ना। कुदरत तो इंसानों को इस दुनिया में नंगा भेजती है, औरत भी नंगी पैदा होती है ... ।"[36] राहिला कहती है कि "अगर कुदरत की यही मर्जी होती कि औरत हमेशा हिजाब में रहे तो वह उसे खुद नंगी नहीं रहने देती, बुर्के में लपेटकर पैदा करती।"[37]

एक लेखक अपने मन के भावों को अपने पात्रों के माध्यम से व्यक्त करता है। उसी तरह जयश्री रॉय राहिला के माध्यम से पर्दा प्रथा का कट्टर विरोध करती है तथा वह

---

[33] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 49
[34] वहीं, पृ.सं- 49
[35] वहीं,पृ.सं- 49
[36] वहीं, पृ,.सं- 49
[37] वहीं, पृ.सं- 49

अपने पात्रों के माध्यम से स्त्री में पर्दा प्रथा के विरुद्ध चेतना जाग्रत करना चाहती है। आधुनिक समाज में स्त्री की सोच व विचारों में बदलाव आ रहा है। स्त्री अब पर्दे के पीछे बंद रहकर घुट-घुट कर जीना नहीं चाहती। वह खुला आसमान चाहती है, एक पक्षी की तरह जो मुक्त गगन में उड़ सके। बिना किसी बंदिश के। जयश्री रॉय कहती है कि जब उस ईश्वर ने भेद नहीं किया पुरुष और स्त्री में तो फिर हमारा समाज स्त्री को निम्न दर्जा क्यों देता है? स्त्री को घर की चार दीवारी तथा पर्दे की लाज-शर्म छोड़कर अपने अस्तितिव की लड़ाई लड़नी होगी तथा अपने पैरों पर खडा होकर समाज में पुरुष के समान बराबर का दर्जा प्राप्त करना और उसके समान खड़ा होना होगा।

3.5 वैधव्य और श्रृंगार के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन

भारतीय समाज में वैधव्य की स्थिति एक अभिशाप है। समाज विधवा स्त्री को किसी प्रकार का कोई अधिकार नहीं देता। पति के जीवन की समाप्ति के साथ पत्नी के सभी अधिकारों का समापन हो जाता है। पति की मृत्यु के तुरंत बाद ही उसे सफ़ेद साड़ी में लपेट दिया जाता है। तथा साथ ही उसे हमेशा के लिए श्रृंगार-प्रसाधनों से विरक्त व अलग कर दिया जाता है। विधवा से सभी रंग-बिरंगी साड़ियों को उससे छीन लिया जाता है और विधवा स्त्री का किसी भी शुभ कार्य जैसे विवाह संस्कार, गोद भराई, आदि उत्सवों में आना अपशकुन माना जाता है। विधवा स्त्री के केशों को भी कटवा दिया जाता है तथा उसे रहने के लिए घर का कोई ऐसा कोना दे दिया जाता है जो किसी मनुष्य के रहने के योग्य नहीं होता। संसार के सभी सुख- सुविधाओं का प्रयोग उसके लिए निषेध है। समाज के द्वारा विधवा स्त्री के लिए ऐसा व्यवहार अमानुषता नहीं तो और क्या है? विधवा स्त्री की स्थिति के सन्दर्भ में महादेवी वर्मा लिखती हैं “यदि दुर्भाग्य से स्त्री के मस्तक का सिन्दूर धुल गया तब तो उसके लिए संसार ही नष्ट हो गया। यह ऐसा अपराध है जिसके कारण उसे मृत्यु दंड से भी भीषणतर दंड भोगते हुए तिल-मिल गुलकर जीवन का शेष युग बन

जाने वाले क्षण व्यतीत करने होते है।"[38] जयश्री रॉय ने विधवा के अभिशाप जीवन का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से करते हुए महादेवी वर्मा के उपरोक्त कथनों को 'कायान्तर' कहानी में यथावत उद्धरित किया है। 'कायान्तर' की फूलमती के पति की जमीदार के द्वारा हत्या करवा दी गई है तथा फूलमती जो पंद्रह साल की बच्ची है जो विधवा हो गई है। इस बात का फायदा उठाकर पुलिस वाले आये दिन पूछ-ताछ के बहाने फूलमती को कभी थाने तो कभी जमींदार के कोठी पर बुलवा लेते थे। जहाँ उस बच्ची के साथ बलात्कार किया जाता था। पति की मृत्यु के साथ ही फूलमती की आत्मा की भी मृत्यु हो गयी थी जिन्दा तो सिर्फ शरीर था। इन सबके चलते उसका बच्चा भी नुकसान हो जाता है। सास दिन-रात अपने बेटे की मृत्यु का दोष उसे देते हुए गालियाँ देती है- "ई भतरखऊकी, चुड़ैल हमारा बेटे के त खाइए गयी अब हमको भी खाइए के छोरेगी..।"[39]

इस प्रकार की बातें सुनकर ललिता का मन विचलित हो जाता है और वो सोचती है "पंद्रह साल की बच्ची डायन, पतुरिया, भतरखऊकी और जाने क्या-क्या .. उजड़ी मांग, रूखे बाल, बिवाई पड़े पाव और सारे शरीर पर मार-पीटके निशान।"[40] ललिता फूलमती की हालत देखकर उसे नैहर चले जाने को कहती है। फूलमती ललिता की बात सुनकर शोक में अजीब ढंग से मुस्कुराती हुई कहती है "कहाँ जायेंगे बहूजी ! औरत जात का कही घर नहीं होता, बस एक ठिकाना होता है, मिला तो मिला ..."[41] उपरोक्त पंक्ति से स्त्री की दुर्दशा का बोध होता है कि स्त्री का अपना कोई घर नहीं होता विशेषतः विधवा स्त्री का। वह केवल समाज में दया का पात्र बनकर रह जाती है दूसरे के द्वारा फेंके गये टुकड़ों पर पलने के लिए। सामाजिक कट्टरता और रूढ़ियाँ जीवन को दुर्बल कर देती है। पति की मृत्यु के बाद स्त्री का अस्तित्व ही मर जाता है। वह केवल घर की नौकरानी से भी तुच्छ बन कर

---

[38] महादेवी वर्मा-श्रृंखला की कडियाँ, पृ.सं- 42
[39] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं-146
[40] वहीं, पृ.सं-146
[41] वहीं, पृ.सं-146

रह जाती है। फूलमती को शादी से पहले से ही श्रृंगार करना बहुत अच्छा लगता था। वह श्रृंगार को सुहाग से जोड़ कर नहीं देखती। इसी कारण फूलमती विधवा हो जाने के बाद भी अनेक पीड़ाओं को झेलते हुए भी श्रृंगार करना नहीं छोड़ती। उसका यह कदम स्त्रियों के लिए एक नई सोच का आरम्भ होना है। लेकिन लीक तोड़ कर चलने वाली औरतें बुरी औरतों की श्रेणी में आती है। इसी बात के लिए फूलमती की सास फूलमती को गाली देती है "ललिता अपने कमरे में बैठे-बैठे फूलमती की सास की गालियों का पथार बिछाना सुनती रहती-विधवा होकर भी ई खचरी का शौक कम नहीं होता। छापा का साडी चाहिए, केश में गमकौआ तेल चाहिए ! चटोरिन का जीब भी कम लम्बा नहीं है ! पूरा डेढ़ गज का है! लपलपाता रहता है रात-दिन।"[42]

फूलमती अपनी पति के मृत्यु के साथ त्रासदी भरा जीवन जीती है लेकिन फिर भी वह बिंदी लगाना, रंग-बिरंगी साडी पहनना नहीं छोड़ती। जयश्री रॉय फूलमती के द्वारा वैधव्य जीवन में श्रृंगार प्रसाधनों के त्याग को स्वीकार नहीं करती । जयश्री रॉय श्रृंगार को स्त्री का अधिकार मानती है जिसे यह समाज किसी रूप में नहीं छीन सकता । जयश्री रॉय 'कायान्तर' की फूलमती के द्वारा स्त्री श्रृंगार के प्रति अपनी नवीन दृष्टि को प्रदर्शित करती है। जयश्री रॉय सामाजिक परंपराओं से मुक्ति की बात करने की बजाय परम्पराओं में मुक्ति के मार्ग और अवसरों का संधान करना चाहती है। 'कायान्तर' की फूलमती सुहाग के श्रृंगार इन चिह्नों-प्रतीकों का बहिष्कार नहीं करती, बल्कि श्रृंगार चिह्नों को किसी तरह हमेशा अपने जीवन में बने रहने देना चाहती है। वैधव्य के बाद भी सिन्दूर, बिंदी, आदि को वह सुहाग से जोड़ कर नहीं देखती। वैधव्य को प्राप्त होने के बाद भी फूलमती रंग और उमंग को अपने जीवन से निष्कासित नहीं करना चाहती है, यह पितृसत्ता के प्रति उसका बड़ा विद्रोह है। स्त्री सुलभ व्यवहारों और स्त्रीत्व की अवहेलना करने वाले प्रतिक्रियावादी

---

[42] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं-146

स्त्रीवाद से ऊपर फूलमती का यह विद्रोह आत्मनिर्भरता प्रेरित स्त्रीवाद से जुड़ता है, जो स्त्री पुरुष के बीच की प्राकृतिक और जैविक भिन्नताओं को अस्वीकार करने की बजाय उसकी विशिष्टता की स्थापना करता है। फूलमती आधुनिक चेतना संपन्न स्त्री है। उसे मनुष्य और मनुष्य के बीच अंतर स्वीकार नहीं। इसलिए वह अपने पति बिगेसर की मौत को वह अपने जीवन से उमंग-उत्साह के निष्कासन का बहाना नहीं बनने देना चाहती। रंग और श्रृंगार पर वह अपना स्वाभाविक हक़ समझती है और उसे वह हर हाल में हासिल करना चाहती है। इसलिए वह पुरुष प्रधान पुरुषसत्तात्मक समाज के अनेक अत्याचारों के बावजूद वह पितृसत्ता की कमजोरियों का फायदा उठाते हुए खुद पर देवी आने का विभ्रम फैलाकर न सिर्फ अपने लिए उन समस्त कामनाओं की प्राप्ति का मार्ग सुगम करती है बल्कि इसी बहाने उन सब से बदला भी लेती है जिन्होंने जीते जी उसकी जिन्दगी को जैसे मृत्युशय्या में बदल दिया था। ललिता को उसकी सास ने बताया था कि फूलमती "मैया को चढ़ावे में सिर्फ लाल साड़ी, कुमकुम और बेला के फूल की वेणी चढ़ाई जा सकती है। मिठाई में गर्म बुंदिया और गुड़ की जलेबी। मैया रुपये-पैसा को हाथ भी नहीं लगाती।"[43]

उपरोक्त बातों से पता चलता है कि फूलमती ने उंगली टेडी कर देवी आने का बहाना बना कर श्रृंगार के साधनों को प्राप्त कर ही लेती है। जयश्री रॉय फूलमती के माध्यम से स्त्री में यह चेतना जाग्रत करना चाहती है कि स्त्री अगर चाहे तो सब कुछ प्राप्त कर सकती है। जरूरत है तो सिर्फ अटूट विश्वाश, धैर्य और अपने अधिकारों के प्रति सजगता। जो स्त्री समाज के अत्याचारों से हार जाती है। वह सदैव रोती रहती है और जो स्त्री साहस दिखाकर अपने अधिकारों के लिए लड़ती है वह अवश्य जीतती हैं जयश्री रॉय

---

[43] जयश्री रॉय-कायांतर, पृ.सं-147

कहती है “रोती साधारण औरतें हैं, फूलमती की तरह देवियाँ नहीं !”[44] अर्थात जो स्त्री स्वयं के लिए कोशिश कर रास्ता ढूंढती है उन्हें रोना नहीं पड़ता।

3.6 रंग भेद से प्रभावित स्त्री और उसके विरुद्ध विद्रोह की भावना

समाज में रंग भेद की समस्या मनुष्य से मनुष्य में भेद की समस्या को उत्पन्न करती है। ईस्वर ने सभी मनुष्यों को समान रूप से बनाया है। लेकिन मनुष्य ने स्वयं एक दूसरे के बीच भेद पैदा कर लिया है चाहे वे जाति, लिंग या रंग भेद हो। हालांकि आज समाज में रंग भेद बहुत कम दिखाई देता है फिर भी मनुष्य काले रंग के मनुष्य को देखकर नाक सिकुड़ लेता है। स्त्री के सन्दर्भ में जब रंग भेद की समस्या को जोड़ा जाए तो यह और भी गंभीर रूप धारण कर लेता है। समाज में काले रंग की स्त्री को अनेक प्रकार के व्यंग्य सहने पड़ते हैं। स्त्री पहले से ही स्त्री होने की सजा भुगत रही है, उसके ऊपर से काला रंग जले पर नमक छिड़कने का काम करता है। जहाँ पुरुष स्त्री को केवल देह समझता है ऐसे में काले रंग की देह वाली स्त्री का कोई मोल नहीं, हर जगह उसके रंग को लेकर मजाक उड़ाया जाता है, उस पर ताने कसे जाते हैं चाहे वह स्त्री कितनी ही गुणवान या आर्थिक रूप से संपन्न क्यों न हो। स्त्री के सभी गुण उसके रंग के आगे फीके पड जाते हैं। जयश्री रॉय ने ‘काली-कलूटी’ कहानी के माध्यम से काली देहवाली स्त्री के जीवन की त्रासदी, उसकी दुर्दशा तथा उसके मन की व्यथा को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

काली देह की स्त्री को समाज में ही नहीं वरन् अपने परिवार के सदस्यों के द्वारा भी व्यंग्यों और कटाक्षों को सहन करना पड़ता है। ‘काली-कलूटी’ कहानी की लावण्या तीस साल की है जो गहरे काले रंग के कारण अभी तक अविवाहित है। लावण्या को अपने रंग के कारण अपनी भाभी के व्यंग्य सुनने पड़ते हैं “खूब रगड़कर नहाना लाडो, फिर देखना

---

[44] जयश्री रॉय-कायांतर, पृ.सं-148

तुम भी फिल्म तारिकाओं की तरह फेयर एंड लवली हो जाओगी। कहते हुए यथासंभव गंभीर रहने के बावजूद उनकी आँखों में गहरा व्यंग्य छलक आया था।"[45]

लावण्या अभी तक सभी व्यंग्यों को सुनते हुए भी अपना धैर्य बनाये हुई थी। उसके रंग के कारण अभी तक बहुत से लडके उसे देखने आये और उसे किसी नुमाइश की वस्तु की भाँती जाँच-पड़ताल कर चले जाते। स्त्री को उसके काले रंग के कारण शादी न हो पाने के अनेक कटाक्ष पूर्ण बातें सुननी पड़ती है 'तुम आये तो' कहानी की चाँपा को उसकी मामी उसके सांवले रंग पर व्यंग्य करते हुए कहती है "ऊपर से गहरी साँवली, साधारण रूप रंग की। मामी बात-बात पर ताने देती थी "तुझे कोई लड़का पसंद नहीं करेगा, तेरी कभी शादी नहीं होगी।"[46]

इस प्रकार की बातों को सुनकर स्त्री में स्वयं के प्रति हीनभावना उत्पन्न हो जाती है। वह स्वयं को दूसरों से अलग तथा निम्नतर मानने लगती है। माता-पिता भी इसमें कोई कमी नहीं छोड़ते। माँ अपनी बेटी के रंग को निखारने के लिए बेसन, मुलतानी मिट्टी आदि न जाने क्या-क्या उपाय करती रहती है। ऐसे में लड़की अपने-आपको कुरूप समझने के लिए बाध्य हो जाती है। 'काली-कलूटी' कहानी की लावण्या सोचती है कि "दिन-रात के ताने उलाहने और हृदयहीन कटाक्ष से लावण्या के अन्दर का रहा-सहा आत्मविश्वास भी एक तरह से समाप्त हो गया था। वह किसी योग्य नहीं। उसे कभी कोई नहीं अपनाएगा। अक्सर वह बाथरूम में नहाते हुए रोती है, इतना धीरे कि कोई सुन न सके-मुझे भी प्यार चाहिए, अपना घर परिवार चाहिए ... ।"[47]

काले रंग की स्त्री के मन में भी वही भाव व आकांक्षाएं होती है जो साधारण स्त्री के मन में, वह भी किसी से प्रेम करना चाहती है तथा किसी का प्रेम प्राप्त करना चाहती है।

[45] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 72
[46] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 93
[47] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 74

वह भी उसी उमंग व उत्साह से जीना चाहती है जिस प्रकार से गोरी देह की स्त्री। लेकिन यह समाज स्त्री के काले रंग की आड़ में उसे हर तरह से तोड़ देता है। स्त्री के जीवन का आखरी लक्ष्य विवाह माना जाता है, और जब किसी स्त्री का विवाह नहीं हो पता तो उसपर अनेक आरोप लगाये जाते हैं। ऐसे में स्त्री का काला रंग कन्या विवाह की समस्या को और जटिल बना देता है। पुरुष जब स्त्री को विवाह के लिए देखने आता है तो स्त्री को काला पाकर किसी न किसी प्रकार से टाल कर चले जाता है। 'काली-कलूटी' कहानी लावण्या को भी इसी प्रकार की समस्या का सामना करना पड़ता है "वह रंग-रोगन से लिपी-पोती आँखे झुकाए बैठी रहती और लोग खाते-पीते हुए उसे देखते-परखते रहते। कोई उसे उठाकर खडी हो जाने के लिए कहता तो कोई चलकर दिखाने के लिए कहता। दूसरे कमरे में ले जाकर घर की बड़ी-बूढ़ियाँ उसके कपडे हटाकर देह का मुआयन करती, अशोभनीय प्रश्न करती। इन सबको झेलते हुए वह किसी तरह अपने आँसू जब्त किये रहती। जाते हुए सभी यही कहते कि हम जाकर आप लोगों को सूचित करेंगे।"[48] बाद में कोई जवाब नहीं आता।

जयश्री रॉय रंग भेद को नहीं मानती वह सभी मनुष्य को एक समान मानती है। रंग भेद की नीति ताकतवर के द्वारा कमजोर पर अत्याचार की एक नीति है। जिसके तहत काली स्त्री और भी कमजोर पड़ जाती है तथा समाज के उलाहने सुन कर वह आत्मग्लानी से भर जाती है। जयश्री रॉय रंग भेद के विरूद्ध आक्रोश दिखाते हुए कहती है "मगर अपनी मैली त्वचा के नीचे वह भी उतनी ही इंसान है जितनी गोरी रंगवाली लडकियाँ। उसके सपने, उसकी इच्छाएँ, उसका मन सिर्फ काली होने से दूसरों से अलग नहीं हो जाता। कोई उसे छूकर क्यों नहीं देखता, उसके परस में उतनी ही कोमलता है जितनी किसी खूबसूरत लड़की के स्पर्श में होती है। उसकी साँसों में भी वही हरारत है, वही चाहना जो एक सुन्दर

[48] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं-81

शरीर की मालिक के पास होती है। कोई उसकी आँखों में झाके तो ! सुने तो उसकी मूक चावनी की भाषा...वह प्यार देना चाहती है, स्वयं को उजाडकर ढेर सारा...कोई बस ले ले उसे, सब रह गया है उसके भीतर-पहाड़ बनकर-स्नेह, करुणा, कामनाएँ, इस मैले कुचैले, असुंदर शरीर के भीतर वह दबकर रह गयी है, मकबरा बन गया है यह साँवला रूप उसकी आत्मा का, जिसका कोई रंग नहीं होता, होती है बस अरूप संवेदनाएँ, जिसका कहीं कोई दाम नहीं...।"[49]

जयश्री रॉय के इन उत्तेजना भरे शब्दों से रंग-भेद के विरूद्ध चेतना दिखाई देती है। स्त्री को अपने रंग के आधार पर अपने महत्त्व को भूलना नहीं चाहिए। इंसान को मान-सम्मान व ऊंचा दर्जा अपने कर्मों से मिलता है। देह का रंग उसके सामने कोई मोल नहीं रखता। रंग भेद तो समाज के द्वारा कमजोर इंसान पर अपना अधिकार जमाने का तरीका है तथा स्त्री को उन तरीको के आगे नहीं झुकना चाहिए। शादी ही स्त्री को अपना आखरी लक्ष्य नहीं बनाना चाहिए। एक स्त्री शादी के बिना भी सम्मान से जीवन बिता सकती है। स्त्रियों को देह रंग के कारण (लावण्या जो काली-कलूटी की नायिका की भाँती) लोगों के व्यंग्य व कटाक्षों से अघात होकर आत्मग्लानी व हीन भावना से ग्रसित होकर अपना आत्म व मानसिक संतुलन नहीं खोना चाहिए। स्त्री को अब रंग, जाति, लिंग आदि सभी भेदों से ऊपर समाज की इन कुरीतियों का डट कर विरोध करना होगा।

3.7 स्त्री की शिक्षा प्राप्ति के प्रति जागरूकता

प्रारंभिक युग में भारतीय समाज में नारी को पढ़ाना अनुचित माना जाता था। उस समय नारी को केवल घर के काम सीखना ही सबसे बड़ी शिक्षा मानी जाती थी। परन्तु आधुनिक युग में नारी शिक्षा को बहुत महत्त्व दिया गया है तथा शिक्षा को स्त्री शोषण की

[49] जयश्री रॉय - कायान्तर, पृ.सं- 75

दासता से मुक्ति का मार्ग माना गया है। स्वयं स्त्री भी समय के अनुरूप स्त्री शिक्षा के महत्व को समझ गयी है। लेकिन आज भी कुछ ग्रामीण व दलित क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ नारी के लिए शिक्षा को आवश्यक नहीं मानते। किन्तु ऐसे क्षेत्रों में भी स्त्री शिक्षा के प्रति प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अपनी रुची को छिपा नहीं पाती। जयश्री रॉय ने अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्रियों के लिए शिक्षा के महत्त्व को दर्शया है तथा स्त्रियों के द्वारा भी शिक्षा के प्रति रुचि को प्रकट किया गया है। 'कायान्तर' कहानी की फूलमती एक दलित अनपढ़ स्त्री है, लेकिन वह उतनी ही होशियार व जहीन है। फूलमती का फुहडियाँ व्यवहार उसकी शिक्षा के प्रति रुचि को प्रदर्शित करता है। उसकी इस रुचि का बोध ललिता को था इसलिए वह कहती है कि "आँख उठते न उठते इशारा समझ जाती है, जमीन पर कोरी ऊँगली से घर-गृहस्थी का सारा हिसाब कर लेती है।...ललिता के आँगन में ट्यूशन के लिए जमा हुए बच्चों से सुन-सुनकर उसे दो तक का पहाडा और ढेर सारी कविताएँ जबानी याद हो गयी है। ललिता किसी बच्चे से सवाल करती है और अपनी उछाह में जवाब देती है फूलमती।"[50]

मनुष्य को जब किसी वस्तु के प्रति रुचि होती है तो वह बार-बार अपने कार्य द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से उस वस्तु के प्रति अपनी रूचि को प्रदर्शित करता है जैसे फूलमती। स्त्री अब यह जान गयी है कि शिक्षा वह अस्त्र है जिसके माध्यम से वह अपना व्यक्तित्व निखार सकती है। शिक्षा के द्वारा स्त्री बेहतर जीवन प्राप्त कर सकती है। यही कारण है कि आज स्त्रियों द्वारा अपने अधिकारों को प्राप्त करने का भरसक प्रयास भी हो रहा है। स्त्री यह समझ चुकी है कि शिक्षा से वंचित होने के कारण वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत नहीं है, इसलिए यह समाज उसकी जाहिली तथा गंवारपन का फायदा उठाता हुआ सदियों से उसे गुलामी की कैद में जकड कर रखा हुआ है। अब स्त्री इस कैद से मुक्त होना चाहती है तथा शिक्षा के माध्यम से उन सभी अधिकारों को प्राप्त करना चाहती है जिसकी वह

[50] जयश्री रॉय - कायान्तर, पृ.सं- 138

हकदार है। दर्दजा कहानी की राहिला शिक्षा के महत्त्व को भलिभाँति जानती है इसलिए वह जानवी से कहती है कि “फलाँ किताब में औरतों के बारे में यह लिखा है, वह लिखा है मैं खुद पढ़कर जानना चाहती हूँ कि इन बातों में कितनी सच्चाई है...उत्तेजना में बोलते हुए उसके गाल दहक उठते- औरतों की जाहिली का सब फायदा उठाते है! जानवी, इल्म ताकत है, जेहनी गुलामी से आज़ादी होना है तो इल्म हासिल करना ही पड़ेगा, खासकर औरतों को !”[51] उपरोक्त कथन से यह ज्ञात होता है कि शिक्षा ही एकमात्र ऐसा हथियार है जिसके माध्यम से स्त्रियाँ अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकती है तथा अन्याय का विरोध कर सकती है। इस सन्दर्भ में महादेवी वर्मा लिखती है कि “इस समय हमारा इष्ट स्वतंत्रता है, जिसके द्वारा हम अपने जंग लगी हुई बंधन को एक ही प्रयास में काट सकती है। इसके लिए शिक्षा चाहिए, उसे चाहे किसी भी मूल्य पर क्रय करना पड़े, परन्तु आज वह हमें महंगी न लगेगी, कारण वह हमारी शक्ति की, बल के कोश की कुंजी है। वही उस व्यूह से निकलने का द्वार है, जिसमें हमारे दुर्भाग्य ने हमें न जाने कब से घेर रखा है।”[52]

आज प्रत्येक स्त्री शिक्षा प्राप्त करना चाहती है। लेकिन पुरुष प्रधान पुरुषसत्तात्मक समाज कहाँ आसानी से स्त्री को उसके अधिकार देने को तैयार हो जाता है? वह हर तरह से स्त्री को अपने शिकंजे में दबोच कर रखना चाहता है। आज भी कई ऐसे जाति समूह या पिछड़े वर्ग हैं जहाँ स्त्री को शिक्षा से वंचित रखने के लिए उनपर दबाव डाला जाता है और जब स्त्रियाँ उनका विरोध करती हैं तो उन पर अत्याचार किये जाते है। ‘दर्दजा’ कहानी की राहिला अपनी बेटी माही को खूब पढ़ाना चाहती है। लेकिन पाकिस्तान के तालिबानी मुस्लिम कठमुल्ले उसका विरोध करते हैं क्योंकि वह स्त्री शिक्षा को अनुचित मानते हैं इसलिए वह राहिला और माही दोनों पर अत्याचार करते हैं। उनका घर से निकलना बंद करवा देते है तथा राहिला को पकिस्तान से खदेड़ देते हैं। फिर भी राहिला अपनी बेटी के

---

[51] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं- 50

[52] महादेवी वर्मा-शृंखला की कडियाँ, हमारी समस्याएं, पृ.सं- 97-98

हक़ के लिए लड़ना चाहती है जिसमें माही उसका साथ देती है। राहिला जानवी से कहती है कि “कुछ दिन पहले तूने टी.वी पर देखा होगा न? पाकिस्तान में तालिबानों ने एक बच्ची को बीच बाजार स्कूल जाने, घर से अकेले निकलने के जुर्म में कोड़े लगाये थे? और वह बच्ची चीखकर सबको ललकार रही थी कि वह तालीम लेगी, इल्म उसका पैदाइशी हक़ है।”[53] उपरोक्त पंक्ति से ज्ञात होता है कि शिक्षा प्राप्ति के अधिकार की मांग करने पर माही को कोडें लगाए जाते हैं फिर भी वह चुप नहीं बैठती संघर्ष करती है। जयश्री रॉय राहिला, जानवी, माहिरा, ललिता और फूलमती के माध्यम से शिक्षा के महत्त्व का बोध कराती है तथा वह स्त्रियों में शिक्षा के प्रति चेतना जागृत करना चाहती है। ‘कायान्तर’ की ललिता आधुनिक शिक्षित स्त्री है इसलिए वह अपने पिता की मृत्यु के बाद भी उनके द्वारा चलाये गये पाठशाला की जिम्मेदारी को उठाने में सक्षम हो सकी तथा पाठशाला में बिना किसी सहायता के बच्चों को पढ़ा सकी। जयश्री रॉय ललिता के माध्यम से स्त्री समाज को यह बोध करना चाहती हैं कि अगर स्त्री शिक्षित या पढी-लिखी है तो वह अपने पैरों पर स्वयं खडी हो सकती अर्थात आर्थिक रूप से सक्षम स्त्री अपने अधिकारों के प्राप्ति के लिए संघर्ष करने का साहस रखती है। इस सन्दर्भ में डॉ.बबनराव बोड़के अपना मत प्रकट करते हैं कि “शिक्षित नारी अपने अधिकारों के प्रति सजग है। वह राजनीति, विज्ञान, इतिहास, कला सभी क्षेत्रों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहती है। संसार की हर गतिविधि से वह परिचित हो जाना चाहती है। क्योंकि वह भी सृष्टि का एक महत्वपूर्ण अंग है।”[54] शिक्षा ने नारी में आत्मसम्मान एवं आर्थिक आत्मनिर्भरता का साहस भाव भर दिया है। विवाह के क्षेत्र में भी शिक्षित एवं कमानेवाली नारी की मांग बढी है। इधर सुशिक्षित नारी अपने परिवार के भरण-पोषण में सफल सिद्ध हुई है। आधुनिक युग में हर नारी शिक्षा एवं नौकरी को जीवन के साथ जोड़ने में प्रयासरत है। जयश्री रॉय स्त्री शिक्षा के महत्त्व को भलीभांति जानती है।

---

[53] जयश्री रॉय-कायांतर, दर्दजा, पृ.सं- 55

[54] डॉ. बबनराव बोडके-बीसवी शताब्ती के अंतिम दशक की कहानियों में नारी, पृ.सं-230

इसलिए उन्होंने अपनी कहानी विधा को शिक्षा के प्रति नारी को चेतना जागृत करने का माध्यम बनाया है। जिसमें वह काफी हदतक सफल हुई है तथा इस कार्य में वह अभी भी प्रयासरत है।

3.8 पाश्चात्य संस्कृति का स्त्री जीवन पर प्रभाव

आज समस्त विश्व पाश्चात्य संस्कृति का अनुपालन कर रहा है, ऐसे में भला भारतवासी कहा पीछे रहने वाले हैं। अतः भारत में भी पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति का अनुगमन व अनुपालन किया जा रहा है। आधुनिक युग में पाश्चात्य संस्कृति के प्रचार-प्रसार ने स्त्री युवा पीढ़ी को प्राचीन रूढ़ियों तथा परम्पराओं के प्रति विद्रोह के लिए प्रेरित किया। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से नारी जीवन में काफी बदलाव आया है जैसे उनके खान-पान, रहन-सहन, पहनावा, विचारों आदि वह अब स्वतंत्र रूप से अपने हिसाब से जीना चाहती है। अब वह किसी भी प्रकार के बंधन में बंध कर जीना नहीं चाहती। अब नारी भी पुरुषों के समान शराब का सेवन करना, क्लबों में लेट नाईट पार्टियों में जाना अपना अधिकार समझती है। साथ ही नारी ने साडी की परिधी और सहज सुन्दरता को छोड़ कर छोटे कपड़ों को अपना फैशन बनाया है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से स्त्री के विवाह संस्था तथा यौन संबंधों के प्रति सोच में परिवर्तन आया है। जिसका एक परिणाम 'लिव इन रिलेशनशिप' है। लेकिन 'लिव इन रिलेशनशिप' की इस धरणा को भारतीय समाज में उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। 'लिव इन रिलेशनशिप' की इस नई धारणा के प्रभाव ने स्त्री के जीवन को बहुत प्रभावित किया है जिस को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते है।

3.8.1 लिव इन रिलेशनशिप और भारतीय स्त्री

'लिव इन रिलेशनशिप' पाश्चात्य संस्कृति की देन है। 'लिव इन रिलेशनशिप' का मतलब किसी महिला व पुरुष का शादी के बिना आपसी सहमती के बाद एक ही घर में पति-पत्नी की तरह रहना होता है। 'लिव इन रिलेशनशिप' की धारणा गाँवों या छोटे शहरों में या मध्यवर्गीय परिवारों में बहुत कम या ना के बराबर दिखाई देती है। महानगरों में 'लिव इन रिलेशनशिप' की शुरुआत शिक्षित और आर्थिक तौर पर स्वतंत्र, ऐसे लोगों ने की जो कि विवाह की जकड़न से छुटकारा चाहते थे। भारतीय समाज में आज भी 'लिव इन रिलेशनशिप' की धारणा को मान्यता प्रदान नहीं की जाती। स्त्री किसी पुरुष के प्रेम में होने के कारण या विवाह की परंपरा की अस्वीकृति के कारण या स्वतंत्रता के नाम पर 'लिव इन रिलेशनशिप' में आ जाती है। आरम्भ में स्त्री इस रिलेशन के परिणामों को समझ नहीं पाती लेकिन बाद में जब वह किसी पुरुष के साथ बिना विवाह के रहने लगती है तब उसे इस रिलेशन की वास्तविकता का बोध होता है। 'लिव इन रिलेशनशिप' को हमारे समाज में उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है। जिसके तहत इस रिश्ते में बंधी औरत को बुरी व चरित्रहीन समझा जाता है। यहाँ तक कि इस रिलेशन में बंधे युवाओं को रहने के लिए किराए पर घर भी नहीं दिया जाता। इस प्रकार के रिलेशन में लड़कियाँ प्रेम मोह में पड़कर आजादी से जीने के नाम पर बिना शादी किये एक लड़के के साथ रहने लगती है बिलकुल एक बीवी की तरह, पर वह बीवी नहीं होती। आधुनिक युग में कई लड़कियाँ समाज की कुरीतियों एवं प्रथाओं को चुनौती देती हुई इस प्रकार के रिलेशन में बंध जाती है। जयश्री रॉय 'तुम आये तो' कहानी के माध्यम से बड़ते हुए आधुनिक दौर में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से उत्पन्न 'लिव इन रिलेशनशिप' की नव धारणा की समस्या की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहती है। 'लिव इन रिलेशनशिप' को समाज द्वारा स्वीकृति या मान्यता प्राप्त नहीं होती इसलिए इस रिश्ते में बंधे युवक-युवतियों को

समाज बुरी दृष्टि से देखता है तथा इस प्रकार के रिलेशन में बंधे युवक-युवतियों को समाज अपने आस-पास रहने देना अपने बच्चों के लिए हानि कारक मानते हैं। जयश्री रॉय की कहानी 'तुम आये तो' की चाँपा भी बिना शादी किये कबीर के साथ एक ही छत के नीचे पत्नी की तरह रहती है। इसलिए उसके आस-पास के परिवार वाले, लोग, कोई भी उनसे बात नहीं करते तथा उनके पीट-पीछे उनका मजाक उड़ाते हैं। चाँपा को भी इस वजह से काफी जिल्लत सहन करनी पड़ती है "वैसे जब से वह और कबीर साथ रहने लगे हैं, उन्हें खासकर उसे, लोगों की बदमाशी और ताने बहुधा सहने पड़े हैं। कबीर के पहले वाले घर में जिस दिन वह अपना सामान लेकर गयी थी, उसके दूसरे ही दिन उन्हें वह मकान छोड़ना पड़ा था। इसके बाद दो महीने तक उन्हें कबीर के एक कामरेड दोस्त के घर एक झोपड़पट्टी में रहना पडा था। वहाँ भी आस-पास के लोगों का रवैय्या उनके प्रति रूखा था। लोग उन्हें संशय और अवज्ञा से देखते, पीछे से कानाफूसी करते, मुँह दबाकर हँसते।"[55] उपरोक्त पंक्तियों से ज्ञात होता है कि 'लिव इन रिलेशनशिप' में रहने वाले युवक-युवतियों को लोग पसंद नहीं करते तथा उनसे दूर रहना चाहते हैं इसलिए उन्हें रहने के लिए किराये पर मकान भी नहीं देते। चम्पा कहती है कि "उनकी शादी नहीं हुई है और फिर भी साथ रहते हैं सुनकर सभी मकान किराये पर देने से इनकार कर देते थे।"[56] कबीर बहुत बदमिजाज व बड़ी-बड़ी बातें करने वाला व्यक्ति था। लेकिन वास्तविकता में चाँपा के प्रति उसकी सोच बहुत छोटी थी। कबीर दोगले आचरण वाला क्रांतिकारी पुरुष था जो मार्क्स और लेनिन के विचारों से प्रभवित था तथा समाज में बड़े-बड़े सुधार लाने की बातें करता था। परन्तु चाँपा के प्रति उसका व्यवहार शोषकों वाला था। कबीर शादी को बकवास मानता है इसलिए वह कहता है "हम शादी जैसी बकवासों में यकीन नहीं रखते-मोस्ट

[55] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 85
[56] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 85

नोन प्रोडक्शन कंसम्पशन..."[57] यह बात सुनकर चाँपा बहुत दु:खी होती है। लेकिन वह कबीर से प्रेम करती थी तथा उसकी क्रांतिकारी बातों से बहुत प्रभावित थी। इसलिए कबीर के साथ रहना अपना सौभाग्य मानती थी। 'लिव इन रिलेशनशिप' में एक दूसरे पर कोई सामाजिक या पारिवारिक दायित्व नहीं होता। इसलिए इस रिश्ते में युवक-युवती एक दुसरे को किसी बात के लिए मजबूर नहीं कर सकते। चाहे वह बच्चा पैदा करना हो या उसे स्वीकारना ही क्यों न हो। किसी भी प्रकार का कोई भी रिलेशन क्यों न हो? चाहे स्त्री कितनी भी आधुनिक या आर्थिक रूप से संपन्न क्यों न हो, वह हर जगह पुरुष के द्वारा प्रताड़ित की जाती है। वह हर बार छली जाती है। उसकी इच्छाओं का पुरुष के लिए कोई मोल नहीं है इसलिए जब चाँपा कबीर को प्रेगनेंट होने की बात कहती है तो कबीर चाँपा को कुछ रुपय देते हुए एबॉर्शन के लिए कहता है और चेतावनी देता है "या तो बच्चा या वह। मुझे क्या पता था तीस साल की औरत को इतनी सी सावधानी रखनी नहीं आती। जिस्म तुम्हारा है, इसे संभालना भी तुम्हे ही है।"[58] वह कहता है "दुबारा मुझे इस जाल में फँसाने की कोशिश मत करना। सेक्स की इतनी बड़ी कीमत चुकाने के लिए में तैयार नहीं। इसके लिए तुम्हें दूसरा आसामी देखना पड़ेगा।"[59]

उपरोक्त कबीर के द्वारा कही गई पंक्तियों से ज्ञात होता है कि कबीर सिर्फ सेक्स के लिए चाँपा के साथ 'लिव इन रिलेशनशिप' में था। तथा वह बच्चे की जिम्मेदारी उठाने के लिए बाध्य नहीं है। चाँपा इस रिलेशन में किसी प्रकार के बंदिशों (रीति-रिवाजों या परंपरा) में बंधी हुई नहीं थी। फिर भी वह खुश नहीं थी वह बहुत अकेलापन महसूस करती थी। जिस प्रकार के प्रेम की कामना वह कबीर से करती थी वह तो कभी उसे मिला ही नहीं। मिला तो सिर्फ तिरस्कार और अपमान। कबीर को चाँपा का कविता लिखना भी

[57] जयश्री रॉय-कायान्तर, पृ.सं-93
[58] जयश्री रॉय-कायांतर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 86
[59] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 86

अच्छा नहीं लगता था। इसलिए वह हमेशा चाँपा को कविता लिखने पर डांटता रहता चूँकि चाँपा और कबीर समाज के समक्ष विवाह के बंधन में बंधे हुए नहीं थे। इसलिए उनके रिश्ते को कोई नाम प्राप्त नहीं था। उनपर एक दूसरे के लिए पति-पत्नी वाली कोई जिम्मेदारी नहीं थी। उनके रिश्ते में कोई पाबंदी या सीमा नहीं थी। फिर भी कबीर चाँपा से स्त्री के सभी कर्तव्य की अपेक्षा करता था। लेकिन जब चाँपा कबीर को किसी बात पर टोकने जाती तो कबीर कहता है "ज्यादा बीवी बनने की कोशिश मत करो! यही सब चाहिए तो किसी को नौगजी साड़ी में ब्याहकर लाता।"[60] कबीर की बातों से चाँपा को विवाह प्रथा तथा विवाह में बंधे रिश्तों के महत्त्व का बोध होता है। चाँपा कबीर की बातों को सुनकर यह सोचती है कि "वह रिश्ते की हर बंदिश में जीकर भी कबीर की कोई नहीं लगती। ठगी गयी वह। सम्बन्ध नहीं उसके अधिकार नहीं बस उसकी जिम्मेदारियां, बोझ.....।"[61] कबीर के साथ इस प्रकार के बेबुनियाद रिश्ते से चाँपा बहुत दुःखी थी लेकिन वह कबीर को छोड़ कर भी नहीं जा सकती थी। क्योंकि चाँपा के मामा-मामी ने चाँपा के इस प्रकार से कबीर के साथ रिश्ते में रहने के कारण उससे हर प्रकार का रिश्ता तोड़ लिया था। दूसरी तरफ कबीर के उच्छशृंखल स्वभाव ने उसे अन्दर से असुरक्षित कर दिया था। चाँपा को लगता है कि "कबीर के साथ का यह गैर-पारम्परिक बोहेमियन जीवन उसे न घर का न घाट का रहने दिया। जिस रिश्ते का कोई नाम नहीं, आधार नहीं उसकी कोई गारंटी नहीं।"[62]

जयश्री रॉय के अनुसार इस प्रकार के रिश्ते में यह नहीं कहा जा सकता है कि साथी कब तक इस रिश्ते में रहना चाहता है। वह कभी भी इस रिश्ते से मुक्त हो सकते हैं। चाँपा को कबीर के प्रति इसी असुरक्षा की भावना खायी जा रही थी। साथ में ही कबीर की

---

[60] जयश्री रॉय -कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 95
[61] जयश्री रॉय -कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 95
[62] जयश्री रॉय -कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 96

अवहेलना तथा अपमानजनक बातों से वह दिन-रात अकेलेपन से पीड़ित थी। इस सन्दर्भ में जयश्री रॉय कहती है “प्रेम भी नहीं, समाज की स्वीकृति भी नहीं ! वह किस जमीन पर खडी है ! अपने पाँव के नीचे का दलदल उसे हर पल खींचता रहता है। वह सतह पर बने रहने के लिए किसी सहारे की तलाश में अपने हाथ पसारती रहती है, मगर उनमें सून्य के सिवा कुछ नहीं आता!”[63]

चाँपा की ऐसी दयनीय स्थिति में उसके जीवन में अर्पित का आगमन होता है। चाँपा को अर्पित के साथ अपने होने का एहसास होता था। अर्पित से प्रेरणा प्राप्त करके ही चाँपा ने फिर से लिखना प्रारंभ किया। अर्पित की बातों से वह नए उत्साह से भर जाती। इसी बीच चाँपा को कबीर का लतिका के साथ अफेयर बारे में पता चलता है। चाँपा इस बात पर कबीर से प्रश्न करती है तब कबीर कहता है “अपनी औकात में रहो ! जहाँ से भी आऊ, तुम कौन होती हो पूछने वाली? बीवी बनती हों।”[64] कबीर की बात सुनकर चाँपा का स्वाभिमान उसे झकझोर देता है तथा वह इस रिश्ते से मुक्ति पाना चाहती है। तथा सच्चे प्रेम व बुनियादी रिश्ते की तलाश में वह अर्पित के घर जाती है जहाँ अर्पित चाँपा को शादी के लिए पूछता है। तभी कबीर चाँपा को गुस्से से फोन करके पूछता है कि वह कहाँ है। तब चाँपा की सोयी हुई अंतरात्मा दहल उठती है। कबीर की गुस्सैल आवाज और बोलने का बेहुदा लहजा सुनकर अचानक उसके अन्दर एक विस्फोट सा हुआ था, मगर अपनी आवाज को यथासंभव स्थिर रखते हुए उसने स्वाभाविक ढंग से कहा था “नहीं आ सकती, और कहा हूँ यह तुम्हे बताने की जरूरत भी नहीं समझती।”[65] चाँपा की बात सुनकर कबीर उस पर चिल्लाता है, तब चाँपा आत्मविश्वास और चेतना से भरकर कहती

[63] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 96
[64] जयश्री रॉय-कायान्तर 'तुम आये तो', पृ.सं- 98
[65] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं-100

है “हाँ बिलकुल हूँ और तुम भी एक बात कान खोलकर सुन लो-आइन्दा मेरा पति बनने की कोशिश मत करना।”[66]

उपरोक्त पंक्ति चाँपा की स्त्री चेतना का बोध कराती है। जयश्री रॉय इस कहानी के माध्यम से स्त्रियों में यह चेतना जागृत करना चाहती है कि जब किसी भी रिश्ते में घुटन व अकेलापन समा जाए तो स्त्री को उस रिश्ते से मुक्ति पा लेनी चाहिए। जब स्त्री अपना अस्तित्व खोने लगे तो अपने अधिकार व अस्तित्व की प्राप्ति के लिए उसे स्वयं ही संघर्ष करना चाहिए तथा सही साथ व सच्चे प्रेम की प्राप्ति होने पर उसे सम्मान के साथ स्वीकार करना चाहिए। जयश्री रॉय ‘लिव इन रिलेशनशिप’ की सच्चाई को हमारे सामने रखते हुए विवाह रीति के महत्त्व का बोध कराती है। तथा स्त्री को किसी भी रिश्ते से जिसमें उसके अधिकारों का हनन हो उससे मुक्ति तथा अधिकार प्राप्ति की चेतना जागृत करती है।

3.8.2 खान-पान एवं वेशभूषा

परिवर्तन प्रकृति का नियम है, इसी नियम के चलते हमारी भाषा, खान-पान, वेशभूषा, सोचने के ढंग में भी परिवर्तन हुआ है। इस परिवर्तन का कारण है हमारी संस्कृति पर पश्चिमी संस्कृति का प्रभाव है। हमारे देश में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव इतना हावी हो चुका है कि स्त्री भी इससे बच न पाई। स्त्रियों ने अपनी मुक्ति के लिए पाश्चात्य संस्कृति का सहारा लिया। शिक्षा के माध्यम से नारी अपने अस्तित्व व अधिकारों को पाने में सक्षम हो पाई। शिक्षा के द्वारा नारी आर्थिक रूप से स्वावलंबन बन सकी। नारी ने बड़े-बड़े पदों पर आसीन होकर स्त्री चेतना व शक्ति का बोध कराया। जब स्त्री घर की दहलीज से बाहर निकल कर समाज में अपनी पहचान बनाने निकली तब उसका परिचय एक नई संस्कृति व समाज से हुआ। स्त्रियों को यह बोध हो गया कि त्याग, बलिदान,

[66] जयश्री रॉय -कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं - 100

सहनशीलता आदि परंपरागत स्त्री सुलभ गुणों से नारी का उत्थान असंभव है। परिणाम स्वरूप भारतीय स्त्री भी एक दिन विद्रोह कर ही उठी। उसने भी पुरुष के प्रभुत्व का कारण अपनी कोमल भावनाओं को समझा और उन्हीं को परिवर्तित करने का प्रयत्न किया। अनेक सामाजिक रूढ़ियों और परंपरागत संस्कारों के कारण उसे पश्चिमी स्त्री के समान न सुविधाएँ मिली और न सहयोग, तब उसने उन्हीं को अपना मार्ग दर्शक बनाना निश्चित किया। इसके फलस्वरूप स्त्री घर से बाहर स्वतंत्र पहचान पाने की इच्छुक, अधिक शिक्षित नारियाँ तेजी से भोगवाद की ओर अग्रसर हो रही है। वे फैशन और आडम्बर को ही जीवन का सार समझकर सादगी से विमुख होती जा रही है।

जयश्री रॉय की कहानियों में भी पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित स्त्रियों का चित्रण व उल्लेख मिलता है। जयश्री रॉय ने पाश्चात्य संस्कृति की होड़ में गलत राह पर चलती युवतियों की ओर अपनी चिंता व्यक्त की है। जयश्री रॉय की कहानी 'काँच के फूल' में युवा पीढ़ी पाश्चत्य संस्कृति के प्रभाव में आकर शराब सेवन, लेटनाईट जंक फूड और छोटे कपडे पहनने को फैशन समझकर इन चीजों को अपनी शानो-शोकत का प्रतीक मानने लगी हैं। माँ-बाप जब बच्चों को इन बुरी आदतों के बारे में सचेत करने का प्रयत्न करते हैं तो नवयुवक उन्हें दकियानूसी समझकर अनसुना कर देते हैं। 'काँच के फूल' कहानी की हिया आधुनिक स्त्री है जो कॉलेज में पढ़ती है तथा वह भी पाश्चात्य संस्कृति व आधुनिकता की चकाचौंध से प्रभावित हो जाती है "उसी दिन टिटोज की पार्टी में उसने पहली बार लिमका में मिलाकर बोडका पिया था। और भी क्या-क्या बकार्डी रिजर्वा के व्हाइट रम में मिलकर जमाइकांन फ्लेवर का ब्रीजर, टकीला, कॉकटेल ब्लडी मैरी, व्हाइट मिस्ट, पिना कोलाडा..पहली बार वह भी इतना कुछ ! थोडा-थोडा चखकर ही नशा हो गया था। उसे तब कहा पता था रम, बोदका, व्हिस्की आदि कभी एक साथ मिलाकर नही पीते ! गनीमत थी कि उस रात घर नहीं लौटना था। लेकिन जो भी हो, मजा बहुत आया-ठहाके,

रोशनी, म्यूजिक..काश वह ऐसी जगह में अक्सर आ-जा सकती! कितने दकियानूस है। उसके परिवारवाले !"[67] उपरोक्त पंक्ति से यह बोध होता है कि किस तरह युवा पीढी आधुनिकता की चकाचौंध में गुम होती जा रही है। हिया शराब पीना, पार्टी आदि में जाने को जीवन को पूरी तरह एनजाँय करना मानती है। सादा जीवन जीने वाले युवक-युवतियां अपनी खराब संगती या गलत दोस्तों के संगत में रहकर इस प्रकार के जीवन के आदि हो जाते हैं। अगर वह अपने दोस्तों के साथ शराब सेवन, पार्टी में जाना नहीं स्वीकारते तो उन्हें पिछड़ा हुआ समझा जाता है। उसी तरह 'काँच के फूल' की हिया भी "पहले पहले दोस्तों की जिद्द की वजह से उसने शराब पी थी मगर अब उसे चस्का लग गया है। जब भी मौक़ा मिलता है, पी लेती है। पीअर प्रेशर में बहुत कुछ करना पड़ता है वर्ना आप भीड़ से अलग-थलग पड जाओगे। नील ने भी दोस्तों के कहने में आकर सिगरेट पीना शुरू किया है।"[68] 'तुम आये तो' कहानी में भी पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित आधुनिक स्त्री का चित्रण किया गया है जिसके आदर्श व नैतिक मूल्यों में काफी परिवर्तन दिखाई देता है। चाँपा द्वारा मीतादी के व्यक्तित्व का वर्णन स्त्री के बदलते बिंदास स्वरूप को लक्षित करता है। मीता एक पत्रकार थी, व्यक्तित्व भी ऐसा ही जबरदस्त "माँ बहन की गाली दिए बिना बात नहीं करती, मुँह फाड़कर अट्टहास करती, बीडी के सुट्टे लगाकर मर्दों के बीच ठर्रा, रम, कच्ची, नारंची, फेनी-जो मिलता पानी की तरह पीती और फिर अपनी बुलेट जिसे वह प्यार से डार्क ब्यूटी कहकर बुलाती थी, पर बैठकर रात के दो तीन बजे अपने घर जाती थी।"[69]

जयश्री रॉय ने स्त्रियों के रहन-सहन के साथ वेशभूषा के प्रति स्त्री सोच में आये परिवर्तन को भी अपनी कहानियों में अभिव्यक्त किया है। आधुनिक युग की स्त्रियाँ अपनी

[67] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं- 23-24
[68] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं- 24
[69] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 93

मर्जी के कपडे पहनना चाहती है। वह छोटे और कम कपडे पहनना बुरा नहीं मानती। आधुनिक स्त्री का मानना है कि बुराई कम कपड़ों में नहीं, बल्कि देखने वालों की नजरों में होती है। 'काँच के फूल' कहानी की हिया सोचती है कि "ओह गॉड! पूरी दुनिया हमें सुधारने के पीछे पड़ी हुई है ! स्कर्ट घुटनों से दो इंच नीचे होनी चाहिए, ब्लाउज के सारे बटन बंद होने चाहिए, नो स्लीवलेस, नो टाइटस, नो फैशन...जोसुआ ठीक ही कहता है 'ये बूढ़े-खूसट हम नौजवानों से जलते हैं। जो खुद करना चाहकर भी कर नहीं पाते, वही करने से हमें रोकते हैं।'"[70] 'तुम आये तो' कहानी की लतिका भी आधुनिक स्त्री है "बुद्धिजीवी ! रूप भी वैसा ही-बाह कटा ब्लाउज, तांतकी साडी, खुले बिखरे बाल, कपाल पर बड़ा लाल टीका। एकदम कपाल-कुंडला सा रूप !"[71]

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में आकर जहाँ स्त्री पूर्ण रूप से भोगवादी बनती जा रही है। वही उसी संस्कृति के प्रभाव में आकर शिक्षा के माध्यम से स्त्री सही-गलत के बीच अंतर को पहचानने भी लगी है। अब वह दूसरों के बहकावे में नहीं आना चाहती। नारी अब समझती है कि जहाँ आधुनिकता की दौड़ हो रही वही वह परंपरावादिता व रूढ़िवादिता के बंधनों से मुक्त हो रही है। वह कहीं न कहीं इसी आधुनिकता व नवीनता की चकाचौंध में अपनी शालीनता, आदर्शों, नैतिक मूल्यों व जीवन को खो रही है। 'काँच के फूल' कहानी की हिया को जब काम्या महाजन के साथ एक पार्टी के बाद नशीली हालत में हुए समूह बलात्कार के बाद उसकी हत्या की घटना का पता चलता है तो वह सोच में पड जाती है। ड्रग्स के सेवन से बच्चों पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव के बारे में जब हिया को पता चलता है तो वह सन्न हो जाती है "इन सारी घटनाओं ने हिया को बेहद परेशान कर दिया था। लेट नाईट पार्टियों के प्रति वह सशंकित हो उठी थी। वहाँ भी उसने अपने दोस्तों को ड्रग

[70]जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं-15
[71] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं-97

सिगरेट में डालकर पीते हुए या रूपहल्ली पत्तियों में लेकर नश्वार की तरह सूंघते हुए देखा था नील ने बहुत जिद्द की थी मगर उसने नहीं ली थी।"[72]

उपरोक्त पंक्ति से यह बोध होता है कि आधुनिक समाज की स्त्री किसी भी परंपरा या संस्कृति का अंधानुकरण नहीं करना चाहती। नारी आधुनिकता, नवीनता व विकास को लेकर अपनी सोच में परिवर्तन लाना चाहती है। स्त्री की यह सोच उसकी आधुनिक स्त्री चेतना का बोध कराती है। इस सन्दर्भ में कवि 'पंत' के विचार स्मरणीय है 'तुम अगर कुछ हो फूल लहर, विहगी, तितली, मार्जारी। आधुनिक कुछ नहीं अगर हो तो केवल नारी। नारी स्त्री बनकर ही जिसमें उसकी शालीनता, कोमलता, प्रेम, सहयोग और निश्छलता के गुण समाहित है सबकी श्रद्धा और सहयोग अर्जित कर सकती हैं। तितली बनकर वह स्वयं तो डूबेगी ही, समाज को भी दुबायेगी'।

जयश्री रॉय के अनुसार स्त्री को आधुनिक समाज के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना चाहिए। परन्तु उसे अपने हितों के बारे में सोचते हुए आधुनिकतावाद और बाजारवाद का अन्धानुकरण नहीं करना चाहिए। पाश्चात्य आंदोलनों ने भारतीय नारी के मानसिक, सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर के परिवर्तन उन्नति और उच्च शिक्षा के प्रभाव ने नारी को परंपरा के रूढ़िग्रस्त मान्यताओं के शिकंजे से मुक्त किया है तथा नारी में अपने जीवन मूल्यों के प्रति चेतना जाग्रत की है।

उपरोक्त अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि जयश्री रॉय की कहानियों के पात्रों पर भी पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव पड़ा है। जिसके फलस्वरूप 'तुम आये तो' कहानी की चाँपा लिव इन रिलेशन को स्वीकार कर कबीर के साथ बिना शादी के रहने लगती है बाद में चाँपा को इस प्रकार के रिश्ते में अकेलापन व घुटन होने लगती है। चाँपा इस रिश्ते में अपने अस्तित्व को खोने लगती है। लेकिन बाद में अर्पित के साथ वह अपने होने को

[72] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं-26

महसूस कर पाती है इसीलिए चाँपा अर्पित का साथ पाकर कबीर के साथ लिव इन रिलेशन जैसे बेबुनियाद रिश्ते को छोड़कर, वह अर्पित के साथ विवाह कर सम्मानजनक जीवन जीने की ओर अपना कदम बढ़ाती है। जयश्री रॉय चाँपा के माध्यम से स्त्री चेतना जाग्रत करती है। 'काँच के फूल' कहानी में हिया के माध्यम से जयश्री रॉय स्त्री को पाश्चात्य संस्कृति व आधुनिकतावाद के अन्धानुकरण के प्रति सचेत करती है।

3.9 बाजारीकरण का स्त्री पर प्रभाव

भूमंडलीकरण के कारण विश्व में बाजारवाद का जन्म हुआ। जिसने उपभोक्तावादी संस्कृति को उत्पन्न किया। आज मनुष्य ने सभी समस्याओं का समाधान बाजार को मान लिया है। मनुष्य यह सोचने लगा है कि कोई भी वस्तु या पदार्थ किसी भी क्षण बाजारों में तुरंत प्राप्त किया जा सकता है। आज बाजारवाद हमारे चारों ओर मायानगरी की तरह व्याप्त है। इसका विरोध और तिरस्कार करने के बावजूद भी हम उसीमें जीने के लिए अभिशप्त है। उपभोग और उत्पाद बाजारवाद का अभिन्न अंग है। बाजारवाद की परिघटनाएं अनंतकाल से विद्यमान है और उनके स्वरूप में निरंतर परिवर्तन जारी है। उत्पादन सृजन करता है तो उपभोग सृजित वस्तुओं का अस्तित्व समाप्त कर देता है। बीसवीं सदी के मध्य से उपभोग और उपभोक्ता जैसे शब्द अर्थशास्त्र की परिधि से निकल कर आमबोलचाल में आ गए। ग्राहक के बदले उपभोक्ता शब्द का प्रयोग होने लगा। औद्योगिक क्रांति के बाद उत्पादन तेजी से बढ़ा और ग्राहकों को रिझाने के लिए विभिन्न रूपों में विज्ञान का सहारा लिया गया। संभावित ग्राहकों को इस प्रकार प्रभावित किया जाने लगा कि वे उत्पादों की ओर ललके और जरूरत हो या न हो लेकिन उन्हें वह अवश्य खरीदें। छल का प्रयोग करके आवश्यकताओं का सृजन किया गया और विशेष रूप से महिलाओं के सौन्दर्य प्रसाधनों को आवश्यकताओं के बिना किसी वजह से बढ़ावा मिल गया। रातों-रात गोरे होने की महत्वकांक्षा ने और सुन्दर दिखने की चाहत ने उत्पादनों के

बीच जानलेवा प्रतियोगिता शुरू हो गई। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह प्रतियोगिता अपने चरम सीमा पर पहुँच गयी। आधुनिक समाज में स्त्री जहाँ एक ओर शिक्षा और बाजार के माध्यम से अपनी मुक्ति का मार्ग पाने में सशक्त हो रही है। वही स्त्री बाजारवाद के झूठे प्रलोभों में फंसती जा रही है। इस सन्दर्भ में रेखा कस्तवार लिखती हैं "बाजार ने स्त्री का एक और शोषण किया है, तो उसे बाहर निकलने के अवसर भी दिए हैं, बाजार ने उसे देह में बदला है तो देह में मुक्ति भी दी है। सौन्दर्य प्रतियोगिताओं ने स्त्री को सेल्स गर्ल्स बनाया है तो पैसे कमाने के अवसर भी सौंपे हैं। स्त्री इस संक्रमण काल का उपयोग पूंजी के साम्राज्य में सेंध लगाने के लिए कर रही है। बाजार में आकर स्त्री ने परंपरागत संरचना से मुक्ति के रास्ते जुटाए है।"[73]

जयश्री रॉय ने स्त्री पर बाजारवाद के बढ़ते हुए प्रभाव को महसूस किया है जिसे उन्होंने अपनी कहानी के माध्यम से व्यक्त किया है। स्त्री दुनिया की आधी आबादी है इसलिए समाज में होने वाले किसी भी प्रकार के परिवर्तनों से वह प्रभावित होती है। जयश्री रॉय ने बाजारवाद या बाजारीकरण के स्त्री जीवन पर बढ़ते प्रभाव की समस्या को अपनी कहानियों में व्यक्त किया है। उपभोक्तावाद का जादू आधुनिक स्त्री के सर चढ़ कर बोल रहा है। आधुनिक स्त्री इसके अधीन होकर वस्तु में तब्दील होती जा रही है। अब बाजार निर्धारित करने लगा है कि स्त्री कैसी होनी चाहिए, वह किस प्रकार अपना विकास कर सकती है तथा समाज में उसका आचरण कैसे होना चाहिए। जयश्री रॉय की कहानी 'काली-कलूटी' में बाजारवाद के स्त्री पर प्रभाव को आसानी से आंका जा सकता है। 'काली-कलूटी' की नायिका अपनी काली देह के कारण अविवाहित है जबकि उसकी उम्र तीस साल की हो चुकी है। लावण्या अपने काले रंग के कारण बहुत से लड़कों के द्वारा शादी से इनकार की जा चुकी है। लावण्या यह सोचती है कि जो मनुष्य गोरा नहीं होता क्या उसके

[73] रेखा कस्तवार-स्त्री चिंतन की चुनौतियाँ, पृ.सं-135

अन्दर संवेदनाए नहीं होती, उसके अन्दर प्रेम नहीं होता। लावण्या इन सब प्रश्नों के बीच उलझी हुई सोचती है कि वह भी सुन्दर है, उसमें भी प्रेम है जिसे वह किसी पर न्यौछावर करना चाहती है। लावण्या ने न जाने आज तक गोरी व सुन्दर बनने के लिए कितने सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग कर लिया है। लावण्या यह सोचती है कि आज मनुष्य वैसा ही रहना चाहता है जैसा बाजार उसे निर्देश देता है। लावण्या बाजारीकरण के जाल में फंसे हुए समाज के बारे में सोचती हुई कहती है "जिन्दगी अब बाजार में पड़ी हुई एक वस्तु मात्र है, उस के हाथों रेहन चढ़कर रह गया है। इंसान को कैसा होना चाहिए, यह यही बाजार तय करता है। दुनिया कैसी है, यह बात नहीं, दुनिया कैसी होनी चाहिए, यह बात अहम हो गयी है। और यह बात बताती है लोगों को कोई और नहीं, यही बाजार बड़ी-बड़ी बहुराष्ट्रिय कंपनियाँ अपने तरह-तरह के उत्पादों के विज्ञापन के जरिये। ये कंपनियाँ तय करती हैं, इंसान को कैसा दिखना चाहिए...सुबह से लेकर रात तक हर बात, हर काम के लिए इनका मशवीरा लेकर चलना जरूरी हो गया है। वर्ना आज के दौर में पिछड़ जाने का डर है और यह कोई भी नहीं चाहता। सभी को अपटू डेट और टेड्री बने रहना है।"[74] लावण्या की माँ भी बाजारवाद के बहकावे में आकर अपनी बेटी को गोका बनाने लिए तरह-तरह के चेहरा निखारने वाले साधनों का प्रयोग करती है। परन्तु अंततः वह उसमें विफल हो जाती है। बाजार के प्रसार के साथ स्त्री की स्थिति में गिरावट आई है। क्योंकि वह समाज में बाहर सुन्दर व स्मार्ट दिखने के लिए बाजार की प्रसाधन कंपनियों के द्वारा बताई गई वस्तुओं का अन्धानुकरण करने के लिए बाजार की बड़ी-बड़ी कंपनियों द्वारा निर्धारित की गई स्त्रियों के लिए नियमों का स्त्री बिना विचार किये पालन करने में लगी हुई हैं। समकालीन दौर में भले ही नारी अपने अधिकारों को समझने लगी है, फिर भी वह वस्तु से बढ़कर कुछ भी नहीं है। वह दिन-प्रतिदिन देह में रिड्यूस होती जा रही है। बाजार का तिलिस्म मनुष्य को न केवल मनुष्य रहने देती है न व्यक्ति, वरन उसे हृदयहीन मशीन

---

[74] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं- 76

में तब्दील कर उत्पाद बना रही है। डॉ. रोहीणी अग्रवाल के अनुसार "बाजार की फतह इंसानी विवेक को पूरी तरह कुचल डालने में निहित है।"[75]

जयश्री रॉय के अनुसार बाजार ने स्त्री को सुन्दरता का प्रलोभन देकर उसे वस्तु में तब्दील कर दिया है। बाजार के इस कारोबार में स्त्री बहु-राष्ट्रीय कंपनियों में विशिष्ट स्थान प्राप्त करने के प्रलोभन में बाजार के चंगुल में फंसती जा रही है। इस सन्दर्भ में जयश्री रॉय लिखती है "ये सहृदय अच्छी प्रसाधन कंपनियाँ बताती है, आज की औरत को गोरी, खूबसूरत, जीरो फिगर की होनी चाहिए, जिसके बाल रेशमी, मुलायम और रंगीन हों, पलके मस्कारा लगाकर घनी, लम्भी हो, होंठ इस रंग के हों और गाल उस रंग के हों। वह डिज़ाइनर वस्त्र पहने और सुबह अमुक कंपनी का कोर्न फ्लेक, अमुक स्किम्ड मिल्क के साथ ले। तभी उसकी शादी होगी तभी उसे कोर्पोरेट कंपनियों में ग्लैमरस नौकरी मिलेगी, उसके बच्चे गोल-मटोल और हई क्यू वाले पैदा होंगे तथा पति मिलेगा गुड लुकिंग, हैंडसम और बेहद प्यार करनेवाला जो उसे अक्षय तृतीय तथा धनतेरस के अवसर पर हीरों का हार दिलवाएगा तथा मारीशस में हॉलिडे करवाते हुए प्रेम के लिए चाकलेट फ्लेवर वाले कंडोम का इस्तमाल करेगा। इसे वे एक्स फैक्टर का नाम देते हुए। इस एक्स फैक्टर का होना सबके लिए जरूरी हो गया है।"[76]

जयश्री रॉय के उपरोक्त कथन से यह ज्ञात होता है कि किस तरह प्रसाधन विज्ञापनों के बहकावे में आकर स्त्री एक साधारण स्त्री से लिपि-पुती गुडिया में तब्दील होती जा रही है। साथ ही किस तरह वह अपने जीवन मूल्यों को परिवर्तित करती जा रही है। लेखिका स्त्रियों में बाजारवाद व उपभोक्ता के प्रति चेतना जागृत करना चाहती है। बाजार में जगह बनाने के लिए स्त्री के लिए यह जानना बहुत जरूरी है कि देह पर

[75] डॉ. रोहिणी अग्रवाल-समकालीन कथा साहित्य सरहदें और सरोकार, पृ.सं -12
[76] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं-76

अधिकार और मस्तिष्क नियंत्रण के बिना, वह बाजार के नियमों को अपने अनुकूल परिवर्तित नहीं कर सकती। आज बाजार की नियामक शक्तियों के हाथ का खिलौना बन स्त्री अपनी शर्तों को बना-बदल भी रही हैं। 'काँच के फूल' कहानी की हिया गोरी दिखने के लिए बहुत सी क्रीमों का उपयोग करती है लेकिन जब वह उसमें सफलता प्राप्त नहीं कर पाती तो वह कहती है "पाँच साल से शायद पाँच सो ट्यूब निचोड़े डाले, मगर इन गोरे रंग का दावा करने वाले क्रीम्स का कोई असर नहीं। सब झूठे, मक्कार...सोचते हुए उसने क्रीम का ट्यूब उठाकर कमरे के कोने में फेंक दिया था।"[77] हिया के इस कथन से यह ज्ञात होता है कि वह अब यह जानती है कि विज्ञापनों में किये गये सारे दावे सच नहीं होते। इस कथन के द्वारा हिया के बाजारीकरण के प्रति चेतना का बोध होता है।

जयश्री रॉय 'काली कलूटी' की लावण्या व 'काँच के फूल' कहानी की हिया के माध्यम से स्त्रियों में यह चेतना जाग्रत करना चाहती हैं कि जहाँ स्त्री बाजार या प्रसाधन कंपनियों के प्रलोभनों में फंसती जा रही है वही दूसरी तरफ वह उन प्रलोभनों की सच्चाई से अवगत होकर उसका तिरस्कार कर रही है। अब स्त्री यह जानती है कि मीडिया, विज्ञापनों या कम्पनियों द्वारा अपनी वस्तु के लिए किये गये सारे वादें सभी पैसा कमाने का जरिया है तथा स्त्री बाजार के किसी भी बहकावें में नहीं आयेगी।

3.10 बाँझपन के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन

स्त्री का जीवन समस्याओं से भरा हुआ है। स्त्री जीवन के लिए बड़ी समस्याओं में विवाह के साथ ही जुड़ी हुई एक और क्लिष्ट समस्या मातृत्व की है। भारतीय समाज संतानहीनता के लिए हमेशा स्त्री को ही जिम्मेदार ठहरा कर उसे बाँझ कह कर उसका अपमान करता है। नारी जीवन की सार्थकता और निरर्थकता उसके स्त्री बनने में नहीं, माँ

---

[77] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'काँच के फूल', पृ.सं-10

बनने में है। मातृत्व प्राप्ति नारी मन की शास्वत भावना है और आधुनिक युग में भी नारी का चिरंतन संतति प्रेम यथावत है। आज के आधुनिक समाज में भी स्त्री के लिए बाँझपन एक गाली बन चुकी है। कई बार स्त्रियों का यह दोष न होते हुए भी उन्हें इस त्रासदी का सामना करना पड़ता है। बाँझपन की यह समस्या समाज में हर शहर, गाँव, गली में है। परन्तु हर जगह इसमें महिला को ही दोषी समझा जाता है, बल्कि कई जगहों पर पति नामर्द है तो कहीं पर पति की इज्जत बचाने के लिए स्त्री बाँझपन स्वीकार कर लेती है। हमारे पुरुष प्रधान व्यवस्था वाले समाज में स्त्री को केवल बच्चा पैदा करने का एक साधन मात्र समझा जाता है। पुरुष अपने वंश की वृद्धि के लिए स्त्री की महत्व केवल संतान पैदा करने तक ही समझता है और जो स्त्री संतान पैदा नहीं कर सकती समाज व पुरुष उसे ठुकरा देता है। ऐसे में स्त्री के लिए बाँझपन एक अभिशाप बन जाता है। इस सन्दर्भ में अरविंद जैन लिखते हैं कि "पुरुष अपने अहं की तुष्टि, वंश की वृद्धि, अनित्य को नित्य बनाने के मोह और यौनांद के स्त्री को देह और देह को कोख तक ही जानता-समझता है। इसके अलावा न समझना चाहता हा, और न समझाना। आनंद के लिए स्त्री देह की सुन्दरता और वंशवृद्धि के लिए मातृत्व की सार्थातकता पर ही सारा शास्त्रार्थ, शोध और संविधान रचा-रचाया गया है।"[78]

जयश्री रॉय 'कुहासा' कहानी के माध्यम से स्त्री के लिए बाँझपन की समस्या को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। हमारे समाज में यह माना जाता है कि स्त्री का जीवन तभी सार्थक सिद्ध होता है जब वह अपने पति के वंश को संतान दे सके। नहीं तो उसका जीवन किसी कमरे में पड़ी बेकार वस्तु के समान हो जाता है जिसका कोई महत्त्व नहीं होता। बच्चों से ही स्त्री को समाज और परिवार में प्रतिष्ठा व सम्मान हासिल होता है। पत्नि द्वारा अपने पति व परिवार को संतान न दे पाने के कारण उसके दाम्पत्य जीवन में दरार आ

---

[78] अरविन्द जैन-औरत, अस्तित्व और अस्मिता पृ.सं-119

जाता है। पति तथा पूरा परिवार संतानहीनता का पूरा दोष स्त्री के मथ्थे माड़कर उसका अमानवीय शोषण करने लगते हैं। जयश्री रॉय की कहानी 'कुहासा' की नायिका पारूल तीस बरस की है तथा वह अभी तक माँ नहीं बन पाई है। इसी कारण पारूल मातृत्व न पा सकने की वेदना से ग्रसित है। पारूल अपनी वेदना को ईश्वर के सामने प्रकट करते हुए कहती है "हे माँ जगत जननी ! पूरे जगत को धन्य धान्य से पार दिए हो, फिर मेरी ही एक कोख शून्य क्यों? माँ होकर अपनी संतान के दुःख समझ नहीं पाती ? यह बंध्या होने का कलंक, आक्षेप...इससे चरम कोई यातना नहीं इस चराचर में।"[79] पारूल दिन-रात माँ न बन पाने की पीड़ा में वह दिवानिशि कुत्सा, प्रताड़ना में जी रही है। जयश्री रॉय स्त्री की इस अवस्था व स्थिति को बड़े मार्मिक रूप में प्रस्तुत करती है। पारूल को संतान हीनता के कारण दिन-रात अपनी सास व परिवार वालों के ताने सुनने पड़ते है। उसके जीवन में अब सिर्फ तिरस्कार, अपमान और उपालंभ ही रह गया था। बाँझ स्त्री के प्रति समाज व परिवार का तिरस्कार व अवहेलना पूर्ण व्यवहार देखते हुए जयश्री रॉय समाज के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हुए लिखती है "जो स्त्री माँ न बन सकी, वह स्त्री नहीं, उसके नाम पर एक कलंक मात्र है। ऊसर माटी है बंजर, व्यर्थ धिक्क..तेरे जीवन पर धिक्कार! सास उसे उठते बैठते रात-दिन उलाहना देती है, कोसती है। वह सुनती है और सुनती है और और कर भी क्या सकती है। कुछ कहने का मुँह ही कहा है उसका?"[80] पारूल परिवारवालों के ताने सुन-सुनकर स्वयं को दोषी मानने लगती है और अपने स्त्री होने पर स्वयं को दोषी समझते हुए कहती है "हो न हो सारा दोष स्त्री का ! निर्दोष होने से बड़ा कोई दोष नहीं इस जगत में। औरत में कम तो सेंक नहीं लगा अब तक। कालिक हो गया जीवन। गंजना और गंजना। निंदा का इतना बोझा। बाब्बा, ठाकुर ! उठा नहीं लेते यहाँ से मुझ अभागी

---

[79] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'तुम आये तो', पृ.सं- 60
[80] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'कुहासा', पृ.सं- 60

को। जला कपाल और क्या...।"[81] पारूल अकेले में बैठकर सोचती है कि जिस घर के लिए उसने दिन-रात अपने आपको गलाया, मन को सिझाया, हाड-पंजरा तोड़ा आज वहीं उसे ऐसे देखते हैं जैसे वो उनकी कोई नहीं सिर्फ इसलिए कि वह उनके वंश को औलाद नहीं दे सकती। पारूल सास के इतने उलाहने तथा कटाक्ष भरे शब्द इसलिए सुन रही थी क्योंकि उसे अभी भी अपने पति के प्रेम पर भरोसा था। लेकिन जब उसकी सास पारूल के पति की दूसरी शादी का ऐलान करती है और उसका पति बिलकुल चुप सुनता रहता है तब उसका भरोसा पूर्ण रूप से टूट जाता है। ऐसे में पारूल पूरा दिन रो-रो कर गुजार देती है। रात को जब पारूल का पति सो रहा होता है तब पारूल अपना धैर्य खोकर अपने पति से पूछती है कि उसके साथ ऐसा क्यों किया जा रहा है? पारूल का पति वंश चलाने के नाम पर उसे उत्तर देते हुये कहता है "गिन्नी, जरा धीरे धरो। माथा ठंडाकर सोचो थोड़ी देर के लिए माँ क्या कुछ गलत कह रही है? इतनी जमीन-जायदाद-धान के गोले, पोखर-दोबा, गोहाल भरकर गोरू, बाछुड़...आखिर किसके लिए? कोई तो चाहिए न पुरखों की देहरी में दिया बालने वाला? यहाँ तो पूरा कुल ही निश्प्रदीप पड़ा है। हमारे बाद गाय-बकरी हमारे बाडी में घास चरते नजर आयेंगे। जमीन पर दुर्वा भी न उगेगा।"[82]

पारूल अपने पति की उक्त पंक्तियो को सुनकर ये कहकर रोने लगती है कि इसमें मेरा क्या दोष है तब उसका पति कहता है कि इसमें दोष की बात नहीं, यदि तुम वन्ध्या नहीं होती तो ऐसा न होता। अपने पति के द्वारा वन्ध्या शब्द सुनकर वह बिलकुल टूट जाती है। तब उसके मन में आत्महत्या का विचार आता है। लेकिन जीवन के प्रति मोह आत्महत्या ऐसा करने से उसे रोक रहा था। तब वह शादी से पहले अपने मामा-मामी के गाँव के दिनों के बारे में सोचने लगती है। जहाँ वह जमींदार के बेटे से प्रेम करने लगी थी तथा पारूल अपने प्रेमी के द्वारा गर्भवती भी हुई थी। जब पारूल के गर्भ के बारे में

---

[81] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'कुहासा', पृ.सं- 61
[82] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'कुहासा', पृ.सं- 64

घरवालों को पता चला तो उन्होंने उसका गर्भपात कर दिया था। पुराने दिनों के बारे में सोचकर पारूल विश्वास से भरकर सोचती है कि नहीं वह बाँझ नहीं हो सकती। पारूल कहती है "वह एक सम्पूर्ण स्त्री है माँ बनने के योग्य ! आज वही सत्य उसके आत्मविश्वास का एक मात्र सबल है और दारुण दुःख का कारण भी। जब लोग वन्ध्या कहकर उसे अपमानित करते हैं, उसके अन्दर आग जल उठती है। वह जानती है दोष उसका नहीं, कमी उसके पति में है। मगर किसी से कह नहीं पाती। किसे कहे, इसका साक्ष्य किस तरह दे।"[83]

पारूल में कहीं न कहीं उसके साथ किये जाने वाले अन्याय के प्रति आक्रोश व चेतना जागृत हो रही थी। लेकिन लोक-लाज के डर से वह चुप थी। पारूल का मन किसी काम में नहीं लग रहा था इसलिए वह बाहर बगीचे में थोड़ी देर सोचती-सोचती सो जाती है। जहाँ अचानक से पागल राधे आ जाता है और उसकी अस्त-व्यस्त हालत देखकर उसके साथ बलात्कार कर देता है। पारूल अब बिलकुल हताश हो जाती है तब वह पोखर पर आत्महत्या के लिए जाती है जहाँ पारूल पानी में अपनी छवी देखती है और सोचती है कि वह तो मर जाएगी लेकिन उसका पति दूसरी शादी करके खुशी से जीवन व्यतीत करेगा। पारूल के अन्दर जीवन के प्रति मोह जाग उठता है और सोचती है कि जब उसका कोई दोष ही नहीं तो वह क्यों मरे? पारूल उसके साथ हुए बलात्कार की दुर्घटना को सकारात्मक रूप में लेते हुए सोचती है कि वह बाँझ नहीं है और वह राधे के द्वारा गर्भवती हो सकती है। वह सोचती है कि जब समाज व परिवार वालों ने उसके बारे में नहीं सोचा तो वह उन सबके बारे में क्यों सोचे इसलिए पारूल एक नई चेतना और विशवास के साथ अपने साथ हुए बलात्कार के दुःख से बाहर निकलकर अपने आँसू पोछते हुए दृढ़ क़दमों से

[83] जयश्री रॉय-कायान्तर, 'कुहासा', पृ.सं- 66

अपने घर की ओर लौटने लगती है और कहती है "देखू तो सास कैसे मेरे बोंधू की दूसरी शादी करवाती है! पोता चाहिए न उसे?...देती हूँ उसे पोता....।"[84]

जयश्री रॉय पारूल के माध्यम से स्त्रियों में चेतना जागृत करना चाहती है कि जब स्त्री वन्ध्या के लिए जिम्मेदार नहीं तो क्यों वह अपमानजनक जीवन जीए। स्त्री के बाँझपन या बलात्कार के लिए पुरुष जिम्मेदार होता है तो स्त्री को अपने जीवन का त्याग नहीं करना चाहिए। बल्कि उसे अपने अधिकारों के लिए खड़ा होना चाहिए। जयश्री रॉय ने कहानी के माध्यम से स्त्रियों में बाँझपन के प्रति अपनी सोच में परिवर्तन लाने के लिए स्त्रियों को एक नवीन दृष्टि प्रदान की है। जयश्री रॉय यह बताना चाहती है कि स्त्री ही अपने विरूद्ध हो रहे अन्याय को रोक सकती है।

3.11 अधिकारों के प्रति सचेत स्त्री

सदियों से स्त्री को कमजोर समझकर उस पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये गये हैं। पुरुष ने सदैव नारी को अपने पैरों की जूती समझा है। पुरुष प्रधान समाज में नारी को गुलाम समझकर उस पर हमेशा अनेक अत्याचार किये गये हैं। लेकिन स्त्री को केवल अबला मानकर उसकी उपेक्षा करना तर्कसंगत नहीं है पुरुषों ने अब यह बात समझ ली है। पहले शिक्षा के अभाव के कारण वह दबती थी लेकिन आज परिस्थिति बदल गयी है। स्त्री शिक्षा के माध्यम से अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष भी कर रही है। इस सन्दर्भ में डॉ.एल श्री देवी अपने विचार व्यक्त करती है कि "आज वह शोषण की हर प्रक्रिया से गुजरकर अपने स्वतंत्र अस्तित्व का निर्माण कर रही है। वह हर क्षेत्र में कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है। नारी का सम्बन्ध गाँव से नगर की ओर बढ़ रहा है, जिससे

[84] जयश्री रॉय-कायांतर, 'कुहासा', पृ.सं- 71

प्राचीन कुप्रथाएं समाप्त होने लगी है। प्राचीन भारत में अबला कहलाने वाली नारी आज आधुनिक परिवेश में सबला बनती जा रही है।”[85]

समय परिवर्तन के साथ नारी अपने व्यक्तित्व के अधिकार को प्राप्त करने के लिए कमर बांध तैयार हो चुकी है। स्त्री अब स्वयं को पुरुषों से कम नहीं समझती। नारी पुरुषों के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर आगे बढना चाहती है। अब हमें यह समझ लेना चाहिए कि स्त्री अगर सृजन कर सकती है तो पुरुषों का ध्वंस करने का सामर्थ्य भी उसमें कम नहीं है।

जयश्री रॉय ने अपनी कहानियों में स्त्री को अपने अधिकारों के प्रति चेतना का बोध कराया है। ‘दर्दजा’ कहानी की राहिला अपनी बेटी को शिक्षा का अधिकार प्रदान करना चाहती है। लेकिन मुस्लिम समाज के कठमुल्ले, कुंद जेहन तालीबानी उसका विरोध करते हैं और उसे पकिस्तान से निकाल देते हैं फिर भी राहिला अपनी बेटी के भविष्य और उसके अधिकारों के साथ कोई समझौता नहीं करना चाहती। वह अपनी बेटी को पढ़ाना चाहती है। राहिला स्वयं को पुरुषों से कमजोर नहीं समझती। वह अपने अधिकारों को भली-भांति समझती है तथा जीवन के प्रति वह अपनी सकारात्मक सोच रखते हुए अपनी सहेली से कहती है “ये, चार पचास-साठ साल की जिन्दगी के लिए इतने समझौते क्यों? इंसान हैं, नसों में गर्म लहू दौड़ता है, एकदम केंचुआ बनकर कैसे जमीन पर रेंगने लगे, रीढ़ की हड्डी गल गयी है क्या? तुझे जो समझना है समझ, लेकिन एक बात जो मैंने समझी है, वह यह कि ऊपर वाले ने मुझे किसी से कमतर नहीं बनाया है। मर्दों को यह बात पता है, तभी तो औरतों को दबाये रखने के लिए हजार साजिशें रचते हैं। उन्हें मालूम है, जिस दिन औरत को बराबरी का हक़ और मौका मिल जाएगा उस दिन उनका तख़्त-तो ताज छीन जाएगा… जिसे वे अपनी मर्दानगी कहते हैं, इसे मैं उनकी कायरत समझती हूँ।”[86]

---

[85] डॉ. एल.श्रीदेवी-भारतीय नारी के बदलते सन्दर्भ, अग्रतारा, त्रैमासिक अंक 2, 1998, पृ.सं- 62

[86] जयश्री रॉय-कायान्तर, दर्दजा, पृ.सं- 50

राहिला के उपरोक्त कथन के माध्यम से जयश्री रॉय स्त्रियों में यह चेतना जागृत करना चाहती है कि वह किसी भी रूप में पुरुषों से कम नहीं है इसलिए उसे अपना जीवन समझौते करके नहीं बल्कि हक़ और स्वाभिमान से जीना चाहिए क्योंकि जीवन सिर्फ एक बार मिलता है जिसे सम्मान व अधिकार के साथ जीना चाहिए। औरत पुरुष की गुलाम नहीं कि वह पुरुषों के द्वारा फेंके गए टुकड़ों पर जिए। औरत हमेशा अपने हक़ का खाती आयी है। मुफ्त में कभी नहीं, फिर भी उसने पुरुषों के अनेक अत्याचार सहे। 'दर्दजा' कहानी की राहिला, जानवी से कहती है "औरत की इज्जत की एक कीमत होती है, हर समाज में कहीं ज्यादा, कहीं कम, मगर होती जरूर है। औरत आज तक अपने जिस्म की ही कमाई खाती है, हर जगह, चाहे वह उसके सौहर का घर हो, चाहे कोई कोठा! फर्क सिर्फ क्या है, जानती है? एक शादीशुदा औरत एक मर्द यानी अपने शौहर को अपना जिस्म देकर रोटी, कपडा, छत की सुरक्षा पाती है और कोठे की औरतें सैकड़ों मर्दों के बीच खुद को बेचकर इन चीजों का जुगाड़ करती है। बात तो एक ही है।"[87] जबतक स्त्री को अपने अन्दर व्याप्त शक्ति का बोध नहीं था तब तक वह पराधीन थी। लेकिन आज वह सबल बन गयी है। उसकी सबलता ने उसे अपने अधिकारों के प्रति सचेत किया है।

3.12 पुरुषों के दोहरे आचरण से सचेत स्त्री

पुरुष ने स्त्री को सिर्फ देह समझा है और सिर्फ उसके शरीर से प्रेम किया है। पुरुष ने कभी स्त्री के अन्दर व्याप्त भावनाओं को समझने का प्रयास नहीं किया। पुरुष दोहरे आचरण वाला जीवन जीता है। वह एक तरफ अपनी प्रेमिका से खूब प्यार करने का दाँवा करता है वही दूसरी तरफ जब उसकी मनोकामना की पूर्ति होते ही सब समाप्त हो जाता है वह उस नारी को त्याग देता है। नारी ने अक्सर प्रेम में धोखा ही पाया है। जयश्री रॉय ने

[87] जयश्री रॉय-कायान्तर, दर्दजा, पृ.सं- 50

अपनी कहानियों में स्त्रियों के प्रति पुरुष के इसी दोहरे आचरण वाले स्वरूप को दर्शाया है तथा उसके प्रति सचेत नारी को भी दिखाया है।

'काली-कलूटी' कहानी की लावण्या अपने ऑफिस में काम करने वाले सह कर्मचारी आलोक से प्रेम कर बैठती है। लावण्या अपने काले रंग की हीन भावना से ग्रसित, आलोक का प्रेम पाकर उस पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। आलोक लावण्या से बड़े-बड़े प्रेम के दावे किया करता था इसलिए लावण्या उसके प्रेम जाल में फंस कर सारी सीमाएं लांघ जाती है। आलोक लावण्या के भोलेपन का फायदा उठाकर, अपने जिस्म की भूख मिटाकर लावण्या को बिना बताए ऑफिस छोड़ कर चला जाता है। लावण्या उसका इन्तजार करती रह जाती है। एक दिन लावण्या को पता चलता है कि आलोक शादी कर चुका है। लावण्या इस पीड़ा को सहन नहीं कर पाती तब लावण्या की सहेली नीला उससे कहती है "अरुण क्या कह रहा था? आलोक उसे कहा करता था, ऐसी उपेक्षित और कुरूप लड़कियों को जाल में फंसाना बहुत आसान होता है। वे हीन ग्रंथि की शिकार होती हैं। और फिर बत्ती गुल होने के बाद अँधेरे में हर लड़की सुन्दर हो जाती है...।"[88] उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि पुरुष स्त्री के सम्मुख एक आचरण रखता है और उसके पीठ पीछे उसे केवल देह समझता है। जबकि सच्चे प्रेम से तो उसका कोई नाता ही नहीं। वह तो सिर्फ देह के प्रेम को समझता है।

'कुहासा' की नायिका पारूल बाँझपन की पीड़ा से ग्रसित है। इसलिए उसकी सास उसके पति की दूसरी शादी करवाना चाहती है। और इसके लिए उसका पति भी चुपचाप अपनी सहमती प्रकट करता है। पारूल की बाँझपन की पीड़ा में अब तक उसका पति एकमात्र सहारा था। लेकिन अब उसका यह सहारा भी छूट गया। पारूल पुरुष की फितरत के बारे में सोचते हुए कहती है "पहले-पहल उसे अपनी आड़ में लिए रहा बलय। एक सख्त

[88] जयश्री रॉय-कायान्तर, काली कलूटी, पृ.सं -80

खूंटे की तरह उसे सहारा देता रहा। मगर हाय रे पुरुष मानुष का प्रेम! जानू से उतरा तो ह्रदय से भी उतरा गया। मौसमी फूल-सा मौसमी प्रेम, वन्य के पानी की तरह घबराकर चढ़ा और हडहडाकर उतर भी गया। पौष मास की मायावी धूप जानो, गौरोया सी आँगन में उतरी भी नहीं कि देखो फुरर....।"[89] पारूल के द्वारा व्यक्त इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि जब तक स्त्री का शरीर जवान और सुन्दर होता है तभी तक पुरुष का प्रेम रहता है। उम्र के साथ जब शरीर की सुन्दरता फीकी पड़ती है तो पुरुष का प्रेम भी गायब हो जाता है। 'तुम आये तो' कहानी का पात्र कबीर भी इसी प्रकार का पुरुष है जिसके सन्दर्भ में जयश्री रॉय चाँपा के माध्यम से बताना चाहती है कि "कबीर के लिए दुनिया के बस दो ही बड़े सत्य है एक पेट की भूख और दूसरा जिस्म की भूख । बकौल उसके, इसी से पूरी सृष्टि संचालित होती है। बाक़ी चीजें बकवास है। इस ईट-पत्थर की दुनिया को अपनी हाड-मांस की देह से जियो, भोगो और भूल जाओ-जस्ट यूज़ एंड थ्रो ! प्रेम, आस्था, जन्म-जन्म का रिश्ता-माय फूट !"[90]

आधुनिक समाज में स्त्री शिक्षा के माध्यम से अपने प्रति सही-गलत को महसूस करने लगी है। साथ ही वह पुरुष की प्रकृति को समझने लगी है। पुरुष को सिर्फ स्त्री के शरीर से मतलब है। पुरुष अपने इसी मतलब को पूरा करने के लिए वह सदियों से स्त्री के साथ प्रेम का नाटक करता आया है। 'काँच के फूल' कहानी की जसिका हिया को नील के झूठे प्रेम के प्रति सतर्क करते हुए कहती है "मर्दों की छोटी-छोटी बातों को इगनोर करना सीख वफ़ा इनके डी.एन.ए में नहीं होती। तुझपर मरने की कसम खायेंगे मगर नजर दूसरों पर लगी रहेगी वो तो गनीमत हुई, ऊपरवाले ने इन्हें कुत्तों की तरह एक अदद पूँछ से नहीं नवाजा, वर्ना लड़कियों के सामने लगातार हिलती ही रहती।"[91] जसिका के द्वारा कहे गये

---

[89] जयश्री रॉय-कायान्तर, कुहासा, पृ.सं - 62
[90] जयश्री रॉय-कायान्तर, तुम आये तो, पृ.सं -94
[91] जयश्री रॉय-कायान्तर, काँच के फूल, पृ.सं- 22

उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्त्री अब पुरुष के दोहरे आचरण के प्रति सचेत है। जयश्री रॉय स्त्रियों में पुरुषों के दोहरे आचरण के प्रति चेतना जाग्रत करना चाहती है। वह यह बोध कराना चाहती है कि स्त्रियों को पुरुषों के इस दोहरे आचरण को समझते हुए समाज में अपना स्वतंत्र अस्तित्व कायम करना है और अपने आत्म सम्मान की रक्षा करना है।

3.13 आर्थिक चेतना सम्पन्न स्त्री

आधुनिक युग की नारी ने शिक्षा के माध्यम से स्वयं के लिए आर्थिक निर्भरता को महसूस किया है। स्त्री आर्थिक रूप से अपने पति पर निर्भर होने के कारण शोषण का शिकार होती है तथा वह चाहकर भी अपने पति से अलग नहीं हो सकती क्योंकि अपना और अपने बच्चों का आर्थिक रूप से भरण-पोषण करने में वह सक्षम नहीं होती। बदलते परिवेश में स्त्री ने शिक्षा के माध्यम से अपनी कमजोरी को महसूस किया तथा अपनी आर्थिक स्वतंत्रता व आत्मनिर्भरता के लिए संघर्ष करना प्रारंभ कर दिया। स्त्री आज अर्जनशीला है। वह स्वतंत्रता चाहती है, और पुरुषों के साथ समानता भी चाहती है। इस सन्दर्भ में डॉ. पी.वी. लिखते हैं "वह आज पुरुष की अनुगामिनी नहीं बल्कि सहगामिनी है। जो नारी कमा रही है वह पुरुष से दबकर नहीं रहना चाहती। उसमें स्वाभिमान की भावना भर चुकी है।"[92] जयश्री रॉय की कहानी 'तुम आये तो' की नायिका चाँपा जब यह देखती है कि कबीर का संबंध अब लतिका के साथ है तो वह कबीर को छोड़कर अर्पित के साथ विवाह कर लेती है। चाँपा कबीर को छोड़ने का निर्णय इसलिए ले पाती है क्योंकि वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होती है। चाँपा किताबों की प्रूफ रीडिंग, हिंदी टाइपिंग और ट्यूशन आदि पढ़ाती थी और चाँपा अपनी ही कमाई से घर चलाती थी।

---

[92] डॉ. पी.वी. विश्वं(संपादक)-संग्रथन, मई 12, पृ.सं- 14

जयश्री रॉय की कहानियों में चाँपा, ललिता, मीतादी, लतिका और राहिला जैसे पात्र आर्थिक चेतना से संपन्न है। मीतादी 'तुम आये तो' कहानी में चाँपा की गुरु है। चाँपा मीतादी को अपनी टीचर मानती है क्योंकि चाँपा उन्हीं से ही प्रभावित होकर अपने अन्दर आत्मविश्वास को जागृत कर पाती है। मीता एक खूर्राट पत्रकार थी। व्यक्तित्व भी वैसा ही जबरदस्त क्योंकि मितादी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर थी इसलिए वह किसी से नहीं डरती थी। 'थोड़ी सी जमीन, थोड़ी सा आसमाँ' की नायिका लिजा भी अपने पति से अलग इसलिए हो पाती है क्योंकि वह आर्थिक रूप से दूसरों पर निर्भर नहीं थी। वह एक प्राइमरी स्कूल में बच्चों को चित्रकला सिखाती है। 'कायान्तर' कहानी की ललिता भी गाँव के मिडिल स्कूल में पढ़ाती है तथा स्त्री शिक्षा के माध्यम से आर्थिक रूप से सक्षम है जिससे वह अपनी स्वतंत्रता को प्राप्त करती है। 'दर्दजा' कहानी की राहिला यह जानती है कि हमारे समाज की स्त्री पति की हर मनमानीयों को इसलिए सहन करती है क्योंकि वह आर्थिक रूप से अपने पति पर निर्भर रहती है। राहिला स्त्री के आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता के महत्त्व को जानवी को समझते हुए कहती है "फिर औरतें क्या करे, खासकर हमारे जैसे समाज की औरतें जो अधिकतर अनपढ़ या कम पढ़ी-लिखी होती और अपने पति पर आर्थिक रूप से निर्भर करती है।"[93]

स्त्रियों ने आर्थिक आत्मनिर्भरता से पुनः अपने स्वाभिमान के गुण को अर्जित किया है। उसे अब यह एहसास हो गया है कि वह भी कठिन से कठिन परिश्रम कर अपना भरण-पोषण कर सकती है। इसलिए वह अपने माता-पिता, भाई, पति, पुत्र आदि किसी के भी मदद की मुँहताज बनकर नहीं रहना चाहती। आज की स्त्रियाँ स्वाभिमान की रक्षा हेतु स्वयं आत्मनिर्भर बनना चाहती है। आधुनिक भारतीय समाज में नारी ने विशेषतया नगर समाज की नारी ने अपनी अस्मिता की खोज और उसकी रक्षा का प्रयास किया है। उसने

[93] जयश्री रॉय-कायान्तर, दर्दजा, पृ.सं-47

आर्थिक स्वतंत्रता की चेष्टा की। इस प्रकार उसने अपना एक व्यक्तित्व बनाना चाहा यद्यपि भारतीय सामजिक आर्थिक व्यवस्था में आज भी स्त्री के प्रति किसी बड़े परिवर्तन की अपेक्षा है।

जयश्री रॉय ने स्त्रियों के लिए आर्थिक आत्मनिर्भरता को आवश्यक माना है जिसे उन्होंने राहिला, ललिता, मितादी, लतिका, दिया,चाँपा आदि पात्रों के माध्यम से व्यक्त किया है। जो कि आर्थिक चेतना संपन्न स्त्री के प्रतीक हैं।

3.14 ममत्व की शक्ति

स्त्री की पूर्णता उसके ममत्व में या माँ बनने से प्राप्त होती हैं। माँ अपने बच्चों के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए सदैव तैयार रहती है। आज भले ही स्त्री का देवी स्वरूप लुप्त होता जा रहा है और वर्त्तमान पुरुष की मानसिकता उसे देवी रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं, लेकिन उसके ममता के स्वरूप से इंकार नहीं किया जा सकता। इस सन्दर्भ में डॉ.सावित्री डागा कहती हैं “यद्यपि काल-प्रवाह में नारी गौरव कई बार विषम परिस्थितियों से चूर-चूर होता रहा है, किन्तु नारी के मातृत्व रूप की गरिमा सदैव अक्षुण रही है।”[94]

जयश्री रॉय ने अपनी कहानियों में स्त्री के ममता स्वरूप के बहुमुखी आयामों का यथार्थ अंकन किया है। जयश्री रॉय ने स्त्री की ममता की शक्ति को बहुत उत्कृष्ट ढंग से प्रस्तुत किया है। हमारे समाज में अगर स्त्री को किसी रूप में सम्मान मिलता है तो वह है माँ। माँ अपने बच्चों को हमेशा खुश व सुखी देखना चाहती है। तथा दुःख की परछाई तक उन पर पड़ने नहीं देना चाहती। माँ अपने बच्चों केलिए सारे दुःख व पीड़ा को झेलने के लिए तैयार हो जाती है। बच्चा चाहे कैसा भी क्यों न हो कुरूप, सुन्दर, अच्छा या बुरा माँ

[94] डॉ. सावित्री डागा-आधुनिक हिंदी मुक्तक काव्य में नारी, पृ.सं -122

को सबसे प्रेम होता है। माँ अपने बच्चों के हर दुःख को अपने में छुपा लेना चाहती है। माँ कितनी भी दुखी व पीड़ा में क्यों न हो वह अपने बच्चों पर उसको जाहिर नहीं होने देती। इसी प्रकार के ममत्व का अंश हमें 'अपनी कैद' कहानी में दिखाई देता है। जयश्री रॉय की यह कहानी ममत्व ग्रंथी से पीड़ित एक युवक की कहानी है। इस कहानी का पात्र बीली बचपन में पोलियो की बीमारी से ग्रसित हो जाने के कारण रूक-रूखकर हिचकोले खाकर चलता है। बीली विकलांग है, अपनी माँ की मृत्यु से बहुत आघात है तथा वह अपनी माँ के प्रेम के कैद से बाहर नहीं निकल पाता। वह सदैव माँ की यादों में खोया रहता है, बीली जब स्कूल में पढता था तब स्कूल के बच्चे उसे डोनाल्ड डक कहकर चिढ़ाते व उसका मजाक उड़ाकर उसे मारते थे। तब बिली असहाय होकर रोता रहता और जब माँ उसे स्कूल से लेने आती तब वह अपना सारा गुस्सा माँ पर उतार देता था और माँ को तब तक पीटता जब तक थककर माँ की गोद में नहीं गिर जाता था। फिर भी माँ कुछ नहीं कहती थी और उसे अपने सीने से समेटे रहती। माँ अपने दर्द को छुपाकर बीली से कहती है कि "जब भी तुम्हे कोई दुःख दे, इसी तरह लाकर मुझपर उड़ेल देना बीली। सुनकर मैं और रोया था। उनकी डांट से नहीं, उनकी ममता से मुझे डर लगता था। इससे बड़ा हथियार होता है क्या!"[95] बच्चों के लिए माँ का प्रेम ही दुनिया से लड़ने का सबसे बड़ा हथियार होता है। क्योंकि माँ ही अपने बच्चों को यह विश्वास दिलाती है कि वह किसी से कम नहीं है। जब माँ अपने बच्चों को विकलांग देखती है तो उसकी पीड़ा का अंदाजा भी नहीं लगाया जा सकता है। लेकिन वह अपनी इस पीड़ा को कभी अपने बच्चों पर जाहिर नहीं होने देती। बिली अपनी माँ की सहनशीलता तथा वात्सल्य को प्रकट करते हुए कहता है कि "इसके बाद बचपन से लेकर जब तक माँ रही, मैंने यही किया दुनिया भर के दुःख, संत्रास जहाँ जो मिला, लाकर उन पर उडेलता रहा। बदले में वह मुझे खुशियों की गुलाबी कैंडिया थमाती रही। कभी कुछ भूल जाता तो माँ ही याद दिलाकर मुझसे वसूल ले जाती,

[95] जयश्री रॉय-कायान्तर, अपनी कैद, पृ.सं-34

बाकायदा तलासी लेकर। कितनी सूक्ष्म थी उनकी दृष्टि छोटे से छोटे दुःख, बात भी उनसे नहीं छिपती-आँखों में टंका दुःख का कोई मटमैला पैबंद, हँसी का कहीं से फीकी हो गया रंग, चेहरे पर ठिठका हुआ एक क्षण का ज़र्द मौन उनके पवित्र बाइबल की तरह मैं उन्हें अक्षर-अक्षर याद था। मैंने हमेशा महसूस किया था, उनकी भक्ति और प्रेम के बीच कोई द्वंद्व नहीं था।"[96]

माँ अपने बच्चों का पालन-पोषण बहुत स्नेह वात्सल्य से करती है तथा उनके व्यक्तित्व विकास के लिए उचित प्रयत्न करना माँ का कर्तव्य माना गया है। स्त्री के माँ स्वरूप के सन्दर्भ में शांति कुमार कहते हैं कि "नारी का जीवन का उद्देश्य माँ बनने से पूर्ण होता है, प्रेम,स्नेह, बलिदान और ममता आदि अपार गुणों के कारण ही माँ भगवती का रूप कहलाती है।"[97] स्त्री एक हद तक अगर अपने पति के अत्याचारों को सहन करती है तो वो अपने बच्चों के कारण। स्त्री अपने बच्चों को आर्थिक रूप से सुविधाएं पहुँचाने के लिए अपने पति पर निर्भर रहती है इसलिए वह अपने बच्चों के खातिर पति द्वारा दिए गये हर यातनाओं को सहन लेती है। स्त्री अकेले बच्चों की परवरिश में स्वयं को असमर्थ महसूस करके ही पुरुषों के अत्याचारों को सहन करती है। इसलिए समाज में माँ की ममता को विवशता समझा जाता है। जयश्री रॉय की 'अपनी कैद' कहानी में शैरोन के माध्यम से इसे स्पष्ट किया गया है। शैरोन एक अनाथ स्त्री है जो माइक के झूठे प्रेम में फंस कर उससे शादी कर लेती है लेकिन शैरोन को माइक का असली चेहरा शादी के बाद धीरे-धीरे दिखायी देता व समझ में आता है। माइक शराब पीकर शैरोन को बेवजह बहुत मारता और पीटता था। शैरोन के तीन बच्चे है तथा वह अब बिली के पड़ोस में रहने आई है। बीली शैरोन पर उसके पति के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को देखकर कभी-कभी उसकी सहायता के लिए पहुँच जाता था। बीली शैरोन की विवशता को इस प्रकार व्यक्त करता है कि "मैं कभी

[96] जयश्री रॉय-कायान्तर, अपनी कैद, पृ.सं -34

[97] शांति कुमार-नारीत्व (1998), पृ.सं - 26

अपना फ्रीज खराब होने या तबियत ठीक न होने के बहाने बनाकर उसके दरवाजे पर दूध, फल, ब्रेड, मक्खन की टोकरी रख आता। ऐसे मौकों पर न वह मेरी तरफ देखती न मैं उसकी तरफ। मैं उसकी लज्जा और स्वाभिमान को बहुत एहतियात से ढके रहता, बदले में उसकी आँखे कृतज्ञता में छलछलाती रहती। वह माँ थी, इसलिए बहुत विवश थी ममता के आगे स्वाभिमान को भी अक्सर हार जाना पड़ता है।"[98] उपरोक्त पंक्ति से यह ज्ञात होता है कि बच्चे माँ की कमजोरी समझी जाती है। लेकिन आधुनिक समाज में स्त्री शिक्षा के महत्त्व को जानने लगी है तथा शिक्षा के द्वारा वह अपने अधिकारों को समझने लगी है। साथ ही शिक्षा ने स्त्री को आर्थिक रूप से सक्षम बनाने में सहयोग दिया। स्त्री ने अब बच्चों को अपनी कमजोरी नहीं उसे ताकत बनाया है। 'अपनी कैद' कहानी के बीली की माँ अपने पति को छोड़कर अकेले अपने विकलांग बच्चे का पालन-पोषण कर उसे एक सक्षम मनुष्य बनाने की पूर्ण कोशिश करती है जिसमें वह सफल भी होती है। स्त्री अपने ऊपर किये गये अत्याचारों को तो सहन कर लेती है। लेकिन जब बात अपनी संतान के अधिकारों को छीनने की होती है तो स्त्री में छिपी शक्ति जाग उठती है। वह सारे समाज के विरूद्ध खडी हो उठती है अपनी संतान के अधिकारों की सुरक्षा के लिए। आधुनिक नारी ने अपने अन्दर छिपी ममता की ताकत को पहचाना तथा उसने अपनी संतान को अपनी कमजोरी नहीं उसे अपने जीने की उम्मीद व ताकत बनाया है। जयश्री रॉय की कहानी 'दर्दजा' एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो अपनी बेटी को शिक्षा का अधिकार दिलाने के लिए मुस्लिम समाज के विरुद्ध खडी हो उठती है। 'दर्दजा' की राहिला बचपन से ही तेज और आत्मविशवासी है। राहिला पढ़ना चाहती थी लेकिन उसे पढ़ने नहीं दिया गया तथा उसकी छोटी उम्र में ही शादी कर दी गई। उसका दोष न होते हुए भी पहले पति से उसे तलाक दे दिया गया फिर उसकी मर्जी के खिलाफ उसकी दूसरी शादी पकिस्तान में की गई जहाँ उसने माहिरा को जन्म दिया। राहिला अपनी बेटी महिरा को पढ़ना चाहती थी। लेकिन उसका मुस्लिम

[98] जयश्री रॉय-कायान्तर, अपनी कैद, पृ.सं- 42

समाज उसे इस बात की इजाजत नहीं देता था। लेकिन फिर भी वह अपनी बेटी को पढ़ना चाहती है। राहिला को मुस्लिम समाज की प्रथाओं के विरूद्ध आवाज उठाने के लिए उसे सजा के तौर पर उसके साथ सामूहिक बलात्कार कर उसे पाकिस्तान से निकाल दिया गया। फिर भी राहिला अपनी बच्ची के अधिकारों के लिए लड़ना चाहती है। इस संदर्भ में राहिला अपनी सहेली जानवी से कहती है कि "क्या करूंगी ! अब बस लडूंगी ! अपने लिए, अपनी बेटी के लिए, हम औरतों के पास खोने के लिए है भी क्या जो डरे, अब मरना तो है ही, तो लड़कर मरूंगी ! तय कर लिया है, अब मरने से पहले और नहीं मरूंगी। खुद के लिए इन्साफ नहीं जुटा पायी, मगर अपनी बच्ची के साथ नाइंसाफी कतई होने दूंगी। उसे उन जल्लादों के चंगुल से छुड़ाकर ले आऊंगी, पढ़ाऊँगी, लिखाऊँगी, इंसान बनाऊँगी। वह जियेगी, खुलकर सांस लेगी, उसके पंखों को सारा आकाश मिलेगा...कहते हुए वह आवेश में थरथरा रही थी।"[99]

जयश्री रॉय राहिला के माध्यम से उपरोक्त पंक्तियों से यह स्पष्ट करती है कि स्त्रियों ने अब अपनी कमजोरी पहचान ली है तथा उसने उसी कमजोरी को अपनी ताकत बना ली है। जयश्री रॉय स्त्रियों में यह चेतना जागृत करने का प्रयत्न करती है कि स्त्री शिक्षा के माध्यम से अपने व अपने बच्चों के अधिकारों को प्राप्त करने में सक्षम है। पुराने ज़माने में स्त्रियाँ अपने बच्चों के खातिर पुरुष अत्याचारों को सहन करती थी अब वही स्त्री उन बच्चों के खातिर उनको पूर्ण अधिकार दिलाने के लिए अपने अन्दर छिपी आत्मचेतना को जागृत कर, उनके लिए संघर्ष करने को तैयार है।

[99] जयश्री रॉय-कायान्तर, दर्दजा, पृ.सं-55

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि वर्त्तमान में नारी की भावनाओं, विचारों और विवाह, प्रेम, बलात्कार, वैधव्य, शिक्षा आदि सामाजिक परंपराओं, धार्मिक विश्वासों में बड़ा परिवर्तन आया है। आज की नारी समाज में व्याप्त रूढ़िवादी परंपराओं का अन्धानुकरण नहीं करना चाहती। स्त्री आज पितृसत्तात्मक समाज को उसी की भाषा व उसी के लिए प्रतिरोध करते हुए अपनी चेतना का विकास कर रही है। नारी शिक्षा के माध्यम से अपने मान-सम्मान व अधिकारों को प्राप्त करने का साहस दिखा रही है। बुद्धि और विवेक से संचालित नारी शक्ति अपनी सही पहचान के लिए अधिकाधिक जागरूक हो गई है।

जयश्री रॅय के कहानी संग्रह 'कायान्तर' में स्पष्ट रूप से नारी चेतना के स्वरों को आंका व सूना जा सकता है। जयश्री रॉय के 'कायान्तर' कहानी संग्रह के प्रमुख नारी चरित्र अडिग धैर्य, संघर्ष शीलता, आत्मजागृकता, विवेकनिष्ठ्ता, आत्मनिर्णय की क्षमता आदि से भरपूर है।

समकालीन समाज में नारी की स्थिति एवं गति को जयश्री रॉय के कायान्तर कहानी संग्रह में व्यापक अभिव्यक्ति मिली है। विवाह, दहेज, वैधव्य आदि सामाजिक समस्याओं को जयश्री रॉय ने बहुत ही सटीक तरीके से व्यक्त किया है तथा यह भी दर्शाया है कि किस तरह नारी समस्याओं के संबंध में अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन ला रही है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में आकर जहाँ स्त्री के जीवन मूल्यों में परिवर्तन आया है वही नारी ने शिक्षा के माध्यम से उन परिवर्तनों को जांचने का प्रयत्न भी किया है। 'लिव इन रिलेशन' की प्रथा जहाँ स्त्री में असुरक्षा की भावना उत्पन्न करती है वहीं इस प्रथा से मिले घुटन से आसानी से स्त्री मुक्ति का मार्ग भी सोचती है। जयश्री रॉय के कहानी संग्रह की

नारी अब आसानी से परंपरागत विवाह प्रथा में बंधना नहीं चाहती। अब आधुनिक नारी पढ़-लिख कर अपने पैरों पर खड़ा होकर अपने पसंद के वर से विवाह करना चाहती है। इस तरह वह समाज में फैले अंधविश्वासों को ही स्त्री की मुक्ति का मार्ग बनाना चाहती है। इस तरह वह समाज में फैले धार्मिक अंधविश्वासों को बढ़ावा नहीं देना चाहती। लेकिन वह पुरुष प्रधान ब्रह्मणवादी व्यवस्था की कमजोरी का फायदा उठाकर स्त्री को अपनी मुक्ति का मार्ग सुझाती है। जयश्री रॉय की नारी अपने अधिकारों के प्रति सचेत है। वह यह जानती है कि अगर समाज में अपने अधिकारों को प्राप्त करना है तो उसे शिक्षा प्राप्त कर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना होगा जिससे वह पुरुषों के दोहरे आचरण के विरुद्ध खडी हो सकती है तथा उसका त्याग करने का सामर्थ्य पा रखती है। जयश्री रॉय नारी अब अपनी ममता को अपनी कमजोरी नहीं बनना चाहिए। वह अपनी ममता को अपनी ताकत बनाकर, अपनी संतान के हितों के लिए संघर्ष करने को तैयार है। जयश्री रॉय की स्त्री पर्दा प्रथा के गहरे अँधेरे से बाहर निकलकर समाज में अपनी स्वतंत्र अस्मिता प्राप्त करना चाहती है। जयश्री रॉय के कहानी संग्रह की नारी अब हर तरह से अपने अधिकार प्राप्त करना चाहती है। अब नारी ने अभिशाप में भी वर को खोज लिया है। स्त्री ने नकारात्मक परिस्थिति में भी अपनी सकारात्मक सोच के कारण अपने अस्तित्व को कायम रखा है।'कुहसा' कहानी की पारुल अपने साथ हुए बलात्कार को सकारात्मक रूप में लेते हुए, अपनी माँ बनने की कामना से वह आत्महत्या की भावना को त्याग एक नए आत्मविश्वास के साथ अपने घर लौटती है। उसी प्रकार 'दर्दजा' की राहिला सारी स्त्री समाज को शिक्षा के प्रति चेतना जागृत करती है। 'कायान्तर' की फूलमती समाज की कमजोरी को पहचान कर, उसे ही अपनी ताकत बनाकर अपने ऊपर माता आने का नाटक कर समाज में अपनी विशिष्ट पहचान बनाकर अपने अधिकारों को प्राप्त करती है। 'काँच के फूल' कहानी की हिया आधुनिक नारी को व्यक्त करती है जो समाज के द्वारा लगाई गई अनावश्यक बंदिशों का विरोध करती है। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जयश्री रॉय के 'कायान्तर'

कहानी संग्रह की कहानियाँ व्यापक रूप में स्त्री चेतना से परिपूर्ण है। 'कायान्तर' कहानी संग्रह स्त्री में चेतना जाग्रत करता है कि जब स्त्री को अपने वास्तविक रूप में रहकर वह सब ना मिले जो वह चाहती है तो 'कायान्तर' करना सबसे सर्वश्रेष्ट रास्ता है।

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय

समकालीन महिला कहानीकार और जयश्री रॉय

4.1 समकालीन महिला कहानीकार

4.1.1. कृष्णा सोबती

4.1.2. मेहरुन्निसा परवेज

4.1.3. मन्नू भंडारी

4.1.4. उषा प्रियंवदा

4.1.5. राजी सेठ

4.1.6. ममता कालिया

4.1.7. दीप्ति खण्डेलवाल

4.1.8. नासिरा शर्मा

4.1.9. चित्रा मुद्गल

4.2. समकालीन महिला कहानीकारों में जयश्री रॉय का स्थान

चतुर्थ अध्याय

समकालीन महिला कहानीकार और जयश्री रॉय

सन् 1947 में भारत की आजादी के साथ ही देश दो भागों में बट गया। पूरे देश में आजादी की खुशी के साथ देश के विघटन की मायूसी छाई हुई थी। साथ ही सारे देश में आराजकता की स्थिति फैली हुई थी। देश के विघटन ने दिलों में एक-दूसरे के प्रति भेदभाव की भावना को जन्म दिया। देश विभाजन से चारों ओर जाति के नाम पर सांप्रदायिकता के तौर पर भयंकर नरसंहार और अमानवीय घटनाएँ घटित होने लगी। ऐसे में स्त्री की स्थिति और भी दयनिय होने लगी थी। स्त्री को असुरक्षा की भावना से घर के भीतर कैद कर दिया गया। ऐसे स्थिति में हिन्दी साहित्यकारों ने जिनमें लेखकों के साथ लेखिकाओं ने भी अपने हाथ में कलम उठाकर भोगे हुए जीवन के यथार्थ को यथाप्रकार लिखना आरंभ किया। महिला लेखिकाओं ने विशेषतयः स्त्री की स्थिति को अपने शब्द देना आरंभ किया। भारत की आजादी के साथ आधुनिक काल में शिक्षा नीतियों में परिवर्तन होने लगे तथा स्वयं स्त्रियाँ शिक्षा को अपने लिए आवश्यक समझने लगीं। समाज सुधारकों द्वारा किए गए स्त्री संबंधित सुधार कार्यों से स्त्री में जागरूकता आयी और स्वंय स्त्री के हौसलों ने उड़ान भरी और सदियों से शोषित तथा दमित नारी में मानवी रूप में जीने की आशाएँ पल्लवित हुई। नारी ने अस्मिता का अनुभव किया। पुराने साँचों में छटपटाने वाली स्त्री आत्म अभिव्यक्ति के लिए व्याकुल होने लगी। आजादी के बाद भारतीय भाषाओं में स्त्री की मुक्ति का प्रश्न साहित्य के केंद्र में आया। इस संद्रभ में डॉ.ज्योतिष जोशी लिखते हैं “यह भूमि राजनीति, मानवीय संबंध, सामाजिक व्यवस्था, स्त्री नियति और शोषण जैसे अनेक प्रश्नों से निर्मित हुई है। इसलिए आँसू खोजना यहाँ व्यर्थ सिध्द होगा पुरुष और स्त्री की बराबर प्रतियोगिता और अधिकार की माँग का यह साहित्य जीवन जगत के अनेक

प्रश्नों से भरा पड़ा है।"[1] आजादी के पचास साल बाद भी औरत को संपूर्ण रूप से स्वतंत्रता नहीं मिली। सदियों पहले अंग्रेजों की कैद में रहकर तथा अब स्वजन पुरुष के दबाव में जकड़कर जीवन बिता रही है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रारंभ से ही विविध विधाओं में लेखिकाओं ने अपना मौलिक योगदान दिया है। महिला लेखिकाओं ने स्पष्ट रूप से अपने विचारों को जनसाधारण तक पहुचाने के लिए सबसे सुलभ विधा कहानी को समझा। क्योंकि कठिन से कठिन विषय या बात को कहानी के माध्यम से जनसाधारण को आसानी से समझाया जा सकता है। हिन्दी कहानी यात्रा के प्रारंभिक दौर से ही महिला कथाकारों ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करवाई है। उदाहरण के लिए बंगमहिला (राजेंद्रबाला घोष) की कहानी 'दुलाईवाली' हिन्दी की प्रारंभिक महत्वपूर्ण कहानियों में गिनी जाती है। जब हम स्त्री विमर्श को तलाशने निकलते हैं तब इस विशाल वटवृक्ष की जड़े हमें 'दुलाईवाली' कहनी में ही मिलती है। प्रथम महिला लेखिका के रूप में द्विवेदीकालीन बंग महिला 'राजबाला घोष' का नाम उनकी इसी 'दुलाईवाली' कहानी के लिए उल्लेखनीय है। इनके बाद हिन्दी साहित्य में लेखिकाओं की संख्या में अधिकाधिक वृध्दि होने लगी। इसके साथ ही कथा साहित्य के विकास की यात्रा में महिला लेखिकाएँ 'मील का पत्थर' बनने लगी। इन लेखिकाओं ने अपने परिवेश को जिन यथार्थ दृष्टियों से देखा, समझा है उसे बिना किसी बनावट और परंपरागत आदर्श चेतना से अंकित किया। सातवें दशक में महिला लेखिकाओं का कथा सहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान बनने लगा। इन लेखिकाओं ने साहित्य की विविध विधाओं में अपनी कलम चलाई और नारी जीवन से जुड़ी हर समस्या को साहित्य के माध्यम से जनसंपर्क में लाने का प्रयास किया। इन सभी लेखिकाओं ने नारी के व्यक्तित्व को एक ठोस

[1] डॉ. ज्योतिष जोशी-नया मानदंड-बीते दो दशक और हिन्दी उपन्यास की यात्रा, पृ. सं. 11.

धरातल देते हुए नई जमीन प्रदान की। नारी जीवन की त्रासदी व विड़ंबना को सुक्ष्मता से अंकित किया है।

समकालीन कथा सहित्य में सभी लेखिकाओं का अपना एक महत्वपूर्ण व विशिष्ट स्थान है। जिसमें उन्होंने अपने लेखन की अनूठी या अनोखी छाप छोड़ी है। इन लेखिकाओं ने स्त्रियों में खुद की पहचान प्राप्त करने में मदद की। इन लेखिकाओं ने अपने साहित्य के माध्यम से नारी में शोषण से मुक्ति के लिए संघर्ष का साहस जगाया तथा अपने पैरों पर खड़े होकर अपने अस्तित्व व आत्मसम्मान की रक्षा के लिए प्रेरित किया। इन लेखिकाओं की नारियाँ अब अबला स्त्री नहीं रही जो आँचल में दूध और आँखों में पानी लेकर चलती है बल्कि अब वह अपनी आँखों में अपनी मुक्ति के लिए दहकते शोले व आजादी की मशाल लेकर चलती है। इसके संदर्भ में मालती लिखती है "लेकिन ऐसा लगता है कि ये समकालीन महिला कथाकार कहानी के माध्यम से नारी के शोषण, उसके दुःख-दर्द, मानवीय अधिकार की समस्याओं, मूल्यों के संक्रमण आदि को अपनी कहानियों द्वारा वाणी देने के लिए प्रतिबद्ध है। किसी आंदोलन के घेरे तक ये कहानीकार सीमित नहीं रहती।"[2]

कहानी एवं उपन्यास के विविध स्त्री आंदोलनों में आनेवाली समकालीन महिला लेखिकाएँ प्रमुख हैं- उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, राजी सेठ, नसिरा शर्मा, मृणाल पांडे, सुर्यबाला, शशिप्रभा, शिवानी, दीप्ति खण्डेलवाल, सुनिता जैन, कुसुम अंसल, मैत्रीय पुष्पा, प्रभा खेतान, मालती जोशी आदि। कतिपय लेखिकाओं ने विविध आयामों से नारी की मुक्ति को तथा उनकी समस्या के निवारण की पुकार को साहित्यिक रूप दिया है। आधुनिक काल की महिला कहानीकारों ने स्त्री को घर की चार दिवारी से मुक्त किया है। अब इनकी नारी रोती, छटपटाती नहीं है। वह अपने अधिकारों और शोषण से आजादी की माँग करती हैं।

[2] के. एम. मालती-साठोत्तर हिन्दी कहानी-पृ. सं. 70.

इनकी नारी आर्थिक रूप से सशक्त पुरुषों के समान खड़े होने की मांग करती है। इन लेखिकाओं ने अपनी कहानियों के माध्यम से नारी की पीड़ा, दुःख, संत्रास, छटपटाहट, संवेगों, भावनाओं और मुक्ति के लिए संघर्ष आदि को ऐसे व्यक्त किया है। जैसे ये उन्हीं की आपबीती हो। जहाँ एक तरफ उनकी नारी अपनी पीड़ा में आँसू बहाती है, वही वह दूसरी तरफ आज की नारी उन आँसूओं का चुन-चुन कर बदला भी लेती हैं। ऐसी ही एक लेखिका जयश्री रॉय हैं जिनके कथा साहित्य का केन्द्र बिन्दु स्त्री है। जयश्री रॉय की नारी जहाँ रोती-छटपटाती है, वहीं वह साहस कर एक समय अपने अधिकारों के लिए खड़ी हो उठती है। जयश्री ने अपनी रचनाओं में वर्तमान युग में जी रही नारी की भावनाओं, स्थितिओं और समस्याओं को अभिव्यक्त किया है। नारी मन की पीड़ा और उनके मन की अवस्था को समाज के सामने रखने का कार्य आधुनिक युग की लेखिकाओं ने किया है। अतः इस अध्याय में समकालीन महिला कहानीकारों के साथ जयश्री रॉय की महत्ता तथा उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति को प्रस्तुत किया गया है। इसलिए समकालीन महिला कहानीकारों के साथ जयश्री रॉय के स्थान को समझने के लिए कुछ चुनी हुई समकालीन महीला कहानीकारों का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है-

4.1.1 कृष्णा सोबती

समकालीन महिला कहानीकारों में कृष्णा सोबती का स्थान सबसे ऊपर तथा सम्मानीय है। इन्हें उच्च कोटि की महिला साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान प्राप्त है। अपनी संयमित अभिव्यक्ति और कुशल रचनात्मकता के लिए हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में इनका नाम बहुत ही आदर और सम्मान से लिया जाता है। इन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से स्त्री जीवन को एक नई दिशा प्रदान की है। कृष्णा जी ने स्त्री जीवन के सभी पहलुओं को इतनी बारीकी व गंभीरता से परखा है कि जैसे वह स्वंय उन स्त्रियों की पीड़ा और त्रासदी को जी रही हो। कृष्णा जी मात्र कल्पना पर आधारित साहित्य सृजन को

प्रामाणिक नहीं मानती। वे इस सत्य से परिचित है कि अनुभूत यथार्थ ही प्रामाणिक होता है।

कृष्णा जी ने नारी मन को ही अपने साहित्य का केंद्र बनाया। इनकी नारी पुरुष की दासी बनकर नहीं रहना चाहती है। वह पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलना चाहती है। वह उन सभी अधिकारों को प्राप्त करना चाहती है जिसकी वह हकदार है। इन्हें 'बोल्ड' लेखिका के तौर पर देखा गया है। क्योंकि यह समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर मजबूती से अपनी बात कहती है। इन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री को 'स्व' पहचानने का अर्थ दिया है। इनके संबंध में रोहीणी जी अपने विचार व्यक्त करते हुए कहती हैं "पुरुष के रु-ब-रु खड़े होकर मानवीय संदर्भ में अपनी अस्मिता की पहचान की। बेचैन कोशिश, न्याय की दुहाई ना देकर स्वंय न्याय छीनने की जद्दोजहद, अतीत और वर्तमान की विसंगतिओं को ध्वस्तकर सुखद भविष्य की नींव धरने की सकून भरी चाहत यही तो है महिला लेखन।"[3] कृष्णा सोबती ने अपने जीवन के अनुभवों को शब्द देकर स्त्री जीवन की समस्याओं को प्रस्तुत किया इनके लेखन में विशिष्ट काव्य की कोमलता एवं तन्मयता के साथ माधुर्यता का रमणीय बोध होता है। इनके लेखन में पारिवारिक जीवन की ऐसी समस्याओं को भी स्पष्ट किया जाता है जो अन्य किसी लेखन से बिल्कुल अनछुई रह जाती है। स्त्रियों में इन्होंने अपनी मुक्ति के लिए संघर्ष और अपनी पहचान प्राप्त करने की एक नई उम्मीद जगाई। इनका साहित्य श्लिल-अश्लिल, नैतिक-अनैतिक आदि से दूर केवल वास्तविकता पर ही चित्रित है। इन्होंने यौन संबंधों से संबंधित समस्याओं को उठाने में भी कोई झिझक महसूस नहीं की। वास्तव में स्त्री में स्वयं के प्रति सोचने के लिए मजबूर करने का कार्य सबसे पहले इन्होंने ही किया। आधुनिक स्त्री साहित्य की शुरुआत इन्हीं से मानी जा सकती है। इन्होंने आधुनिक परिप्रेक्ष्य में परंपरा तथा आधुनिकता का समन्वय कर अपनी रचनाओं को एक महत्वपूर्ण स्थान प्रधान किया है।

---

[3] रोहिणी अग्रवाल-एक नज़र कृष्णा सोबती पर, पृ.सं-15

कृष्णा सोबती की रचनाएँ

उपन्यास- डार से बिछुड़ी, यारों के यार, मित्रों मरजानी, तीन पहाड़, जिन्दगीनामा, दिलो-दानिश, गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिन्दुस्तान, सुरजमुखी अंधेरे के। **कहानी संग्रह-** बादलों के घेरे, ऐ लड़की। **संस्मरण-** सोबती एक सोहबत, हम-हशमत (दो भाग)

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में विशिष्ट पंजाबी के तेवर, विलक्षण, खुलापन और बेबाक सहजता समाहित है। 'ड़ार से बिछुड़ी' इनका पहला उपन्यास परंपराओं और रूढ़ियों में जकड़ी नारी के फिसल जाने पर उसके जीवन में भटकने की कहानी है। इनके उपन्यास 'सूरज मुखी अंधेरे' के और 'मित्रों मरजानी' इनके साहस पूर्ण और निडर लेखन का उदाहरण है। क्योंकि इससे पहले किसी भी महिला कथाकार द्वारा स्त्री जीवन पर केंद्रित इतनी गहराई से चिंतन नहीं किया गया था। 'यारों के यार' कहानी संग्रह में कुंठाग्रस्त व्यक्ति के सारे पुराने मूल्य ध्वंस होते हुए नजर आते हैं। 'मित्रों मरजानी' को न तो इश्वर का डर है और न ही समाज का वहाँ स्त्री के पुराने सब बिंबों को चुनौती देती है। कृष्णा सोबती ने स्त्री को भले ही शारीरिक या देह से कमजोर माना है लेकिन वह मानसिक रूप में स्त्री को पुरुषों से किसी भी तरह कम नहीं मानती। कृष्णा सोबती की नारी अपने अधिकारों के लिए तथा सम्मान की प्राप्ति के लिए पुरुषों के विरूद्ध खड़े होने का साहस रखती है। कृष्णा सोबती की नारी स्त्रियों में अपनी स्वतंत्रता के लिए तथा अपनी अस्मिता की प्राप्ति के लिए उनमें चेतना जागृत करने का प्रयास करती है जो आधुनिक युग की प्रत्येक नारी मन की भावना या आवाज़ व्यक्त करती है।

4.1.2 मेहरुन्निसा परवेज़

मेहरुनिसा परवेज़ ने समाज को सूक्ष्म दृष्टि से देखा है, परखा और पहचाना है। इन्होंने दश में व्याप्त मूल संक्रमण, निम्न वर्ग की शोषित सामाजिक व्यवस्था, पारिवारिक जीवन के कटु यथार्थ, निम्न मध्य वर्गीय नारियों की दर्द भरी वाणी एवं पुकार को पहचाना है। साठोत्तरी महिला कथा जगत में मुस्लिम मध्यवर्गीय चेतना के अमर साक्षात्कार के रूप में मेहरुनिसा परवेज़ विराजित है। मेहरुनिसा परवेज़ का जन्म 10 दिसंबर 1944 को मध्यप्रदेश के बस्तर क्षेत्र में हुआ। मेहरुन्निसा परवेज़ एक संवेदनशील और प्रगतिशील विचारों की लेखिका हैं। इनकी कहानियों में नारी जीवन के तमाम पक्षों का यथार्थ चित्रण मिलता है। इन्होंने अपनी कहानियों में स्त्रियों की विवशता, पीड़ा, संघर्ष, त्रासदी आदि को बहुत ही विलक्षण तथा यथार्थ रूप में चित्रित किया है। इन्होंने अपने साहित्य में स्त्री संबंधित सभी समस्याओं जैसे परंपरावादी विवाह प्रथा, बलत्कार, भ्रूणहत्या, विधवा समस्या, वैश्या समस्या, दलित स्त्री की हीन दशा, लिंग भेद, स्त्री का परिवार में दोयम दर्जा, दाम्पत्य जीवन आदि को यथार्थ रूप में प्रकट किया है। मेहरुन्निसा परवेज़ को साहित्य लेखन की प्रेरणा अपने पिता से मिली तथा इन्होंने बचपन से साहित्य लिखने में अपनी रुचि दिखाई। तथा कहानियाँ लिखना आरंभ किया यद्यपि मेहरुन्निसा परवेज़ अधिक पढ़ी लिखी नहीं थी फिर भी उनकी किसी भी रचना से यह दृष्टिगोचर नहीं होता कि वह कम पढ़ी-लिखी है। उनका अनुभव संसार ही उनका शैक्षणिक केंद्र था। उनके जीवन के अनुभवों की डिग्रियाँ साहित्य सृजन का आधार बनी।

मेहरुन्निसा परवेज़ की रचनाओं में महज मुस्लिम जीवन के परिवेश ही नहीं बल्कि हिंदू और ईसाई संस्कृति के परिदृश्य भी मिलते हैं। इनकी रचनाएँ किसी भी संस्कृति के परिदृश्य में क्यों रची गयी हो। लेकिन उनकी रचना का केन्द्र कहीं न कहीं स्त्री ही होती थी। इस संदर्भ में उन्होंने लिखा हैं "मैंने अपनी कलम से नारी व्यथा

लिखी है, बदले में मुझे क्या मिला इसका ब्यौरा मैं देना नहीं चाहती बस इतना जानती हूँ कि मेरी कहानी को पढ़कर किसी एक नारी को भी जिंदगी का सच मिल जाए तो यह मेरा इनाम होगा।"[4] लेखिका ने समाज में नारियों की दयनीय स्थिति को देखकर नारी के बदलते चरित्र को उजागर किया। उनके उपन्यासों में आधुनिक शिक्षा प्रणाली से प्रभावित पुराने मूल्यों से मुक्ति के लिए संघर्ष करती नारी का चित्रण है। मेहरुन्निसा परवेज़ का जन्म आदिवासी क्षेत्र में हुआ इसीलिए वह आदिवासी जीवन के कठिनाइयों के कटु यथार्थ को भलि-भाँति समझती है। मेहरुन्निसा परवेज़ ने आदिवासी समाज पर होने वाले शोषण और गरीबी को अपनी रचनाओं में स्थान देते हुए उन्होंने शोषित स्त्रियों एवं निम्न वर्ग की आर्थिक परेशानियों को दूर करने के लिए काफी प्रयत्न किया है। इन क्षेत्रों की विशिष्ट सेवा के लिए इन्हें कई बार सम्मानित भी किया गया है। इस प्रकार वह एक साहित्यकार होने के साथ-साथ समाज-सेविका भी हैं। लेखिका ने अपने साहित्य में पात्रों को बड़ी बारीकी से रचा है। इनकी रचनाएँ निम्नलिखित हैं-

उपन्यास- आँखों की दहलीज (1969) उसका घर, (1972) कोरजा (1977), अकेला पलास (1981), समरांगण (2002) पासंग (2004)। **कहानी संग्रह** - आदम और हव्वा, टहनियों पर धूप, गलत पुरुष, फालगुनी, अंतिम चढ़ाई, आयोध्या से वापसी, सोने का बेसट, एक और सैलाब, ढहता कुतुबमिनार, अम्मा, समर, मेरी बस्तर की कहानियाँ, लाल गुलाब।

लेखिका की कहानियाँ धर्मयुग, ऋतुचक्र, सारिका आदि विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही है। इनकी रचनाओं में इनके परिवेश का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखता है। इनके उपन्यास में त्रिकोण प्रेम भावना बार-बार उभरती है। लेखिका ने अपनी रचनाओं में अंतर्जातीय विवाह, कामकाजी स्त्रियों का संघर्ष, सरकारी दफ्तरों में पनपने वाले भ्रष्टाचार, आश्रम के स्वामियों आदि द्वारा किए जाने वाले नारी के यौन शोषण को प्रस्तुत किया है। इन्होंने आधुनिक युग में बदलते हुए नारी के विविध

[4] मेहरून्निसा परवेज-सोने का बसर की भूमिका से

आयोमों को दर्शाया है। परवेज़ ने मुस्लिम समाज की स्त्रियों की पर्दे के पीछे छिपी छटपटाहट, उत्पीड़न दुःख, मुक्ति की कामना को अपनी कहानियों में चित्रित किया है। इन्होंने आर्थिक रूप से सक्षम नारी की विडंबना को भी अपनी रचना में स्थान दिया है। इनकी 'कोई नहीं' कहानी प्रेम विवाह करने से टूट जाने वेले दांपत्य जीवन का विश्लेषण किया है। इनकी मेरी 'बस्तर की कहानियाँ' कहानी संग्रह आदिवासी स्त्रियों के त्रासदीपूर्ण एवं प्रातड़ित जीवन की अभिव्यक्ति है। इनका 'अम्मा' कहानी संग्रह मध्य वर्गीय नारी की दुःख, दीनता, खुशी और आदर्श का सच्चा एवं सजीव चरित्र की अभिव्यक्ति है। मेहरुन्निसा परवेज़ ने अपने समग्र सहित्य में बदलते संबंध, टूटते मूल्यों, बदलती दृष्टियाँ, छिन्न-भिन्न होती आस्थाएँ आदि का यथार्थ चित्रण किया है।

4.1.3 मन्नू भंडारी

हिन्दी साहित्य की आधुनिक महिला कथाकार मन्नू भंडारी हिंदी साहित्य के क्षेत्र में अपना अलग और विशिष्ट स्थान रखती हैं। मन्नू भंडारी एक ऐसी लेखिका हैं, जिसने मानव जीवन के सभी पहलुओं को बहुत बारीकी से परखा है। इन्होंने स्त्री-पुरुषों के संबंधों को अपनी पैनी नजरों से जांचा और अभिव्यक्त किया है। मन्नूजी के बचपन का नाम महेंद्र कुमारी था तथा इनका जन्म 3 अप्रैल 1931 को मध्यप्रदेश के भानपुरा में हुआ। मन्नू जी ने अपनी शिक्षापूर्ण करने के बाद कुछ सालों तक अध्यापन का कार्यकिया। बाद में 1964 में वह मिरांडा कॉलेज में प्राध्यापिका के रूप में नियुक्त होकर अवकाश प्राप्त करने तक कार्यरत रहीं। मन्नू जी ने अपने जीवन में जो भी देखा, समझा या उससे सीखा उन्होंने अपने जीवन की उसी अनुभूति को अपने साहित्य में रच डाला। मन्नू जी ने नारी की केवल बाह्य व्यक्तित्व या स्थिति को ही नहीं बल्कि उसके मन और मस्तिष्क में चलनेवाले अंतर्द्वंद को भी अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। मन्नू जी ने अपनी अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए कथा साहित्य को ही सबसे उत्तम समझा। इस सन्दर्भ में वह स्वयं कहती है "सभी विधाओं में कथा विधा से ही मेरा

प्रमुख सरोकार हैं। जहां तक कविता का प्रश्न है उसमें मेरी गति एकदम नहीं है, पर यह तो मेरी अपनी अक्षमता और सीमा है। कविता की निरर्थकता कतई नहीं।"[5] मन्नू जी की नारी पात्र विद्रोही न होकर अपनी परिस्थितियों से स्वयं अंत तक जूझती हुई दिखाई देती है। इनकी नारियाँ पति-पत्नी के संबंधों में रहकर अनेक परेशानियों को झेलती हुई मजबूरन पुरुषों के हाथो शोषित होती है। वह अपने मन में पीड़ा और कुंठा दबाएँ हुए दाम्पत्य जीवन को विवशतापूर्ण व्यतीत करती है। मन्नू जी की नारी उच्च, मध्य व निम्न सभी वर्गों से ली गयी है। मन्नू जी ने नारीजीवन की समस्याओं को अत्यंत मर्मिक और व्यापक सचेतन दृष्टि से अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। इन्होंने जीवन के बहुस्तरीय सच्चाइयों को जिवंत रूप में उभारने की पूरी चेष्टा की है। जो उनकी रचनाओं में स्पष्ट झलकता है। इनकी रचनाएँ निम्न लिखित हैं-

मन्नू भंडारी की रचनाएं :

उपन्यास- एक इंच मुस्कान, आपका बंटी, स्वामी, महाभोज, कालवा (किशोर उपन्यास) **कहानी संग्रह-** एक प्लेट सैलाब, मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, यही सच है, त्रिशंकु, मेरी प्रिय कहानी, आँखों देखा झूठ (बाल-कहानियाँ)। **नाटक-** बिना दीवारों के घर।

मन्नू जी ने अपने साहित्य के अंतर्गत जिन समस्याओं को प्रस्तुत किया है वह वर्तमान जीवन की स्थिति का निर्देशन करने में पूर्णतः सफल है। मन्नू भंडारी ने आज की भ्रष्ट राजनीति को बहुत ही पैनी दृष्टि से नापा है, जिसका स्पष्ट उदाहरण उनका 'महाभोज' उपन्यास है। इसमें स्वाधीनता के बाद के भारत का एक गाँव, वहाँ तक पहुँच गयी दलगत राजनीति, अपराधी तत्वों का राजनीति में प्रवेश, भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था, राजनीति में गुंडा गिरी का प्रवेश, प्रजातंत्र आदि के नाम पर राजनीतिज्ञों की स्वार्थपूर्ति आदि का सच्चा चित्रण मन्नू भंडारी जी ने प्रस्तुत किया है। इस प्रकार 'महाभोज' उपन्यास विकृत राजनीति और टूटते हुए मानव मूल्यों का यथार्थ चित्रण है।

[5] मन्नू भंडारी : नायक-खलनायक विदूषक (संग्रह) पृ. 256

'आपका बंटी' उपन्यास एक बच्चे की मनः स्थिति का चित्रांकन करता है। यह उपन्यास पति-पत्नी के बीच तलाक होने पर मासूम बच्चों की मनःस्थिति पर पड़ने वाले प्रभाव को व्यक्त करता हैं। जिसमे अजय और शकुन परम्परा को छोड़कर अपनी-अपनी राहों में आधुनिकता के पीछे दौड़ लगाते हैं तथा आखिर में वह दोनों तलाक ले लेते हैं। माँ-बाप के अलग होने का शिकार हो जाता है। उनका बेटा बंटी जो उन दोनों के बीच पीसकर रह जाता है। 'एक इंच मुस्कान' उपन्यास उनके पति राजेन्द्र यादव जी के सहयोग से लिखा गया है। मन्नू जी नारी को उसके अकेलेपन और घुटन से मुक्त करना चाहती है। इसलिए उन्होंने कहा है "मैं नारी को उसके घुटन से मुक्त कराना चाहती हूँ। उसमे बोल्डनेस देखना चाहती हूँ...और देखिए बोल्डनेस हमेशा दृष्टि में ही होनी चाहिए। वर्णन में नहीं, मैंने आपनी कहानियों में इसे इसी रूप में चित्रित किया है।"[6]

मन्नू की कहानियों में उन्होंने सेक्स को लेकर चिंतित और अतृप्त नारी का भी वर्णन किया है। 'कील और कसक', 'तीन निगाहों की तस्वीर', बाहों का घेरा' आदि इसके उदाहरण हैं। 'स्त्री सुबोधिनी' कहानी के माध्यम से मन्नू जी ने बड़े ही सहज और स्वाभाविक ढंग से आधुनिक नारी जीवन पर तीखा व्यंग्य किया है। 'त्रिशंकु' कहानी पुरानी वर्जनाओं और नयी सम्भावनाओं का संघर्ष है। 'बाहों का घेरा' कहानी में नारी सम्बन्धी मान्यताओं और रूपों तथा नारी की संवेदनाओं को प्रस्तुत किया गया है। 'एक प्लेट सैलाब' भिन्न-भिन्न लोगों की मानसिकता को प्रकट करती है। 'रानी माँ का चबूतरा' कहानी नारी पीड़ाओं तथा उसकी दयनीय स्थितियों पर प्रकाश डालती है। मन्नू जी की कहानियों को आधुनिक कहानियों के अंतर्गत रखा जा सकता है। मन्नू भंडारी की कहानियाँ जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करती हैं तथा उनकी प्रमुख कहानियाँ 'यही सच हैं', 'रानी माँ का चबूतरा', 'क्षय', 'तीसरा आदमी', 'उंचाई', 'बाहों का घेरा', 'गायब', 'मैं हार गयी', आदि हैं। मन्नू जी ने आधुनिक नारियों की समस्याओं को भी बहुत बारीकी से प्रस्तुत किया है, जिसमें कामकाजी औरते शामिल हैं।

---

[6] उधृतडा-बंसीधर ,राजेन्द्र मिश्र ,मन्नू भंडारी का श्रेष्ट सर्जनात्मक साहित्य पृ.101

4.1.4 उषा प्रियंवदा

हिन्दी कथा साहित्य के जगत में उषा प्रियंवदा अपनी एक विशिष्ठ छवि बनाने में सफ़ल हुई हैं। इन्होंने अपनी कहानियों के केंद्र में उस नारी को रखा है। जो आधुनिकता के पीछे दौडती हुई अकेलेपन और अजनबीपन की छटपटाहट की शिकार हो जाती है। उषा जी के साहित्य पर पाश्चात्य परिवेश का बहुत आधिक प्रभाव दिखाई देता है। उषा जी के पात्र आरम्भ में भारतीय परम्परा से जुडती हुई बाद में आधुनिक जीवन की विडंबनाओं में फँस जाती हैं। अतः उन्हें न चाहते हुए भी बाद में वैसा ही करना पड़ता है, जिसकी इज़ाजत उनका मन नहीं दे पाता। उषा जी के लेखन साहित्य में इनकी कहानियों का प्रिय विषय आधुनिक शहरी जीवन का यथार्थ चित्रण है। इन्होंने बदलते परिवेश के अंतर्गत स्त्री जीवन के मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों को अपने यथार्थ रूप में प्रस्तुत किया है। उषा जी का जन्म उत्तर-प्रदेश के कानपूर शहर में 24 दिसंबर 1930 में हुआ। उषा जी ने इलाहबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम ए तथा पी.एच.डी की पढ़ाई पूरी करने के बाद दिल्ली के लेडीज़ श्रीराम कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया। इसके बाद वह फुल्ब्राईट स्कालरशिप प्राप्त होने पर वह अमेरिका चली गयी। जहाँ उन्होंने ब्यूलिंग्टन, इंडियाना में दो वर्ष पोस्ट-डाक्टरल स्टडीज की। 1964 में विस्कांसिन विश्वविद्यालय मैडिसन में दक्षिण एशियाई विभाग में प्रोफ़ेसर के पद पर कार्य किया। उषा जी ने फिनलैंड के निवासी हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर किम से विवाह किया। इसलिए उनके कथा साहित्य में भारतीय वातावरण के साथ-साथ पाश्चात्य परिवेश का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलकता है। उषा जी ने अपने कथा साहित्य में समाज की विडंबनाओं, विसंगतियों, पारिवारिक कटुताओं, विद्रूपताओं का चित्रण किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पाश्चात नारी ने शिक्षा के माध्यम से अपनी पहचान प्राप्त करने की कोशिश की तथा आधुनिकता को अपनाने का प्रयत्न किया। औरतें घर से बाहर निकल कर, नौकरी कर आर्थिक रूप से अपने पाँव पर खड़ी होने लगी हैं। जिस कारण वह घर और बाहर दोनों

परिवेश की समस्याओं से घिरे रहेने लगी हैं। उषा प्रियंवदा ने स्त्री जीवन की इन्हीं समस्याओं को अपनी रचनाओं में स्थान दिया।

उषा प्रियंवदा का रचना-संसार निम्नलिखित है-

उपन्यास- 1.पचपन खम्बे लाल दीवारे, 2.रुकेगी नहीं राधिका, 3. शेष यात्रा। **कहानी संग्रह-** जिंदगी और गुलाब के फूल, कितना बड़ा झूट, एक कोई दूसरा, मेरी प्रिय कहानियाँ, फिर बसंत आया, शून्य तथा अन्य रचनाएँ

उषा जी के कथा साहित्य में आधुनिक नारी की टूटती संवेदना को प्रस्तुत किया गया है। इनकी कहानियों की अधिकतर नारी कामकाजी है जो किसी न किसी पेशे में कार्यरत है। लेकिन इनकी अधिकतर नारी पात्र या तो शिक्षिका है या प्राध्यापिका हैं। आधुनिक नारी पुराने मूल्यों और रूढ़ियों को छोड़ने के विचार में नए मूल्यों का स्वागत कर रही है और इसी के तहत उसके व्यक्तिगत जीवन पर अनेक परिणाम हो रहे है। उषा जी के कथा साहित्य के सन्दर्भ में लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय कहते हैं कि “आज की नारी जीवन में स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद जो परिवर्तन आए हैं और जिन नए मूल्यों को आत्मसात करने और पुराने मूल्यों को अस्वीकारने के लिए आज की नारी बिना सोचे समझे अपनाने के लिए आकुल हो रही है, उसके क्या-क्या परिणाम हुए हैं, उषा प्रियंवदा की कहानियों में यह अत्यंत सूक्ष्मता के साथ मुखरित हुआ है”।[7]

आधुनिक युग में नारी मन की विभिन्न सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों से विवश होकर नारी मन को कोमल भावनाओं का दमन करना पड़ता है। यही ‘पचपन खम्बे लाल दिवारे’ उपन्यास का केंद्र बिंदु है। सुष्मा को अपने घर की आर्थिक जिम्मेदारियों का उत्तरदायित्व निभाने के लिए दिल्ली में नौकरी करने लगती है। जहां वह अकेलेपन और अजनबीपन का शिकार हो जाती है। नील के आगमन से सुष्मा के जीवन में थोड़ी ख़ुशी तो आती हैं। लेकिन अपने परिवार की जिम्मेदारी के कारणवश

[7] डा. लक्ष्मी सागर वात्सरनेयय-द्वितीय महायुद्धोत्तर हिंदी साहित्य का इतिहास पृ.191

वह चाहते हुए भी नील को अपना नहीं सकती। उषा जी का दूसरा उपन्यास ‘रुकेगी नहीं राधिका’ एक ऐसी आधुनिक युवती पर आधारित है जो अपने पिता से बदला लेने के लिए अपने से 20 वर्ष बड़ें पुरुष से विवाह कर अपने जीवन को बर्बाद करने पर तुल जाती है। ‘शेष यात्रा’ उपन्यास नारी चेतना से प्रभावित है। इसके अंतर्गत स्त्री बदलती परिस्थितियों के अनुसार अपने आपको परिवर्तित कर नयी दिशा प्राप्त करने में सक्षम है।

‘जिंदगी और गुलाब के फूल’ कहानी संग्रह में आज के समाज की जीवंत समस्याओं को चित्रित किया गया है।दाम्पत्य संबंधों में तनाव,पारिवारिक संबंधों में घुटन इत्यादि का यथापूर्ण चित्रण है। इस सन्दर्भ में उर्मिला गुप्ता स्वातंत्रोत्तर कथा के अंतर्गत कहती है व्यक्ति अपने जीवन को सुखी बनाने के लिए अनेक कल्पनाएँ करता है, जो गुलाब के फूल की भाँती सुन्दर और सरस होती है, किन्तु प्रायः जीवन के यथार्थ की कठोर शिला से टकराकर वे चूर-चूर हो जाती हैं और व्यक्ति पीड़ा से सिसककर रह जाता है। ‘कितना बड़ा झूठ’ कहानी संग्रह विदेशी पृष्टभूमि पर बुना गया है। जिसके पात्र एकाकीपन की पीड़ा से त्रस्त है। इस संग्रह की नारी मन में खीज, घुटन, छटपटाहट लिए हुए दूसरे रिश्तों में पूर्णता की तलाश में भटकती हुई अपनी त्रासदी से मुक्त नहीं हो पाती। ‘वापासी’, झूठ, दर्पण, मछलियाँ आदि कहानियों में स्त्री की विवशता, बच्चों की मानसिक तनाव पर जोर दिया गया है। ‘फिर बसंत आया’ कहानी संग्रह में परिवार की छोटी-मोटी समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है। जिसके अंतर्गत वैवाहिक जीवन के तनाव, प्रेम में असफलता, पारिवारिक रिश्तों में मन-मुटाव आदि को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुतु किया गया है। ‘प्रसंग’, ‘शून्य’ ‘आधा शहर’ कहानी आधुनिक स्त्री जीवन की त्रासदियों को व्यक्त करती है। उषा जी भारतीय एवं विदेशी समाज की संगतियों-विसंगतियों को समान स्तर पर अनुभव कर अभिव्यक्त करनेवाली कहानीकार हैं। उषा जी ने नारी की उभरती हुई दृष्टि मानसिक तनाव और उसके अहम् का चित्रण बहुत ही सूक्ष्म दृष्टि से किया है।

4.1.5 राज़ी सेठ

हिन्दी के आधुनिक साहित्यकारों में राज़ी सेठ ने कहानीकार के रूप में विशेष प्रतिष्ठा आर्जित की है। राज़ी सेठ एक ऐसी कथाकार हैं जो सूक्ष्म अंतर वृत्रियों के चिंतन के द्वारा मानव समाज व जीवन से जुड़ी उन सम्पूर्ण समस्याओं का चित्रण करती है। जिसकी तरफ लेखकों का ध्यान अक्सर आकृष्ट नहीं हुआ। राज़ी सेठ की कहानियाँ आज के मानव के अंतर्द्वंद्व, तानाव, अकेलेपन व मानव की विसंगतियों, मूल्यों, संक्रमणों के अलगाव की दिशाओं को प्रस्तुत करते हुए मूल कारणों तथा प्रभावों को संकेतित करती हैं। राज़ी सेठ ने जीवन को जिस तरह से समझा,उसी को उन्होंने अपने साहित्य में अभिव्यक्त किया। राज़ी सेठ ने नारी जीवन के सभी पहलुओं को बहुत ही बारीकी से सूक्ष्म निरीक्षणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया। राज़ी सेठ ने परंपरा और आधुनिकता के बीच कशमकश में फँसी नारी की त्रासदी को अपनी कहानियों में व्यक्त किया है। राज़ी सेठ ने नारी को देवी के रूप में नहीं स्त्री के रूप में स्वीकार किया है। राज़ी सेठ का जन्म 4 अक्तूबर 1935 को नौशहरा छावनी (उत्तर पश्चिमी) सीमान्त प्रदेश के संपन्न परिवार में हुआ। इन्होने अपनी आँखों से भारत विभाजन के दुष्परिणाम को देखा था और स्त्री पर होनेवाले अत्याचारों को महसूस किया था। राज़ी सेठ का साहित्य के साथ अधिक निकटता से संबंध है। इस सन्दर्भ में डा.कश्मीरी लाल लिखते हैं कि “साहित्य से वे अपना नाता कुछ ऐसा अपरिहार्य मानती है,जैसा अपनी ही त्वचा से अपना सम्बन्ध।”[8]

राज़ी सेठ का साहित्य

उपन्यास- तत्सम, निष्कवच। **कहानी संग्रह-** आधेमोड़ से आगे (1979), तीसरी हथेली (1981), यात्रा मुक्त (1987), दूसरे देशकाल में (1992), यह कहानी नहीं (1998), गेम हयात ने मारा (2006), खालीलिफ़ाफ़ा(2007)।

---

[8] डा.कश्मीरी लाल-महिला कथाकार सामाजशास्त्रीय एवं भाषिक संकल्पना

'तत्सम' और 'निष्कवच' उपन्यास में लेखिका ने भारतीय समाज की ज्वलंत समस्याओं को उजागर किया है और आधुनिक नारी का सूक्ष्म चित्रण करने का प्रयास किया है। 'तत्सम' उपन्यास में राज़ी सेठ ने प्रेम को एक नई दिशा में पहचान करवाई है परंतु यह प्रेम स्त्री देह का प्रेम नहीं है। इस उपन्यास में घर परिवार के दायेरे में पिसती स्त्री की यातना और मुक्ति की कामना करती नारी का चित्रण किया गया है। परंपरा और आधुनिकता के द्वंद से उपजी स्त्री की पीड़ा को राज़ी जी ने इस उपन्यास में बहुत ही कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। 'निष्कवच' उपन्यास दो संस्कृतियों के धरातल पर मूल्य संक्रमण का बोध लिए हुए है। 'अंधे मोड़ से आगे' कहानी संग्रह में 11 कहानियाँ है। इस कहानी संग्रह के सन्दर्भ में स्वयं राज़ी जी कहती है कि "जो आजतक मैंने पढ़ा या जाना मुझे कोंद्ता, छूता रहा, भेदता, छेड़ता, संवेदनाओं की तराश तथा परिष्कार के रूप में मेरे बोधों को रूपांतरित करता एक दृष्टि के रूप में मुझे उपलब्ध हुआ, उस सम्पूर्ण चेतना ज्ञान और दृष्टि का एक मूल्य सजग बोध तथा दूसरी और मैं एक अकेली अनगढ़ में इन कहानियों के रूप में चित्रित मेरी मानसिकता और संवेदना।"[9] इस कहानी को नारी समस्याओं को केंद्र में रखकर लिखा गया है। 'तीसरी हथेली' कहानी संग्रह भारत-पाक विभाजन के दौरान नारी का उत्पीडन, स्त्री एवं परुष पात्र को लेकर निम्नवर्गीय और उच्च-वर्गीय संघर्षों का उद्बोधन है। 'महानगर' की गाथा में नारी की पीड़ा,अकेलेपन के एहसास को कुरेदती मानव पीड़ा की व्यथा, बिखरता हुआ दाम्पत्य जीवन का सजीव चित्रण तथा जीने की प्रबल इच्छा रखती हुई, पीसती हुई नारी की संवेदना और सहानुभुति का प्रातिपाद्य ही 'तीसरी हथेली'की विशेषता है। 'यात्रा-मुक्त' कहानी संग्रह न सिर्फ स्त्रियों के प्रति जिम्मेदारियों के निर्वहन की ओर इशारा करती है अपितु अर्थ के अभाव में वर्ग वैषम्यता के बूरे परिणामों का भी चित्रण करती है। 'दूसरे देशकाल' कहानी संग्रह में नारी जीवन की विडंबनाओं के यथार्थ को प्रस्तुत करते हुए निम्न वर्ग से सम्बंधित परिवार की अभावग्रस्तता, अनिवार्यता, नारी के प्रति कामुकता

---

[9] राज़ी सेठ, अंधे मोड़ से आगे पृ.07

की भावना को वर्णित किया गया है। 'खाली लिफ़ाफ़ा', 'गमे हयात ने मारा' कहानी में वर्त्तमान में घटित घटनाओं को प्राथमिकता दी हैं।

राजी सेठ समकालीन स्त्री परक कथा साहित्य लेखन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। जो अपने लेखन में गंतव्य तक पहुचने के लिए किसी चमत्कार का सहारा नहीं लेती। अपने जीवन की यथार्थ अनुभूति को ही शब्द देते हुए राज़ी जी ने अपने रचना संसार का निर्माण किया। इनकी सम्पूर्ण कहानियाँ जीवन के इर्द-गिर्द घटित घटानाओं पर आधारित हैं। उनकी कहानियों में लेखिका की अपनी निजी सम्बन्ध की एक डोरी झलकती हुई दिखाई देती है। वर्ग संघर्ष और वर्ग चित्रण के साथ-साथ प्रथा चिंतन की ओर भी राज़ी जी ने कहानियों के माद्यम से आक्रोश व्यक्त करती है।

4.1.6 ममता कालिया

ममता कालिया ने स्त्री और जीवन संघर्ष को केंद्र में रखकर अपने रचना संसार का निर्माण किया । ममता जी सिद्धान्तों से अधिक व्यावहारिकता में अधिक विश्वास रखती हैं। जिंदगी का हर लम्हा किसी न किसी शक्ल में ममता जी की कहानियों में दिखाई देता है। ममता जी ने अपने जीवन की हर अनुभूति व घटनाओं को अपनी रचनाओं में उतार दिया। इस संदर्भ में वह कहती हैं कि "हर हाल में लिखा हर मूड़ में लिखा अपना गुस्सा अपना प्यार अपनी शिकायतें अपनी परेशानियाँ तिरोहित करने के लिए लेखन को हर समय मददगार पाया जो कुछ रूबरू कहने में सात जन्म लेने पड़ते, वह सब रचनाओं में किसी न किसी के मुँह में डाल दिया। मेरा यकीन है कि लेखन से अच्छा जीवन साथी मुझे क्या किसी को भी नहीं मिल सकता।"[10] हिन्दी साहित्य जगत में अपना विशेष स्थान रखने वाली ममता कालिया का जन्म 2 नवम्बर 1940 को

[10] ममता कालिया-दस प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ.सं. 8

वृंदावन में हुआ। ममता जी ने बी. ए. की पढाई के साथ ही कविता लिखना शुरू कर दिया था। ममता जी ने एम. ए. की उपाधि प्राप्त करने के बाद दौलतराम कॉलेज दिल्ली में प्राध्यापक के पद पर कार्य किया। बचपन से ही पिताजी के द्वारा साहित्यिक माहौल प्राप्त हुआ क्योंकि ममता जी के पिता को साहित्य में बहुत रुचि थ। ममता जी का रचना संसार काफी विस्तृत है क्योंकि उन्होंने अपने लेखन का आधार मानव जीवन संघर्ष को बनाया था।

ममता कालिया का रचना संसार

अब तक ममता जी की अनेकों कहानी संग्रह, उपन्यास और कविताएँ प्रकाशित हो चुके हैं। ममता जी के अब तक नौ कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिन्हें दो खंडों में विभाजित किया गया है। इसके अतिरिक्त उपन्यास, कविता, बाल साहित्य, नाटक आदि रचनाओं का भी सृजन ममता कालिया ने किया है।

उपन्यास- बेघर (1971), नरक दर नरक, एक पत्नी के नोट्स (1997), प्रेम कहानी (1980), दौड़ (2000), अंधेरे का ताला (2009), दुक्खम सुक्खम (2010) आदि।

कहानी संग्रह- छुटकारा (1970), सीट नंबर छह (1976), उसका यौवन (1985), मुखौटा (2003), एक अदद औरत (1979), जाँच अभी जारी है (1989), प्रतिदिन (1989), बोलने वाली औरत (1998), निर्मोही (2004), पच्चीस साल की लड़की (2006) आदि। **अन्य रचनाए-** कितने शहरों में कितनी बार, कल परसों के बरसों (2011), खाटी घरेलू औरत, यहा रोना मना है (नाटक) आदि।

ममता कालिया की कहानियों के केंद्र में स्त्री जीवन है। स्त्रियाँ भी यहाँ विभिन्न हैं। इन स्त्रियों में मध्यवर्गीय कामकाजी, नौकरीपेशा स्त्रियाँ हैं। ममता कालिया ने स्त्री के सुःख-दुःख, दर्द, संवेगों, भावनाओं, त्रासदियों और अंतर्द्वंदों को अपनी कहानी में बहुत बारीकी से पिरोंने का साहस किया है। इन्होंने अपनी कहानियों में स्त्री की संवेदना और आकांक्षा को वाणी दी है। इनकी कहानियाँ वर्तमान जीवन की घटनाओं

की शाश्वत पहचान कराती है। इनकी कहानियाँ व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित है। ‘छुटकारा’ कहानी में नायिका प्रेम से छुटकारा पाकर स्वतंत्र महसूस करती है। क्योंकि उसे वह प्रेम बोझ लगता है। ‘जिंदगी सात घन्टे बाद की’ कहानी कामकाजी अविवाहित स्त्री के अकेलेपन को व्यक्त करती है। ‘अपत्नी’, ‘साथ’ कहानी में विवाह से पहले प्रेमी के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने जैसी स्थितियाँ हैं। ‘सीट नंबर छह’ कहानी आधुनिक विचारों वाली कामकाजी स्त्री की कहानी है। ‘आजादी’ कहानी में नारी की घुटन भरी जिन्दगी का अंकन किया गया है। ‘उसका यौवन’ और ‘अपने शहर की बत्तियाँ’ आदि बेरोजगार युवकों के दिवास्वप्नों की कहानी है। ‘राजू’ कहानी में विधवा स्त्री की अवहेलना और उपेक्षा भरी जिंदगी का चित्रण है। ‘अलमारी’ और बिटियाँ दहेज की समस्या को प्रस्तुत करती है। ‘चिरकुमारी’, ‘प्रतिप्रश्न’ में कामकाजी स्त्री की परेशानी को व्यक्त किया गया है। ‘श्यामा’ कहानी में कामकाजी स्त्री के साथ यौन शोषण की व्यथा है। ‘निर्मोही’ कहानी संग्रह में अविवाहित लड़कियों की समस्या को उठाया गया है। ममता जी के कहानी संग्रह में सामाजिक यथार्थ का पुट दिखाई पड़ता है।

ममता कालिया ने नारी जीवन के विविध पक्षों को सूक्ष्मता से पहचाना है। उनकी कहानियों में शिक्षित मध्यवर्गीय नारी की आशाओं, आकांक्षाओं, संघर्षों और स्वप्नों का यथार्थ परक अंकन हुआ है। ममता जी का ‘बेघर’ उपन्यास मध्यवर्गीय संस्कारों और मूल्यों की मार झेलती स्त्री की नियती का चित्रण है। ‘नरक दर नरक’ उपन्यास मौजूदा समाज व्यवस्था में उपस्थित पढ़े-लिखे युवकों की बेरोजगारी की समस्या को प्रस्तुत करता है। ‘एक पत्नी के नोट्स’ उपन्यास आधुनिक संस्कृति का

प्रभाव, भारतीय संस्कृति का लोप, पुरुषों और स्त्री के संबंधों में बिखराव आदि का चित्रण है। 'लड़कियाँ' उपन्यास कामकाजी स्त्री की मनोदशा का चित्रण है। वही 'दौड़' उपन्यास आधुनिकता तथा भौतिकवादी दौड़ में परिवार, समाज, राष्ट्र के मानवीय मूल्यों के ह्रास का चित्रण है। 'दुक्खम-सुक्खम' जीवन की विपुल आपाधापी में अस्तित्व के बहुतेरे प्रश्नों की गूंज है। ममता जी को बचपन से ही महानगरों में रहने का अनुभव प्राप्त हुआ है। इसलिए उनके साहित्य में महानगरीय जीवन अधिकतर प्रतिबिंबित है। ममता जी स्वंय एक महिला है। इसलिए उन्होंने स्त्री की समस्याओं को बखूबी समझा है, वह कहती है- "लेखिका ममता को पत्नी ममता को कभी तंग नहीं करती, किन्तु पत्नी ममता को लेखिका ममता बार बार तंग करती है। इसी वजह से वे माँ, पत्नी आदि पारंपरिक रूपों को छोड़कर उनसे कटकर लेखन कार्य कर सकती है।"[11]ममता जी ने समकालीन समाज में महिलाओं की स्थिति नारी मनोविज्ञान, सामाजिक विसंगतियों का बोध और उनसे उभरने की बेचैनी का वर्णन इनके लेखन की विशेषता है।

4.1.7 दीप्ति खंडेलवाल

दीप्ति खण्डेलवाल ने हिन्दी साहित्य में नारी की आंतरिक उत्पीड़न और विवशता को बड़े मार्मिक ढ़ंग से प्रस्तुत किया है। उनका साहित्य अपने निज जीवन के अनुभवों व घटनाओं से प्रभावित है। इनकी नारी निराशा भाव से जूझती हुईं संघर्ष करने का साहस रखती है। 'नारी चेतना' इनके कथा साहित्य का वैशिष्ट्य माना जाता है। इनकी कहानियों में नारी पात्र अपने अधिकारों के प्रति सजग दिखाई देती है। दाम्पत्य संबंधों का भिन्न-भिन्न कोणों से सूक्ष्म चित्रण करते हुए दीप्ति जी ने नारी के विद्रोहात्मक रूप का भी चित्रण किया है। इन्होंने अपनी कहानियों में नारी की आजादी के लिए छटपटाहट को दर्शाया है। दीप्ति जी की नारी रोने बिलकने की बजाय विद्रोह

[11] ममता कालिया, मेरे साक्षात्कार, पृ.सं-24.

करने के लिए खड़ा होना चाहती है। दीप्ति जी ने अधिकांश कहानियों में पति-पत्नी की टकराहट को दिखाया है साथ ही वह अपनी कहानियों में परंपरा की रक्षा करती दिखाई देती है। दीप्ति खण्डेलवाल 'सेक्स' को लेकर अपनी कहानियों में बहुत स्वच्छंद और बेबाक रूप से लिखती है जिसके कारण उनके कथा साहित्य पर अश्लीलता का आरोप लगाया गया है। दीप्ति जी की प्रत्येक कहानी में एक दर्द, टीस, रोदन की अनुभूति होती है । इसी के विरोध में लेखिका ने स्त्री में चेतना जगाने का प्रयास किया है।

दीप्ति जी का जन्म 21 अक्तूबर 1930 को हुआ। हालाँकी दीप्ति जी अधिक शिक्षित नहीं है। फिर भी उनका साहित्य जगत किसी भी अन्य समकालीन कथा साहित्यकार से कम नहीं है। दीप्ति खण्डेलवाल का कथासाहित्य व रचनाएँ निम्न प्रकार से हैं-

उपन्यास - वह तीसरा, प्रिया, कोहरे, प्रति ध्वनियाँ।

कहानी संग्रह - कड़वे सच, वह तीसरा, धूप के अहसास, सलीब पर, दो पल की छाह, नारीमन, औरत और नाते।

इसके अतिरिक्त उन्होंने लगभग 200 कविताएँ लिखी हैं। दीप्ति जी ने नारी के आधुनिक एवं परंपरागत रूप को अपनी कहानियों में अभिव्यक्त किया है। "दीप्ति खण्डेलवाल की कहानियों की विशेषता है पाठक के द्वारा अत्यंत आत्मीयता के क्षणों में रचनात्मक अनुभव जगत का साक्षात्कार होना। फिर चाहे कहानी पति-पत्नी संबंधों के विघटन की संवेदना का अनुभव कराए या आज के आर्थिक संकट से जूझते मनुष्य की विवशता से परिचित करे, पाठक एक सहज विश्वास से कहानी में व्यक्त स्थितियों का साक्षात्कार करता हुआ मानवीय त्रासदी का आस्वादक होता है। वह कहानी की एक स्थिति को एक-एक भावखंड को भोगता हुआ पात्रों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण हो उठता

है।"[12] 'कड़वे सच' इनका पहला कहानी संग्रह है जिसमें किस तरह नारी सच्चे दाम्पत्य सुख के लिए मछली की तरह तड़पती है उसका मर्मस्पर्शी चित्रण करता है। 'क्षितिज' कहानी दांपत्य संबंधों में पड़ी दरार को चित्रित करता है। 'शेष-अशेष' कहानी बलात्कार के उपरांत औरत के जीवन में क्या शेष रह जाता है इसी का उल्लेख है यह कहानी। 'देह की सीता' कहानी में सतयुग की सीता और आज की नारी सीता की सोच में परिवर्तन को बताया गया है। 'वह तीसरी' कहानी संग्रह में नारी की आधुनिकता एवं परंपरागत रूप को रूपायित किया है। 'कायर', 'प्रेत', 'जमीन', 'भूख' आदि कहानियों में भारतीय परंपरा को मान्यता देनेवाली आदर्श नारी पात्रों की झलक मिलती है। 'धूप के अहसास' कहानी संग्रह की कहानियों में दीप्ति जी ने नारीमन को उसकी संवेदनाओं को, उसकी पीड़ा को व्यक्त किया है। 'आत्मघात', 'निर्बंध', 'हव्वा' आदि कहानियों में सेक्स की अनिवार्यता का विस्तृत रूप में चित्रण हुआ है। वही देह से परे, एक और सीता कहानियों में पति-पत्नी के बीच पड़ने वाली दरारों से टूटते रिश्तों को अभिव्यक्त किया है। 'दो पल की छाह' और 'औरत और नाते' कहानी संग्रह में नारी मन की विश्लेषणात्मक कहानियाँ है जो उसकी नारी संवेदना उसके अंतद्वंद तथा उसकी पीड़ा को व्यक्त करते हुए अधिकारों के लिए संघर्ष करती नारी को अभिव्यक्त किया है। 'वह तीसरा' उपन्यास में दीप्ति जी ने पति-पत्नी के बीच अनजाने ही आ जानेवाले अंह को दर्शाया है। 'प्रिया' उपन्यास नारी के आहत, खंडित, जर्जर प्यासे प्रियत्व की कहानी से युक्त है। इसमें उन्होंने पुरुष द्वारा छली नारी की पीड़ा और आक्रोश को दर्शाया है।

[12] समकालीन कहानी समांतर कहानी-डॉ. विनय, दि मैकेनिकलक ऑफ इंडिया लि. पृ. सं.-37.

'कोहरे' उपन्यास में आधुनिक नारी का चित्रण है जो अपने अधिकारों व अस्तित्व के प्रति सजग है।

दीप्ति जी ने पूरानी रूढ़ियों का त्याग करते हुए नारी को उसके वास्तविक यथार्थ रूप में अभिव्यक्त किया है। दीप्ति खंडेलवाल नारी चेतना का विकास करती बोल्ड लेखिका है।

4.1.8 नासिरा शर्मा

नासिरा शर्मा मानवीय संवेदनाओं को चित्रित करने वाली एक अलग तरह की लेखिका हैं। पूरे संसार में फैला आतंक इन्हें कटकता और परेशान करता है और इसी चीज से दुःखी होकर वह मनुष्य को शांति का पाठ पढ़ाना चाहती हैं। नासिरा जी ने अपने अनुभवों को रचनात्मक बनाकर एक विस्तृत रूप दिया है। इन्होंने मुस्लिम समाज में रूढ़ियों के बंधनों से जकड़ी हुई नारी समाज की विवशता का वर्णन किया है। नासिरा जी ने ईरान, ईराक, अफगानिस्तान एवं भारत के समाज, संस्कृति और राजनीतिक विषयों पर भी अपनी विशेष लेखनी चलाई है। ईरान और ईराक क्रांति से संबंधित उनकी ढेरों रचनाएँ समय-समय पर प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। नासिरा जी ने स्त्री जीवन के नए-नए आयामों को वह अपने कथा साहित्य के माध्यम से वाणी देती रही हैं। स्त्री के संदर्भ में वह कहती है "मेरी नजर में औरत को अपनी तरह जीने की आजादी मिले। उसको इंसान की तरह जीने का हक मिले मगर सारे कर्तव्यों से मुक्ति नहीं। फिलहाल स्त्री विमर्श का अर्थ अक्सर 'हंटरवाली' से लगाया जाता है जो पूरे समाज में अकेली होती है जबकि स्त्री विमर्श या स्त्रीवाद का अर्थ

व्यापक अर्थों में हो कि जो बदलाव आए या लाया जाए उससे सारी स्त्रियाँ फायदा उठा सकें।"13

नासिरा शर्मा का जन्म अगस्त 1948 में साहित्यिक नगरी इलाहाबाद में एक पढ़े-लिखे मुस्लिम परिवार में हुआ। फारसी भाषा और साहित्य में आपने एम.ए किया है। नासिरा जन्मना मुस्लिम होने के साथ बावजूद हिन्दू के साथ विवाह किया। इस प्रकार दोहरे अनुभव और जानकारी ने उनके लेखन को निखर दिया है एवं उसका आयाम विस्तृत हुआ है। हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी एवं फारसी भाषाओं पर इनकी गहरी पकड़ है। जो इनके साहित्य में स्पष्ट झलकता है।

नासिरा शर्मा जी का साहित्य सृजन

कहानी संग्रह- शामी कागज, पत्थर गली, संगसार, इबने, मरियम, सबीना के चालीस चोर, खुदा की वापसी आदि। **उपन्यास-** सात नदियाँ एक समन्दर, शालमली, ठीकरे की मंगनी, जिन्दा मुहावरें। **अनूदित रचनाए-** किस्सा जाम का, काली छोटी मछली, बरनिंग पैयर, ईराक की रोचक कहानियाँ, शाहनाम फिरदौसी आदि। **बाल साहित्य-** संसार अपने-अपने, मरमेड एण्ड ब्रोकन जार। **टेली फिल्मे-** काली मोहनी, सेमल का दरख्त, आया वसंत सखी आदि।

नासिरा जी को बचपन से ही साहित्य में रुचि थी जिसकी प्रेरणा उन्हें अपने परिवार के साहित्यिक वातावरण से मिली थी। उन्होंने बचपन से ही लिखना प्रारंभ कर दिया था। नासिरा जी की 'पत्थर गली' और 'खुदा की वापसी' कहानी संग्रहों में भारतीय मुस्लिम महिलाओं के रहन-सहन, अनुभूतियों और विडम्बनाओं को निकट से देखा जा सकता है। 'सबीना के चालीस चोर' संग्रह में स्वतंत्र भारत में पल रहे साम्प्रदायिक फसादों, शोषण तथा भ्रष्टाचार के चित्र स्पष्ट देखे जा सकते हैं। 'शमी

[13]नासिरा शर्माः नासिरा शर्मा से साक्षात्कार, दोआब, अंक जून-2007. पृ सं.-176.

कागज' और 'खुशबू का रंग' दो कहानियों में लेखिका ने ऐसी नारी का चित्रण किया है जो अपने पहले प्यार को कभी नहीं भूल पाती, चाहे वह प्यार उसे पति के रूप में मिला हो या प्रेमी के रूप में वह अपना संपूर्णजीवन अपने पति या प्रेमी के साथ बिताए क्षणों की यादों के सहारे जीती है। 'दादगाह', 'पतझड़ के फूल' आए दिन हो रहे तलाक और पति-पत्नी के टूटते रिश्ते और अनमेल विवाह की शिकार होती नारी की छटपटाहट को व्यक्त करती है। 'परिंदे' और 'मुट्टी भर धूप' भारत के उन युवा वर्ग की कहानियाँ है जो आर्थिक आभावों और बेकारी के कारण अपनी जीविका चलाने के लिए विदेश चले जाते हैं और वहाँ अकेलेपन और अजनबीपन की पीड़ा को सहन करते हैं। 'संगसार' कहानी संग्रह राजनैतिक अव्यवस्था से पीड़ित ईरानी समाज की व्यथा का चित्रण है। 'दरवाज-ए-कज़विन' में एक ऐसी नारी का चित्रण है जिसे न चाहते हुए वैश्या बनना पड़ता है तथा अंत में नर्दोष होते हुए भी मृत्युदंड भोगती है। 'दहलीज' कहानी की नायिका घुटघुट कर जीने की बजाय समाज से विद्रोह कर एक स्वतंत्र और स्वावलंबी जीवन जीने को श्रेयस्कर समझती है। नासिरा जी का 'शाल्मली' उपन्यास आज के आधुनिक युग की पढ़ी-लिखी और ऊँचे पद पर काम करने वाली नारी की कथा है, जिसे घर पर पति के पाषाण युग की संकीर्ण सोच और ईर्ष्या का सामना करना पड़ता है। शाल्मली अपने परिश्रम और लगन से समाज में मान-सम्मान तो प्राप्त कर लेती है लेकिन परिवार के प्रेम से वंचित रहती है। 'ठीकरे की मंगनी' उपन्यास एक ऐसी मुस्लिम परिवार की लड़की की कहानी है जिसमें उसे अपने परिवार की रूढीवादी तथा अंधविश्वासी सोच के कारण अपने अरमानों और स्वप्नों को स्वाहा करना पड़ता है। 'जिन्दा मुहावरें' उपन्यास भारत पाकिस्तान विभाजन पर आधारित है। जिसमें देश के विभाजन के कारण दो देशों में बंट जाने वाले लोगों की पीड़ा, कसक को मार्मिक ढंग से उकेरा गया है। नासिरा शर्मा स्वयं एक स्वाभिमानी नारी है और

यही स्वाभिमान वह संसार की हर नारी में देखना चाहती है। नासिरा जी के अनुसार 'नारी को अपने अधिकारों की खोज कर उन्हें पाने के लिए संघर्ष करना चाहिए'। नासिरा जी नारी की हिमायती होने के साथ-साथ पूरी मानव जाति की शुभ चिंतक है। आपने नारी की कुंठा. पीड़ा और अनुभूतियों के अतिरिक्त देश-विदेश में युद्धों और बटवारों से पीड़ित विद्रोह करने वाले लोगों की करुणा को मर्मस्पर्शी ढंग से चित्रित किया है। नासिरा जी स्त्री को उसके अधिकारों की प्राप्ति के लिए स्वंय संघर्ष के हक में है। नासिरा जी का 'शाल्मली' उपन्यास नारी के लिए प्रेरणाप्रद उपन्यास है। नासिरा जी की कहानियाँ स्त्रियों में आत्मविश्वास का संचार करती हैं। तथा वह स्वंय नारियों के लिए एक मिसाल है।

4.1.9 चित्रा मुद्गल

हिन्दी की सुप्रसिध्द कथाकार चित्रा मुद्गल ने अपनी रचना और रचना धर्मी व्यक्तित्व से हिन्दी साहित्य जगत में अपनी अलग पहचान बनाने में सफल हुई हैं। चित्रा मुद्गल आठवें दशक की उन बहुचर्चित कथाकारों में से है, जो सर्वहरा की जिंदगी को उनके जीवन का अंग बनकर देखने तथा उकेरने की कोशिश करती है। चित्रा मुद्गल यथार्थोन्मुखी लेखिका के साथ-साथ भारतीय संस्कृति की चिंतक भी हैं। चित्रा मुद्गल का जन्म 10 दिसम्बर 1944 को चेन्नई में हुआ है। जबकि इनका मूल निवास उत्तर प्रदेश है। चित्रा मुद्गल को लेखन का गुण अपने पिता ठाकुर प्रताप सिंह से विरासत में मिला है। चित्रा मुद्गल जी साहित्यकार होने के साथ-साथ समाज सेविका भी है।

चित्रा मुद्गल की रचनाएँ-

उपन्यास- एक जमीन अपनी (1990), आवां, गिलिगडु, दौड़ आदि। **कहानी संग्रह-** इस हमाम में, ग्यारह लंबी कहानियाँ, जहर-ठहरा हुआ, लक्षागृह, अपनी वापसी, जिनावर आदि। **संपादन-** असफल दाम्पत्य कहानियाँ, टूटते परिवारों की कहानियाँ। **बालकथा संग्रह-** सबक, जंगल का राज आदि।

चित्रा जी को 1986-87 में बच्चों के नाटक 'जंगल का राज' के लिए साहित्य अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ। 'एक जमीन अपनी' को फणीश्वर नाश रेणु पुरस्कार दिया गया। 'आवां' उपन्यास के लिए हिन्दी अकादमी दिल्ली की ओर से वर्ष 2000 का साहित्यिक कृति सम्मान मिला। चित्रा मुद्गल जी को उनकी रचनाओं के लिए अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। चित्रा जी का 'एकजमीन अपनी' उपन्यास आधुनिक विज्ञापन जगत की प्रतियोगिता और प्रकाशभरी विसंगतियों में पली स्त्रियों की चुप्पी को उत्तर आधुनिक स्त्री समाज की विडम्बनाओं के साथ अनावृत किया है। चित्रा जी ने आधुनिक मध्यवर्गीय स्त्री की अस्मिता और आजादी की तलाश में उसके विरोधाभासी पक्षों को उद्घाटित करते हुए मुंबई के विज्ञापन जगत की अंतरंग तस्वीर अपने उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में प्रस्तुत किया है। 'आवां' एक स्त्री प्रधान उपन्यास है। जिसमें नायिका निर्बल और दमित नहीं है बल्कि दमन शोषण और कुरीतियों से संघर्ष करते हुए अग्रसर होती है।'आवां' की नारी आर्थिक रूप से स्वावलंबी है तथा साहस और उत्साह से सभी जुल्मों का सामना करती है। 'गिलगडु' उपन्यास वर्तमान समय में बजुर्गों की दयनीय स्थिति पर आधारित है। चित्रा जी ने नौकरी करने वाली महिलाओं और निम्नवर्गीय महिलाओं की समस्याओं पर जोर दिया है। 'ग्यारह लम्बी कहानियाँ' कहानी संग्रह कामकाजी स्त्री की परेशानियों को प्रस्तुत करते हुए औरतों को चेतना प्रदान करता है। 'मामला आगे बड़ेगा अभी' में चित्रा मुद्गल ने संयुक्त परिवार का समर्थन करते हुए मध्यवर्गीय परिवार की नारी समस्या को उद्घाटित किया है।'चेहरे' कहानी संग्रह आर्थिक तंगी के दबाव में जीवन की परेशानियों से ग्रस्त मानवीय संवेदना के चरम का बेजोड़ नमूना है। 'लपेट' कहानी संग्रह में मध्यवर्गीय समाज की नारी अपने स्वाभिमान एवं अस्तित्व हेतु संघर्ष करती दिखती है। 'जब तक

बिमलाएं' कहानी समाज के निचले तबके की कही जाने वाली बिमला अपनी बच्ची के बलात्कारी के विरूद्ध थाने जाकर मुकदमा दर्ज कराती है। 'नाम' कहानी सामंती जीवन की पथभ्रष्टता, उसके अत्याचार और दिखावे को प्रस्तुत करती है। चित्रामुद्गल की 'प्रमोशन' कहानी की ललिता अपनी नौकरी में खुद मेहनत से प्रमोशन पाती है। उसका पति सुभाष मन ही मन उस पर शक करता है कि डॉ. कोठारी ने ललिता को अपने वश में करने के लिए ही प्रमोशन दिया है। लेखिका इस संदर्भ में कहती है- "पुरुष की यदि पदोन्नति हो तो वह उसकी लगन और मेहनत का परिणाम है। स्त्री अगर अपनी लगन और परिश्रम से उन्नति करे तो वह उसकी अपनी प्रतिभा नहीं किसी डॉ. कोठारी की अनुकम्पा है और बीच में शरीर आये बिना यह संभव नहीं।"[14]'बयान' संग्रह में ग्रामीण लोगों के दैनिक जीवन में घटित होने वाली घटनाओं के साथ छुआछूत और जाति-पाति के भेद भाव को भी दिखाया गया है।

चित्रा जी ने अपनी कहानियों में मजदूर वर्ग को भी स्थान दिया है। चित्रा मुद्गल अपने लेखन को स्त्रीवाद से बचाते हुए अपनी कहानियों में वर्गीय सीमाओं का अतिक्रमण कर निम्न वर्ग के पक्षधर रचनाकार के रूप में अपनी पहचान बनायी है। विशेषतः बंबई की झोपड़पट्टी जीवन की सच्चाईयों और त्रासदियों का यथार्थ चित्रण किया है। चित्रा जी की नारी स्वंय के प्रति जागरूक है तथा आवश्यकता पड़ने पर वह अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने के लिए खड़ी हो जाती है।

निष्कर्षत: यह कह सकते हैं कि साठोत्तर महिला लेखन के दौर में ऐसी लेखिकाओं का उदय हुआ जिनका अपने लेखन पर पूर्ण अधिकार था। जो वह सोचती थी बिना फेरबदल के लिखती थी चाहे वह 'सेक्स' का विषय हो या कोई ओर स्त्री संबंधी विषय क्यों न हो। समकालीन महिला लेखिकाओं ने स्त्री को लेकर नई चेतना के

---

[14] चित्रा मुद्गल- प्रमोशन, वर्तमान साहित्य, जून 1987.

निर्माण की पहल की। समकालीन महिला लेखिकाओं ने स्त्री में आत्मविश्वास का संचार किया। इन साहित्यकारों ने महिलाओं को अपने हक व अधिकारों की प्राप्ति के लिए नई दिशा प्रदान की तथा इन्हें समाज की बेड़ियों में जकड़ी नारी को अपने मुक्ति का रास्ता ढूढ़ने के लिए प्रेरित किया। समकालीन लेखिकाओं ने न सिर्फ स्त्री पर अपनी लेखनी चलाई बल्कि जीवन के सभी आयामों को बारीकी से समझ उसे अपनी लेखनी का आधार बनाया। इन्होंने उच्च वर्ग, मध्यवर्ग व निम्नवर्ग सभी वर्गों की स्त्रियों को अपने रचना संसार में शामिल किया तथा आधुनिक समाज में उनकी स्थिति को दर्शाया है। समकालीन लेखिकाओं के अनुसार स्त्री किसी भी वर्ग से संबंधित क्यों न हो वह किसी न किसी तरह पुरुषों के अत्याचारों का शिकार अवश्य होती है। इसलिए नारी को स्वंय अपनी लड़ाई लड़ने के लिए साहस दिखाना होगा। उसे चार दिवारी से मुक्त होकर समाज में अपनी स्वतंत्र पहचान के लिए संघर्ष करना होगा।

4.2 समकालीन महिला कहानिकारों में जयश्री रॉय का स्थान

आधुनिक महिला कहानिकारों में जयश्री रॉय का अपना एक विशिष्ट स्थान है। जयश्री जी के कथा साहित्य में आधुनिक नारी का जीवन विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में अपनी समग्रता के साथ अंकित हुआ है। साठोत्तरी पूर्व हिन्दी कथा साहित्य जगत में कुछ गिनी चुनी लेखिकाएँ ही थीं। छठे दशक के बाद समकालीन सामाजिक परिवेश और मध्यवर्गीय जीवनशैली को केंद्र में रखकर इन महिला कथा लेखिकाओं ने हिन्दी कथा साहित्य को संवृद्ध और विस्तृत किया है। जिन्होंने जीवन की सभी समस्याओं को अपनी रचना शैली में शामिल किया। समकालीन लेखिकाओं ने स्त्री जीवन की समस्याओं को बहुत सूक्ष्म दृष्टि से आंका और उन समस्याओं को अपने साहित्य के माध्यम से जनसाधारण तक पहुँचाने का प्रयत्न किया। इन लेखिकाओं ने नारी को अपने अस्तित्व का बोध कराने का प्रयत्न किया। ऐसी ही चर्चित समकालीन महिला लेखिकाओं में कृष्णा सोबती, मेहरुन्निसा परवेज, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, राजी सेठ, ममता कालिया, दीप्ति खंडेलवाल, नासिरा शर्मा, चंद्रकांता, चित्रा मुद्गल आदि

महिला लेखिकाओं ने अपने साहित्य के माध्यम से हिन्दी साहित्य को एक नई दृष्टि और दिशा प्रदान की है।

उपर्युक्त महिला लेखिकाओं ने हिन्दी साहित्य जगत में अपनी-अपनी अलग पहचान व स्थान बनाया है। ऐसी ही एक लेखिका जयश्री रॉय है जिन्होंने आधुनिक सामाजिक परिवेश, नारी जीवन की संवेदना और नारी मन को अपनी कहानियों के माध्यम से चित्रित किया है। इनकी कहानियाँ सभी वर्गीय जीवन से जुड़ी हुई है। उनकी कहानियों में नारी स्वातंत्र्य के साथ परंपरा में ही नई राह की ललक दिखाई देती है। जयश्री रॉय अपने अनुभव और अंतर्जगत के राग-विराग को एक सहज अभिव्यक्ति देती है। अन्य समकालीन लेखिकाओं की भाँति जयश्री रॉय की कहानियों का विषय भी जीवन ही है। और यही इनके लेखन की प्रेरणा भी। जयश्री रॉय का साहित्य विषय विविधता से भरा हुआ है। लेकिन इनके साहित्य का केंद्र बिंदू स्त्री ही है। इनकी कहानियाँ स्त्री जीवन के संघर्षों की अंर्तकथाएँ हैं। इन्होंने अकेली स्त्री के मन की पीड़ा को व्यक्त किया है। लेकिन इनकी यह स्त्री भरे-पूरे परिवार में अकेलापन महसूस करती है। किसी पुरुष लेखक के कथासाहित्य से निश्चित ही लेखिकाओं के कथा साहित्य के चित्रण में किया गया नारी चित्रण अधिक सूक्ष्म, संवेदनशील, सत्य और प्रभावशील होता है।

कृष्णा सोबती का नाम समकालीन महिला लेखिकाओं में सबसे पहले लिया जाता है। कृष्णा जी मात्र कल्पना पर आधारित साहित्य सृजन को ही प्रामाणिक नहीं मानती। वह जीवन की अनुभूति को सत्य मानती है। इन्हें हिन्दी साहित्य जगत के अंतर्गत बोल्ड लेखिका के रूप में जाना जाता है क्योंकि यह समाज में महिलाओं की स्थिति को लेकर मजबूती से अपनी बात कहती है। कृष्णा सोबती ने आधुनिक नारी की समस्याओं को प्रस्तुत किया है। इन्होंने शहरों में काम करने वाली स्त्री के संघर्ष को व्यक्त किया है। इस संदर्भ में उपेन्द्रनाथ अश्क कहते हैं- “मुझे हैरत होती है कि कोई कथा लेखिका दफ्तर में काम करने वाली क्लर्कों के बारे में कैसे इतना सफल और उत्कृष्ट

रचना सृजन कर सकती है। लगता है जैसे उसने किसी सुराख से उनकी तमाम भाव-भंगिमाओं को निरंतर देखा है और उस यथार्थता को गहराई प्रदान कर उसे प्रामाणिक बना दिया है।"[15]कृष्णा जी ने स्त्री को अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष कर पुरुष अंहकार का मुकाबला करने में सक्षम बनाया है। कृष्णा जी नारी को पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने की प्रेरणा प्रदान करती है। जयश्री रॉय के कथा साहित्य में भी स्त्री को पुरुषों के अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करते हुए प्रस्तुत किया गया है। इनकी 'दर्दजा' कहानी स्त्री अधिकारों के प्राप्ति के लिए संघर्ष का एक उत्तम उदाहरण है।

मेहरुन्निसा परवेज़ ने नारी विवशता, जिन्दगी की कड़वाहट और आर्थिक जटिलता को अपनी कहानियों के माध्यम से व्यक्त किया है। मेहरुन्निसा परिवारों के विश्वासों-अविश्वासों उनके आंतरिक द्वंद पर जोर देते हुए प्रगतिशीलता को प्रस्तुत किया है। उनके उपन्यासों में आधुनिक शिक्षा प्रणाली से प्रभावित, पुराने मूल्यों से मुक्ति दिलाने के लिए संघर्षरत नारी का चित्रण है। इन्होंने महानगरीय स्त्रियों के अकेलेपन को व्यक्त किया है। जयश्री रॉय की 'दर्दजा' तथा 'हव्वा की बेटियाँ' कहानी मुस्लिम परिवेश में नारी की मुक्ति के संघर्ष तथा उसकी दयनीय स्थिति को दर्शाया गया है। 'दर्दजा' की राहिला शिक्षा के अधिकार से अपने बेटी को वंचित नहीं रखना चाहती है। तथा यह कहानी मुस्लिम समाज के स्त्री के अधिकारों के हनन की दास्तां है। 'पिंजरा' कहानी स्त्री के अपनी मुक्ति की कामना करती नारी मन की व्यथा है। जिसमें सुजा द्वारा पहले पिंजरे का दरवाजा खोल देने और फिर स्वंय मुक्ति के भाव से भर जाने तथा स्वंय को जिंदा रखने की कोशिश में अपनी मुक्ति की संभावनाओं का अनुसंधान करती स्त्री की कहानी है।

---

[15] राजरानी शर्मा-हिन्दी उपन्यासों में रूढ़िमुक्त नारी, पृ सं. 58.

उषा प्रियंवदा ने अपने कथासाहित्य में मध्यकालीन नारी की समस्याओं का चित्रण किया है। मध्यवर्गीय नारी अपने प्राचीन मूल्यों को छोड़ नये मूल्य अपनाना चाहती है। वह घर की दहलीज लाँघकर बाहर निकलती भी है तो उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। स्त्री की इसी तनावभरी जिन्दगी का चित्रण उषा जी ने अपने कथा साहित्य में किया है। इससे अलग मन्नू भंडारी ने समाज के निम्न वर्ग को अपने साहित्य का केंद्र बनाया है। मन्नू जी की मध्य और निम्न दोनों वर्गों की स्त्रियाँ अपनी आकांक्षाओं की प्राप्ति कर अपना सम्मान प्राप्त करना चाहती है। पर चाहकर भी वह पुरानी रूढ़ियों को छोड़ नहीं पाती। नारी के इसी द्वंदभरी जिन्दगी का चित्रण मन्नू भंडारी की कहानियों में मिलता है। उषा प्रियंवदा और मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में मध्य और निम्न वर्गीय स्त्रियों की समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है। जयश्री रॉय के कथासाहित्य में समाज के तीनो वर्ग की नारियों का चित्रण है। लेकिन जयश्री रॉय ने मुख्यतः मध्यवर्ग की नारी की समस्याओं को बहुत बारीकी से प्रस्तुत किया है। 'कांच के फूल' कहानी में महानगरीय परिवेश में स्त्री के बदलते हुए आयामों व मूल्यों को प्रस्तुत किया है। वहीं 'कायान्तर' कहानी में ग्रामीण दलित स्त्री की दुर्दशा को चित्रित किया है। मन्नू भंडारी की स्त्री पुरानी रूढियों को छोड़ नहीं पाती। जयश्री रॉय की स्त्री उन्हीं पुरानी रूढियों में अपनी आजादी की राह तलाशती है जैसे 'कायान्तर' की फूलमती देवी आने का बहाना कर अपने लिए साज-श्रृंगार के साधनों को जुटा लेती है।

दीप्ति खंडेलवाल का कथा साहित्य नारी समस्याओं को प्रस्तुत करते हुए पुरुष समाज को टक्कर देती हुई प्रतीत होती है। दीप्ति जी ने दांपत्य संबंधों में पड़ रहे दरारों पर भी प्रकाश डाला है। इन्होंने नारी जीवन के संत्रास, कुंठा का चित्रण अधिक किया है। वहीं कहीं जगहों पर उनकी नारी पात्र रूढीतोड़ भी नजर आती है। दीप्ति जी की कहानियों में पुरुष पात्रों में अधिक उन्मुक्त काम भावना दिखाई देती है। दीप्ति जी की

नारियाँ अपनी अस्मिता के प्रति जुझारु व संघर्षरत दिखाई देती हैं। दीप्ति खंडेलवाल और जयश्री रॉय के नारी पात्र एक जैसे हेते हुए भी उनमें अंतर है। दीप्ति के नारी पात्र पुरुष समाज से बराबरी करना चाहते हैं मानो वे एक आंदोलन कर रहे हो। परंतु जयश्री रॉय के नारी पात्र कोई आंदोलन करना नहीं चाहती वह तो सिर्फ अपने प्रति प्रेम और सम्मान तथा अकेलेपन से मुक्ति पाना चाहती है। जयश्री रॉय की नारी अपने पैरों पर खड़े होकर अपनी अस्मिता की सुरक्षा करना चाहती है। जयश्री रॉय स्वंय कहती है- "मैं एक पुरुष के दुःख दर्द, परेशानियों पर भी उसी तन्मयता और संवेदना के साथ लिखती हूँ। आखिर यही पुरुष मेरे भाई, पिता, पुत्र, सखा और सहचर भी है।"[16] जयश्री जी के अनुसार कलमकार को हमेशा निष्पक्ष होना चाहिए, कभी पक्षपात नहीं करना चाहिए। पुरुष को नीचा दिखाना या उनकी बराबरी करना जयश्री रॉय उद्देश्य नहीं है। वह तो सिर्फ नारी को अपने अधिकारों के प्रति सजग व सशक्त करना चाहती है।

राजी सेठ ने नारी के मनोविज्ञान को गहरी सूक्ष्मता से उजागर करने में दक्षता प्राप्त की है। इन्होंने प्रेम की उपलब्धि, उसकी प्रबल अनुभूति, स्वाभाविकता की तलाश में जूझती नारियाँ आदि का वर्णन मुख्य रूप से अपने साहित्य में किया है। इनका 'तत्सम' उपन्यास प्रेम को एक नई दृष्टि प्रदान करता है। राजी जी की नारी अपने प्रति शोषण के विरूद्ध आवाज तो उठाना चाहती है तथा विद्रोह करना चाहती है लेकिन वह इसका साहस नहीं जुटा पाती। राजी जी ने नारी जीवन की त्रासदियों को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। जयश्री रॉय की नारी अपने अधिकारों के लिए खड़ी होने का साहस रखती है तथा कई जगह पर तो अपने अधिकारों के लिए विद्रोह के लिए तैयार हो जाती है। अगर वह अपने अधिकारों की प्राप्ति प्रत्यक्ष रूप से नहीं कर पाती है तो वह अपना कायान्तर कर लेती है। तथा किसी न किसी तरह अपने हक व

[16] जयश्री रॉय से सौरभ शेखर की बातचित-जीवन के यथार्थ फिकशन से भी अधिक नाटकीय

आकांक्षाओं को प्राप्त कर लेती है। 'औरत जो नदी है' उपन्यास की नायिका को जब अशेष के दूसरी स्त्री के संबंधों का पता चलता है तो उसे छोड़ ही नहीं देती बल्कि उस पर कड़ा तंज कसती है।'कुहासा' कहानी की पारूल अपने साथ हुए बलात्कार की घटना को साकारात्मक रूप में लेते हुए इस घटना को बाझपन से मुक्ति का रास्ता समझते हुए नए जोश से नया जीवन आरंभ करती है।

ममता कालिया ने स्त्री संबंधित सभी समस्याओ बाल विवाह, दहेज प्रथा, विधवा की दुर्दशा, बलात्कार, परिवार में स्त्री का अकेलापन, कामकाजी स्त्री की घुटन व समस्याओं आदि को अपने कथा साहित्य में चित्रित किया है। इन्होंने आधुनिक परिवेश, समाज में स्त्री के बदलते जीवन मूल्यों को भी प्रस्तुत किया है। ममता जी ने सिर्फ नारी पर ही नहीं बल्कि समाज में फैला भ्रष्ट्राचार, बेरोजगारी आदि समस्याओं पर भी अपनी कलम चलाई है। जयश्री जी ने 'काँच के फूल', 'काली-कलूटी', 'कायान्तर', 'बेटी बेचवा' आदि कहानी के माध्यम से बाल विवाह, बलत्कार, दहेज प्रथा जैसी गंभीर समस्या की ओर ध्यान आकर्षित कराया है। 'सुख के दिन','हमजमीन' और 'सूअर का छौना' कहानी के माध्यम से जयश्री जी ने समाज में फैले भ्रष्ट्राचार, वर्णभेद, वर्गभेद आदि को प्रस्तुत किया है।

नासिरा शर्मा की कहानियों की अपनी अलग पहचान है। जिनमें मुस्लिम नारियों की व्यथा और पीड़ा को व्यक्त किया गया है। नासिरा शर्मा का विशेष क्षेत्र मुस्लिम परिवार में नारी नियति और उसका अमानवीय शोषण है। नासिरा जी ने ईरान और ईराक क्रांति पर भी अपनी कलम चलाई। जयश्री रॉय का कथा साहित्य मुख्यतः किसी एक समाज या परिवेश पर नहीं लिखा गया। जयश्री जी ने हिन्दू, मुस्लिम सभी समाज की औरतों को अपने साहित्य का अंग बनाया। जयश्री रॉय की 'थोड़ी सी जमी,थोड़ा सा आसमाँ' कहानी तथा 'इकबाल उपन्यास' भारत पाकिस्तान

विभाजन तथा पूरी दुनिया में व्याप्त नस्ल, रंग और संप्रदाय की समस्याओं को उजागर करती है।

चित्रा मुद्गल जी ने कामकाजी स्त्री की समस्याओं के साथ जीवन के सभी यथार्थ अनुभवों को अपने साहित्य में प्रस्तुत किया है। इनका 'आवां' उपन्यास स्त्री प्रधान है जिसमें नायिका दुर्बल और दलित नहीं बल्कि अपने प्रति शोषण के विरूद्ध संघर्ष करती है। चित्रा जी को इनकी अनेक रचनाओं के लिए कई बार पुरुस्कृत भी किया गया है।

जयश्री रॉय ने पारिवारिक जीवन निर्माण की अनेक समस्याओं की ओर अपना लक्ष्य केंद्रित किया है। उन्होंने मध्यवर्गीय नारी, शहरी नारी, विधवा, बाँझ, कलंकित, दहेज पीड़ित, रंग भेद से पीड़ित, परित्यक्ता, उपेक्षिता, अविवाहिता, तलाकशुदा, रसोई में कैद दुहाजू पुरुष की पत्नी आदि जीवनगत अवस्थाओं को बड़ी ही उत्कंठता से उजागर किया है। इसके साथ ही मध्यवर्गीय परिवेश की नारी मन के तह तक जाने का सफल प्रयास भी किया है। उपरोक्त सभी समकालीन महिला कथाकारों की भांति जयश्री रॉय ने भी आधुनिक परिवेश में मध्यवर्गीय मानसिकता से टकराने वाली नारी का चित्रण और उसी संघर्ष से उभरनेवाली नारी की छटपटाहट, सामाजिक अव्यवस्था के प्रति तीव्र असंतोष, भ्रष्ट राजनीति, नैतिक मूल्यों का विघटन, पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण, नारी मुक्ति प्रेरणा, रंगभेद, वर्णभेद, कुंठा, घुटन, अकेलापन तथा युगीन जीवन यथार्थ के विभिन्न आयामों को अपने कथा साहित्य में व्यक्त किया है।

अंततः जयश्री रॉय अपने संपूर्ण कथा साहित्य में मानवीय संबंधों को जिस तरह सभी वर्जनाओं और पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर सर्वथा नये धरातल पर उसकी समग्रता में देखने-परखने की कोशिश करती है, वह इन्हें अपने समकालीन कथाकारों के साथ विशिष्ट बनाती है। तथा समकालीन कहानिकारों में जयश्री रॉय अपनी जीवन की अनुभूति के साथ अपना अलग विशिष्ट स्थान रखती है।

उपसंहार

उपसंहार

जयश्री रॉय के साहित्य विषयों में विविधता होने के बावजूद स्त्री ही इनके साहित्य के केन्द्र में रही है। जयश्री रॉय अपने साहित्य में स्त्री मन की उन सभी विडंबनाओं को प्रस्तुत करती है जिसके तहत वह अकेलेपन और अजनबीपन का जीवन जीने पर मजबूर होती है। जयश्री रॉय ने अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्रियों से संबंधित सभी पक्षों को बहुत ही कोमलता से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने स्त्रियों के दर्द को, मर्म को, विवशता को, आँसुओं को, प्रताड़ना, अकेलापन एवं अजनबीपन, अकुलाहट को तथा दर्द के विरुद्ध स्त्री संघर्ष को इस तरह से शब्दबद्ध किया है जैसे ये उनकी ही आपबीती हो। जयश्री रॉय को बचपन से ही साहित्य में रुचि उत्पन्न हो गई थी। बचपन से ही साहित्यपूर्ण वातावरण होने के कारण जयश्री रॉय ने पाँचवी कक्षा तक आते-आते शरत, बंकिम जैसे गंभीर साहित्यकारों को पढ़ लिया था। अहिन्दी भाषी पारिवारिक पृष्ठभूमि से होने के बावजूद बचपन से इनका झुकाव हिंदी के प्रति अधिक रहा है। जयश्री रॉय ने छोटी उम्र से ही लिखना आरम्भ कर दिया था लेकिन कॉलेज ज्वाइन करने के साथ ही इनका लिखना लगभग 25 सालों तक बिल्कुल ही छूट गया था। 2010 में वह पुन: लिखना आरंभ किया जब वह ब्रेस्ट केंसर जैसे भयावय और गंभीर बीमारी से जूझ रही थी। इन्होंने अपनी पहली कहानी में अस्पताल के बिस्तर पर लिखी। जयश्री रॉय अपनी इस गंभीर बीमारी से हारना नहीं चाहती थी बल्की वह अपने दुखों को जीना चाहती थी। जयश्री जीवन को ही सत्य मानती है क्योंकि जीवन में घटित घटनाओं से आधिक रोचक विषय दूसरे विषय नहीं हो सकते। जयश्री रॉय समाज में फैले अन्याय और अत्याचारों को आँख मूँद कर नहीं देख सकती है तथा वह चुप रहकर गुनाह का साथ नहीं देना चाहती इसलिए उन्होंने कलम को अपनी आवाज

उठाने का माध्यम बनाया। वह अपने विचारों को बिना किसी डर के अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुत करती है। जयश्री रॉय के साहित्य संसार में अब तक चार कहानी संग्रह और चार उपन्यास प्रकाशित हो चूके हैं जो जीवन के सभी पक्षों को छूते हैं फिर भी स्त्री उनकी कहानियों का केन्द्र बिंदु रही है। इनका पहला कहानी संग्रह 'अनकही' भी विषयों की विविधता के साथ स्त्री को केन्द्र में रखता है। इनकी कहानियों की स्त्रियाँ घर-परिवार में रहते हुए भी अकेलेपन और अजनबीपन की पीड़ा का दंश झेलती है। 'अनकही' कहानी संग्रह की स्त्रियाँ आज़ादी के लिए छटपटाती रहती है उनमें स्वयं के प्रति असुरक्षा का भाव भरा हुआ है। 'पापा मर चुके है', 'गुडिया', 'पिंजरा', 'शनिचरी' आदि महत्वपूर्ण कहानियाँ इसी के उदहारण है कि आज स्त्री कहीं भी सुरक्षित नहीं है तथा वह अपनी मुक्ति के लिए छटपटा रही है। इनका दूसरा कहानी संग्रह 'तुम्हे छू लू जरा' है गोवा की भूमि पर लिखा गया है। इसलिए इनकी कहानियों में स्थानीयता का प्रभाव दिखाई देता है। इस संग्रह में 'बेटी बेचवा' कहानी समाज में फैले बाल-विवाह और अनमेल विवाह जैसी कुरीति का उदाहरण है जिसमें चंद पैसों के लिए एक पिता द्वारा अपनी बेटी को एक बूढ़े आदमी को बेच दिया जाता है। वही 'एक रात' कहानी देह, सेक्स और प्रेम के अंतर्संबंधों पर गहराई से विचार करते हुए सेक्स को एक बेहद खूबसुरत अनुभव मानते हुए, देह से की गई प्रार्थना है ऐसी प्रार्थना जो दो शरीर, दो हथेलियाँ एक होकर एक ही उद्देश्य के लिए काम करते हैं। यह कहानी स्त्री मन की सहज और मानवोचित इच्छाओं एवं कामनाओं की भी स्पष्ट अभिव्यक्ति देती है। 'माँ' कहानी रिश्तों में पड़ रही दरारों की पड़ताल है। वहीं 'अपनी ओर लौटते हुए' कहानी स्त्री के आत्मसम्मान व स्वाभिमान की रक्षा की कहानी है। जिसकी नायिका अपनी आजादी तथा सम्मान की रक्षा के लिए

अपने पति का घर छोड़ देती है। यह कहानी स्त्री चेतना को प्रस्तुत करती है। इनका तीसरा कहानी संग्रह 'खारा पानी' गोवा की लोक संस्कृति, पर्यावरण, रहन-सहन वहाँ की सामाजिक, आर्थिक चुनौतियों आदि को केन्द्र में रख कर लिखा गया है। 'कायान्तर' जयश्री रॉय का चौथा कहानी संग्रह है जो 2015 में वाणी प्रकाशन से प्रकाशित हुआ। अन्य तीन कहानी संग्रहों की भांति इस कहानी संग्रह का केन्द्र भी स्त्री जीवन के संघर्षों की अंतर्कथाएं ही हैं लेकिन ये अन्य कहानियों से भिन्न हैं। पहले की कहानियों की स्त्रियाँ अपने घर परिवार तथा समाज के बंदिशों में बंधी हुई थी। पर इस संग्रह की स्त्री घर-परिवार की बंदिशों को तोड, सामाजिकता की रूढियों से बाहर निकल अपनी पहचान पाना चाहती है तथा साथ ही अपने विरुद्ध अन्याय और अत्याचार के विरोध में खड़े होने में सक्षम है। लेखिका के इस संग्रह में आधुनिक स्त्री तथा ग्रामीण स्त्री दोनों का समावेश है। इस संग्रह की 'कुहासा', 'दर्दजा', 'तुम आये तो', आदि कहानियाँ स्त्री चेतना से सम्पन्न है। 'दर्दजा' की नायिका अपनी बेटी को शिक्षा का अधिकार प्रदान कराने के लिए सारे मुस्लिम समाज के विरुद्ध खड़ी हो जाती है। वहीं 'तुम आये तो' कहानी की नायिका कबीर जैसे दोहरे व दोगले आचरण वाले व्यक्ति का त्याग कर आजादी से जीने के लिए एक सही व्यक्ति से विवाह के लिए तैयार हो जाती है। 'कुहासा' कहानी स्त्री के बांझपन पर प्रश्न करते हुए पुरुषों पर पलटवार है। 'कायान्तर' कहानी की फूलमति भी पुरूष प्रधान समाज के लिए उन्हीं की भाषा में उनको उत्तर देने में सक्षम है। 'कायान्तर' संग्रह की स्त्री आधुनिक स्त्रीयों के लिए प्रेरणास्रोत है। जो स्त्रियों मे यह चेतना जागृत करती है कि स्त्री को स्वयं ही अपने लिए खडा होना होगा। क्योंकि किसी बी प्रकार के अन्याय व अत्याचार के विरुद्ध खडे होने में पूरी तरह सक्षम है।

जयश्री रॉय ने 'औरत जो नदी है','दर्दजा' तथा 'साथ चलते हुए' आदि कहानियों को विस्तार रूप देकर उपन्यास का रूप दिया है। इनका पहला उपन्यास 'औरत जो नदी है' दामिनी आत्मचेता स्त्री की काहनी है। जो समाज में बराबरी का हक़ चाहती है तथा प्रेम में छले जाने के बाहुजूद भी वह रोती नहीं बल्की वह सच्चे प्रेम, सम्मान तथा अधिकार का खुला आकाश चाहती है। वह अपना जीवन अपनी शर्तों पर जीती है।'साथ चलते हुए' इनका दूसरा उपन्यास है, जो स्त्री के तमाम दुःखों की पड़ताल है। 'दर्दजा' तीसरा उपन्यास जो मुस्लिम समाज में स्त्री की सुन्नत प्रथा से पीड़ित स्त्री की भयावह कहानी है इस प्रकार पूरा अध्याय का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि जयश्री रॉय के साहित्य का केंद्र स्त्री ही है। जहाँ स्त्री अब केवल हाडमाँस बनकर नहीं रहना चाहती है। वह स्वालंबी बनकर अपने शर्तों पर जीना चाहती है। जयश्री रॉय को 'अनकही' कहानी संग्रह तथा 'दर्दजा' उपन्यास के लिए पुरस्कृत भी किया गया है।

दूसरे अध्याय का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि चेतना ऐसा तत्व है जो मनुष्य को दूसरे सभी प्राणधारी जीवों से श्रेष्ठ बनाता है। चेतना वह तत्व है जिसके द्वारा मनुष्य अपने वातावरण को समझता है तथा अपनी आस-पास की घटनाओं के प्रति सजग रहता है। चारों ओर की घटनाओं के प्रति सदैव अपने पंचेंद्रियों को मुक्त रखना ही चेतना कहलाता है। चेतना मनुष्य को वातावरण का ज्ञान प्राप्त करके स्व-रक्षा का ज्ञान देती है चेतना हमें सही और गलत में अंतर को समझाती है तथा सही उपकरणों एवं निर्णयों को चयन्वित करने में साहयक होती है। चेतना के द्वारा ही हम वर्तमान की समस्याओं को हल कर पाते हैं तथा भविष्य के लिए योजना बना पाते है प्रत्येक मनुष्य की चेतना भिन्न-भिन्न होती हैं तथा

इसकी प्रमुख विशेषता इसकी परिवर्तनशीलता है। इस परिवर्तनशीलता में भी एकता और साहचर्य का रूप दृष्टिगत होता है चेतना का क्षेत्र बहुत व्यपक है तथा समय-समय पर विभिन्न विद्वानों द्वारा इसे परिभाषित किया गया है अंग्रेजी में चेतना के लिए कांशसनेश अवेक, नोविंग जैसे समान अर्थ का प्रयोग किया गया है। चेतना के तीन स्तर माने जाते हैं चेतन, अवचेतन और अचेतन। चेतना के द्वारा ही मनुष्य सक्षम व कुशल बनता है। निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि चेतना का संबंध हमारे मन और बुद्धि से है हमारे मन में भाव, विचार आदि उत्पन होने पर जो सोच समझ कर किया गया कार्य चेतना से प्रेरित होता है। उसी प्रकार अलग-अलग परिस्थितियों में चेतना के स्वरूप भी भिन्न होते है। वैज्ञानिक, दार्शनिक, सामाजिक, बैद्धिक आदि सभी क्षेत्रों में वह क्रियाशील एवं गतिशील रहती है चेतना मनुष्य की सदैव सजग एवं जागरूकता की स्थिति है। जिसके माध्यम से जब मनुष्य समाज में फैले अत्याचारों या घटनाओं के प्रति जागरूक या संवेदशील होता है तो वह उसकी सामाजिक चेतना होती है वैसे ही जब वह राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति जागरूक होता है तो वह उसकी राजनीतिक चेतना होती है। चेतना जीवन के हर क्षेत्र से संबंधित है तथा यह सदैव जीवन में क्रियाशील रहती है। इसलिए चेतना को बहुत से भागों में विभाजित किया गया है चेतना जागरूक मानसिक स्थिति है तथा हम इसे निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं- दलित चेतना, सामाजिक चेतना, आर्थिक चेतना, राजनीतिक चेतना, दार्शनिक चेतना आदि।

इस अध्याय को पढ़ने से यह ज्ञात होता है कि स्त्री हमेशा से शोषित रही है तथा स्त्री जो संसार एवं समाज की निर्माण धात्री है फिरभी अनादी काल से वह समाज में चहूँमुखी शोषण का शिकार बनी हुई है। सर्वप्रथम स्त्री शब्द का प्रयोग वैदिक काल में प्रयोग किया गया। स्त्री शब्द सत्यैधातु में ड्रप और डीप प्रत्यय के

योग से निष्पन हुआ है जिसका अर्थ है फैलना, ठहरना, घेरा, बनाना आदि। इस प्रकार व्युत्पत्ति के आधार पर इसका अर्थ है। 'सत्यायेत आस्यां गर्भ इति स्त्री'। अर्थात जहाँ गर्भ ठहरता है उसे स्त्री कहते है। स्त्री के लिए अलग-अलग रूपों को समाज में अलग-अलग नामों से जाना जाता है कभी माँ, कभी बहन, कभी बहू आदि। वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी थी उसे हर प्रकार के अधिकार प्राप्त थे चाहे वो शिक्षा का हो या विवाह का परन्तु उत्तर वैदिक काल में आते-आते उसकी स्थिति में गिरावट आने लगी मध्यकाल में हिन्दू धर्म में एवं सांस्कृतिक परंपराओं की रक्षा के नाम पर बाल विवाह, सती प्रथा व स्त्री पर रोक आदि का प्रचलन आरंभ हो गया जहाँ मनु-स्मृति में लिखा है 'यत्र नार्यस्तु पुज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता'। वही अब स्त्री केवल मनोरंजन व भोग की वस्तु बनकर रह गयी थी तथा 'द्वार किखेंक नरकस्य नारी' कहा जाने लगा। पुरूषों ने अपनी सुविधा के लिए सारी स्त्रियों के सारे अधिकार छीन लिए। 18 वीं शदी में स्त्री की स्थिति जितनी खराब थी 19 वीं शदी में उसकी स्थिति में सुधार के लिए प्रयत्न किए जाने लगे। 19 वीं शदी के प्रारंभ में ब्रह्म समाज, आर्य समाज, थियोशोफिकल सोसइटी आदि संस्थाओं के द्वारा स्त्री के उत्थान के लिए भरसक प्रयत्न किया जाने लगा। राजा राममोहन राय, महात्मा गाँधी, महात्मा फूले, बाबा साहेब अंबडकर जैसे महान व्यक्तियों ने स्त्री शिक्षा पर बल देते हुए स्त्री शिक्षा का प्रबंध करवाया। अब स्वयं स्त्रियाँ भी मात्र विलास की सामग्री बनकर नहीं रहना चाहती थी। उसने आर्थिक रूप से स्वतंत्रता की मांग करना आरंभ किया। इस प्रकार स्त्री चेतना का दौर आरंभ हुआ। स्त्री चेतना का अर्थ शिक्षा के माध्यम से स्त्री में स्वं के अधिकारों के प्रति जागरूक रहना है। इसके लिए बहुत से महिला संघों एवं संस्थाओं का निर्माण किया गया। ऐसी स्थिति में साहित्य जगत ने स्त्रियों को अपने अधिकारों प्राप्त केलिए जोर शोर से प्रेरित किया। स्त्री विमर्श की सबसे बडी प्रवक्ता सीमोन द

बोउवार ने तो स्त्रियों को नई पहचान दीलाई तथा स्त्रियों के हक़ के लिए संघर्ष किया स्त्री चेतना अब विकास की ओर बढ रही थी। केट मिलर, वैटी फरीडब, कृष्णा सोबती, मन्नु भण्डारी आदि ने साहित्य के क्षेत्र में स्त्री चेतना को नया पथ दर्शाया, भारतीय स्त्री लेखिकाओं ने स्त्रियों के अधिकार एवं अस्मिता की पहचान दिलाने के मुद्दे उठाए। अब नारी घर की चार दीवारी से बाहर निकल कर अपनी पहचान बनाना चाहती है। आज स्त्री जीवन के सभी क्षेत्रों में जागरूक हुई तथा स्त्री के सर्वांगिण विकास की चेतनशिलता को उद्घाटित करने का प्रयास हो रहा है। स्त्री की चेतन शिलता को सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, धार्मिक आदि सभी क्षेत्रों में समझा जा सकता है। निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि स्त्री चेतना आज विकास के पडाव में दिन प्रति दिन तरक्की करते जा रही है तथा आज स्त्री जीवन के सभी क्षेत्रों में सक्रिय रूप से अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर अपनी पहचान बना रही है। आज स्त्रियों को शिक्षा का अधिकार प्राप्त है तथा घरेलू हिंसा, बलत्कार, बाल विवाह जैसे गंभीर गुनाहों के लिए बड़े कानून बनाये गये हैं।

तृतीय अध्याय में 'कायान्तर' कहानी संग्रह के अंतर्गत स्त्री चेतना को प्रस्तुत किया है इस अध्याय का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि जयश्री रॉय की 'कायान्तर' संग्रह की कहानियाँ स्त्री चेतना से ओत-प्रोत हैं जिसे महत्वपूर्ण बिंदुओं व उदाहरणों के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। जयश्री रॉय अपने कथा साहित्य के क्षेत्र में स्त्री को केंद्र में रख कर पुरुष प्रधान समाज की बेडियों में फसी नारी को उनके शोषण से मुक्त कराने तथा उसकी स्वतंत्र अस्मिता को स्थापित करने का प्रयास करती हुई स्त्री चेतना का विकास कर रही है। उन्होंने अपने 'कायान्तर' कहानी संग्रह में ऐसी स्त्री की छवी अंकित है जो स्वयं के बारे में जानती है, जो आत्म सजग है और स्वाधीनता की बात करती है, जो दर्द, अपने संघर्ष और आत्मचैतन्य को महसूस करती है और अपनी लडाई को स्वयं लडती है। 'कायान्तर' कहानी संग्रह

स्त्री चेतना, स्त्री जीवन की व्यथा और अधिकारों की प्रप्ति के लिए संघर्षरत अत्मचेता स्त्री की प्रस्तुति है। उन्होंने इस संग्रह में स्त्री जीवन के लगभग सभी संभावित पहलूओं को बडी बेबाकी के साथ व्यक्त किया है उनका यह संग्रह नारी विषयक चेतनाओं के विविध आयामों से भरा है जिस पर सविस्तार विचार किया गया है। बदलते समय के साथ परंपरागत विवाह प्रथा के प्रति स्त्री सोच में परिवर्तन आ रहा है जिसे जयश्री रॉय ने 'काँच के फूल' कहानी की हिया के माध्यम से प्रस्तुत किया है हिया माँ-बाप के दबावो में आकर विवाह करने से इंकार कर अपने में निहित स्त्री चेतना का बोध कराती है वे पढ़-लिख कर तथा नौकरी करने के बाद ही विवाह करना चाहती है उसी तरह 'तुम आये तो' कहानी की चाँपा बिना विवाह के कबीर के साथ लिविंग इन रिलेशन में रहती है इससे यह ज्ञात होता है कि अब स्त्री परंपरागत विवाह प्रथा का विरोध कर अपनी इच्छा से विवाह बंधन में बंधना चाहती है। दहेज प्रथा एक ऐसी कुप्रथा है जो स्त्री के शोषण का सबसे बडा कारण है जिसके चलते लड़की को बोझ माना जाता है जयश्री रॉय की कहानी कायान्तर की ललिता इसका विरोध करती है, अब नारी यह जानती है कि वह स्वयं पढ-लिख कर आर्थिक रूप से सक्षम हो सकती है जिससे दहेज की कुप्रथा को समाप्त किया जा सकता है।

बलात्कार ऐसा घीनौना अपराध है जिसके कारण लडकी की जिंदगी बर्बाद हो जाती है, कई बार स्त्री अपने साथ हुए बलात्कार के कारण आत्महत्या तक कर लेती है। जयश्री रॉय ने बलात्कार के प्रति स्त्री की सोच में हो रहे परिवर्तन को 'कुहासा' कहानी संग्रह में प्रस्तुत किया है अब स्त्री बलात्कार के लिए स्वयं को जिम्मेदार ना मान कर आत्महत्या नहीं करना चाहती बल्कि उसे सकारात्मक रूप में लेते हुए बाँझपन से मुक्ति का शाप में भी वर्दान मानती है। 'दर्दजा' की रहिला

सामूहिक बलात्कार का शिकार होने पर भी वह बिना समाज के डर के अपनी बेटी माहिरा के लिए लडती है। पर्दा प्रथा भी स्त्री पर को पुरषों द्वारा शोषण करने का एक तरीका है जिसमें स्त्री को मानमर्यादा, इज़्जत आदि के नाम पर चार दीवारी में कैद करके रखा जाता है लेकिन अब स्त्री पर्दे के पीछे छिप कर नहीं रहना चाहती है 'कायान्तर' कहानी संग्रह की फूलमति और 'दर्दजा' की राहिला इस बात के उदाहण है।

स्त्री के वैधव्य के साथ ही उसके श्रृंगार के सभी साधनों को छीन लिया जाता है और उसे बेरंग बना दिया जाता है लेकिन स्त्री अब इसमें बदलाव लाना चाहती है। स्त्री श्रृंगार को अपना निजी हक़ मानती है जिसे वह पति के जीवन या मृत्यु के साथ नहीं जोड़ना चाहती है। 'कायान्तर' की फूलमति इस बात का उदाहण है। वह अपने पति की मृत्यु के बाद भी श्रृंगार करती है। शिक्षा अब स्त्री का अधिकार है तथा अब उसे उससे कोई वंछित नहीं रख सकता। 'दर्दजा' की राहिला शिक्षा के अधिकार को जानती है इसलिए वह अपनी बेटी को शिक्षा का अधिकार दिलाने के लिए पूरे समाज से लडने को तैयार हो जाती है। पाश्चत्य संस्कृति के प्रभाव में आज स्त्री भी अपने जीवन में परिवर्तन लाना चाहती है जिसके तहत वह लिविंग इन रिलेशन में आना गलत नहीं समझती। पाश्चत्य संस्कृति का सबसे अधिक प्रभाव भारतीय स्त्री के खान-पान एवं पहनावे पर पडा है। 'काँच के फूल' की हिया छोटे कपड़े पहनना तथा शराब पीना बुरा नहीं मानती तथा वह लेट नाइट पार्टी में जाती है इस प्रकार स्त्री अब किसी भी तरह पुरुषों से पीछे नहीं रहना चाहती।

बाजारीकरण का प्रभाव स्त्री जीवन पर दिन प्रति दिन बडता जा रहा है। अब बाजार निर्धारित करता है कि हमें क्या खाना चाहिए, कैसे रहना चाहिए। 'कांच के फूल' की हिया तथा 'काली-कलूटी' की लावणय बाजारीकरण के प्रभाव को भली भांति समझती है तथा उसका अंधानुकरण नहीं करना चाहती तथा वह पुरुषों के समान समाज में अपनी पहचान बनाना चाहती है। आज बाँजपन के लिए स्त्री सिर्फ स्वयं को दोषी नहीं मानती है। 'कुहासा' की पारूल बाँझपन के लिए स्वयं को जिम्मेदार नहीं मानती है तथा वह इस पीडा से मुक्ति के लिए आत्महत्या का निर्णय भी त्याग देती है। आज स्त्री अपने अधिकारों के लिए सचेत है। इसी तरह 'काँच के फूल' की हिया, 'दर्दजा' की राहिला आदि स्त्रियाँ अपने अधिकारों से भली भांति सचेत हैं। पूरे अध्याय के अध्ययन करने से इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि आज स्त्री आर्थिक रूप से संपन्न होना चाहती है ताकि वे आर्थिक रूप से किसी का गुलाम न रहे। 'कायान्तर' कहानी संग्रह में नारी चेतना को स्पष्ट रूप से देखा जाता सकता है इस संग्रह में जयश्री रॉय ने विवाह, दहेज वैधव्य आदि सामाजिक समस्याओं को सटीक तरीके से व्यक्त किया है तथा यह भी दर्शाया है कि किस तरह नारी समस्याओं के संबंध में अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन ला रही है। आधुनिक नारी पुरुष के दोहरे आचरण से सचेत है तथा उसने अपनी कमजोरी अर्थात ममत्व को अपनी ताकत में तब्दील करने की शक्ति एकत्रीत कर ली है। 'दर्दजा' तथा 'काँच के फूल' की नायिकाएँ इस बात का उदाहरण है। 'कायान्तर' कहानी संग्रह स्त्री में चेतना जाग्रत करता है कि जब स्त्री को अपने वास्तविक रूप में रहकर वह सब न मिले जो वह चाहती है तो 'कायान्तर' कर अधिकार प्राप्त करना सबसे श्रेष्ठ रास्ता है।

चौथे अध्याय में समकालीन महिला कहानिकारों 'कृष्णा सोबती', 'मेहरुन्निसा परवेज़', 'मन्नु भंडारी', 'उषा प्रियंवदा', 'राजी सेठ', 'ममता कालिया', 'दीप्ति खण्डेलवाल', 'नासिरा शर्मा', और 'चित्रा मुद्गल' के साथ जयश्री रॉय के स्थान का निर्धारण किया गया है। इस अध्याय के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि सभी समकालीन महिला कहानीकार अपनी-अपनी जगह अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। जो अपनी रचनाओं के माध्यम से स्त्री की समस्याओं को सबके सामने रखती है।

समकालीन महिला कहानीकारों में 'कृष्णा सोबती' का स्थान सबसे शीर्षस्थ है। इन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से स्त्री जीवन को एक नयी दिशा प्रधान की है। कृष्णा जी मात्र कल्पना के आधारित साहित्य सृजन को प्रामाणिक नहीं मानती। कृष्णा जी ने नारी मन को ही अपने साहित्य का केंद्र बनाया है। 'मेहरुन्निसा परवेज़', 'नासिरा शर्मा', ने मुस्लिम परिवेश की स्त्रियों की समस्याओं पर अपनी लेखनी अधिक चलाई तथा उन्होंने स्त्री को किसी भी समाज व परिवेश में पुरुषों से कम नहीं माना है। 'मन्नु भंडारी' ऐसी विशिष्ट लेखिका है जिन्होंने ऐसी स्त्री को प्रस्तुत किया है जो परिवार की बंदिश में रहकर अपनी परेशानियों का सामना करती है। 'उषा प्रियंवदा' के साहित्य की स्त्री पर पाश्चत्य संस्कृति का अधिक प्रभाव दिखता है तथा इन्होंने आधुनिक स्त्री की समस्याओं को प्रस्तुत किया है। दीप्ति खण्डेलवाल ने अपने कथा साहित्य में ऐसी स्त्री का चित्रण किया है जो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना जानती है तथा इन्होंने स्त्री की समस्याओं को इस प्रकार से प्रस्तुत किया है जैसे वे स्वयं उनका जीवन जी रही हो। चित्रा मुद्गल ने

नारी के द्वारा आधुनिक परिवेश में काम-काजी क्षेत्र में झेल रही समस्याओं को प्रस्तुत किया है निष्कर्ष के रुप में हम कहे सकते हैं कि उपर्युक्त सभी लेखिकाएँ किसी न किसी रूप में स्त्री चेतना का विकास कर रही है उसी तरह जयश्री रॉय भी अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री में अपने अधिकारों के प्रति सचेत करने का प्रयास कर रही है। जयश्री रॉय की स्त्री ग्रामीण, शहर, महानगरों आदि सभी क्षेत्रों से संबंधित हैं इन्होंने जहाँ ग्रामिण क्षेत्र की सामाजिक कुरीतियों में फँसी स्त्री की समस्याओं को उद्घाटित कर उसमें संघर्ष करने का साहस प्रस्तुत किया है वही दूसरी तरफ शहर में काम-काजी स्त्री द्वारा आधुनिक परिवेश में अजनवीपन व अकेलेपन का दर्द झेल रही स्त्री को भी प्रस्तुत किया। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि जय श्री रॉय समकालीन महिला कहानिकारों में अपना विशिष्ट स्थान रकती है जो अपने साहित्य के माध्यम से सभी स्त्रियों मे चेतना का विकास कर रही है। जयश्री रॉय स्त्रियों में यह चेतना जागृत करती है कि वह पुरूषों से किसी भी तरह कम नहीं है तथा वह सभी प्रकार के अधिकारों को हाशिल करने के लिए सक्षम है।

संदर्भ-सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

क) आधार ग्रंथ

1. जयश्री रॉय - कायान्तर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015

ख) सहायक ग्रंथ सूची

1. राजेन्द्र यादव - पितृसत्ता के नए रूप, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 2010

2. जयश्री राय - साथ चलते हुए, सामयिक प्रकाशन

3. जयश्री राय - हव्वा की बेटियों की दास्तान दर्दजा, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 2017

4. अरविंद जैन - औरत अस्तित्व और अस्मिता, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, 2013

5. आशारानी व्होरा- मारी शोषणः आईने और आयाम, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली-1982

6. रमणिका गुप्त- स्त्री विमर्शः कलम और कुदाल के बहाने, शिल्पायन प्रकाशन दिल्ली-2004

7. रमणिका गुप्ता- स्त्री मुक्तिः संघर्ष और इतिहास, सामयिक प्रकाशन-2012

8. मृणाल पाण्डेय- परिधि पर स्त्री, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली-1998

9. राजेन्द्र यादव- अतीत होती सदी निगह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2001

10. राजेन्द्र यादव- आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2001

11. प्रभा खेतान- स्त्री उपेक्षित, सरस्वती प्रकाशन-1990

12. सुमन कृष्णकांत- इक्कसवी सदी की ओर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2001

13. जयति गोयल- आज के बदलते परिवेश में नारी, कश्यप पब्लिकेशन-2013

14. डॉ.के.एम.मालती- स्त्री विमर्शःभारतीय परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन दिल्ली-2008

15. धर्मपाल- नारी एक विवेचन, भावना प्रकाशन दिल्ली-1996

16. उमा शुक्ला- आधुनिक कथा साहित्य में नारी, अरविंद प्रकाशन, बंबाई-1995

17. महादेवी वर्मा- श्रृंखला की कड़ियाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली-1942

18. क्षमा शर्मा- स्त्रीत्वादी विमर्श समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन-2008

19. मेहरुन्निसा परवेज- अकेला प्लास, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली-1981

20. डॉ.रोहिणी अग्रवाल- हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला, दिनमान प्रकाशन-1992

21. सरला दुआ- आधुनिक हिन्दी साहित्य में नारी, साहित्य निकेल, कानपुर-1965

22. तसलीमा नसरीन- औरत के हक़ में, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-1994

23. डॉ.गणेश दास- स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविध रूप, अक्षय प्रकाशन, कानपुर-1992

24. जयश्री रॉय- अनकही, शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली-2010

25 रेखा कस्तवार-स्त्री चिंतन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, 2016.

26 रोहिणी अग्रवाल-समकालीन कथा साहित्य सरहदें और सारोकार, आधार प्रकाशन, पंचकूला, 2007.

ग) पत्रिकाएँ

25. प्रगतिशील वसुधा- जुलाई-सितंबर-2011

26. वागर्थ- जुलाई, 2012

27. वर्तमान साहित्य- सितंबर, 2010